Digitized by Madhuban Trust, Delhi

श्रीहित हरिवंश गोस्वामी प्रणीत

श्रीहित चौरासी

एवं

स्फुट वाणी

(व्याख्या सहित)

[illegible] गोस्वामी

Digitized by Madhuban Trust, Delhi

श्रीहित हरिवंश गोस्वामी प्रणीत :

हित चौरासी

एवं

स्फुट वाणी

[व्याख्या सहित]

❋

श्रीनेही नागरीदास रचित :

नागरी अष्टक

[व्याख्या सहित]

व्याख्याकार :

श्रीललिताचरण गोस्वामी

वेणु प्रकाशन

बड़वाला मोहल्ला, श्रीधाम वृन्दावन

CC-0. Shri Vipin Kumar Col. Deoband. In Public Domain.

Digitized by Madhuban Trust, Delhi

प्रकाशक :
वेणु प्रकाशन
बड़वाला मोहल्ला
वृन्दावन (मथुरा) २८११२१

व्याख्याकार :
श्रीललिताचरण गोस्वामी

द्वितीय संस्करण
१००० प्रति

हरियालीत[illegible]
सं० २०४[illegible]

मूल्य बीस रुपये मात्र

मुद्रक :
राधिका ऑटोमेटिक प्रिं[illegible]
वृन्दावन—फोन : ८२२६१

CC-0. Shri Vipin Kumar Col. Deoband. In Public Domain.

Digitized by Madhuban Trust, Delhi

व्याख्या के सम्बन्ध में

हित चौरासी की अनेक टीकायें उपलब्ध हैं जिनमें प्रेमदासजी टीका प्रकाशित हो चुकी है । अधिकांश टीकायें ब्रजभाषा पद्य में और शेष ब्रजभाषा गद्य में । प्रस्तुत व्याख्या प्रचलित हिन्दी (खड़ी ली) में लिखी गई है और इसका दृष्टिकोण भी प्राचीन टीकाओं कई बातों में भिन्न है जिनमें से प्रमुख निम्नलिखित हैं ।

यह सुविदित है कि श्रीहिताचार्य ने किसी स्वतंत्र सिद्धांत ग्रन्थ रचना नही की । सम्प्रदाय के रस एवं उपासना संबंधी सिद्धांतों का ौरण उनके बाद में उनकी ब्रजभाषा एवं संस्कृत रचनाओं के धार पर किया गया और इनमें हित चौरासी को मुख्य आकर ग्रन्थ रूप में ग्रहण किया गया । सम्प्रदाय का कौन सा सिद्धांत उक्त थ के किस पद पर आधारित है इसको सप्रमाण स्पष्ट करने की टा प्रस्तुत व्याख्या में की गई है ।

हित चौरासी रस ग्रन्थ है और रस सदैव व्यंग्य होता है अतः व्याख्या में दूसरी चेष्टा प्रत्येक पद अथवा उसकी विशिष्ट क्तयों की व्यंजना का स्पष्ट करने की की गई है ।

प्राचीन टीकाओं की सामान्य प्रवृत्ति पदों के अर्थ बदलकर को सिद्धांत के अनुकूल बनाने की है । प्रस्तुत व्याख्या में अर्थों को के अनुसार रखकर सिद्धांतों को उनके आधार पर निर्धारित ने की चेष्टा की गई है ।

CC-0. Shri Vipin Kumar Col. Deoband. In Public Domain.

Digitized by Madhuban Trust, Delhi

हित चौरासी के भाव एवं कला पक्षों का विस्तृत विवेचन इसके विद्यार्थी संस्करण में किया जा चुका है और वह वहाँ देखा जा सकता है।

श्रीहिताचार्य की इस सुन्दर रचना के आशय को, नागरीदासजी ने, अपार और अथाह बतलाया है। इस व्याख्या के सम्बन्ध में हम तो केवल इतना ही कह सकते हैं,

यह रस तौ अति अमल है कह्यौ बुद्धि अनुमान।
पंछी उड़ै अकाश कों जाय शक्ति परमान॥

श्रीवृन्दावन
हरियालीतीज, सं० २०४७ ललिताचरण गोस्वामी

CC-0. Shri Vipin Kumar Col. Deoband. In Public Domain.

Digitized by Madhuban Trust, Delhi

प्रकाशकीय निवेदन

इस व्याख्या का प्रथम संस्करण श्रीघेवरलालजी पोद्दार एवं उनकी धर्म पत्नी शान्ती देवी की आर्थिक सहायता से हुआ था। दुख के साथ लिखना पड़ता है कि श्रीघेवरलालजी की भक्तिमती पत्नी शान्तीदेवी का निकुंजवास कुछ मास पूर्व हो गया है। व्याख्या का द्वितीय संस्करण छपाने की उनकी बड़ी तीव्र इच्छा थी किन्तु वे इसको पूरा नहीं कर सकीं। द्वितीय संस्करण प्रकाशित करने का यह कार्य अब उनकी पुण्य स्मृति में उनके पति के द्वारा किया गया है।

उनकी इच्छा के अनुसार ही श्रीहित चौरासी का राज संस्करण प्रकाशित किया गया है। इसमें लागत बहुत अधिक आई है किन्तु श्रीघेवरलालजी ने इसका मूल्य लागत से आधा रखने की इच्छा प्रकट की है। अतः इसका मूल्य लागत से आधा ही रखा गया है। इसके लिये वेणु प्रकाशन तथा श्रीहित चौरासीजी के प्रेमीजन उनके अत्यन्त आभारी रहेंगे।

हम प्रथम संस्करण के प्रकाशकीय निवेदन में यह कह चुके हैं कि पं० राजेन्द्र शर्मा ने अपने सतत अध्यवसाय से छः महीने में श्रीललिताचरण गोस्वामीजी महाराज से टीका लिखी थी। वर्तमान संस्करण से सम्बन्धित प्रूफरीडिंग आदि कार्यों को उन्होंने, बाबा नागरीदास ने एवं पं० मदनमोहन जैमिनी ने बड़ी सावधानी के साथ किया है। इस कार्य के लिये हम इन तीनों के आभारी हैं।

—प्रकाशक

CC-0. Shri Vipin Kumar Col. Deoband. In Public Domain.

Digitized by Madhuban Trust, Delhi

हिन्दी काव्य जगत में रस सिद्धान्त के प्रसिद्ध व्याख्याता एवं अनेक प्रौढ़ ग्रन्थों के रचयिता, दिल्ली वि० वि० के हिन्दी विभाग के निवृत्त अध्यक्ष एवं वर्तमान में उक्त विद्यालय में 'प्रोफेसर अमेरेटस' के पद पर आसीन डा० नगेन्द्र की प्रस्तुत व्याख्या के सम्बन्ध में

सम्मति

ब्रजभाषा के रससिद्ध कवियों में श्रीहित हरिवंश का अन्यतम स्थान है। मधुराभक्ति के गायकों में वे जयदेव तथा विद्यापति की परंपरा के कवि हैं और भाषाशिल्पियों में वे नंददास के समकक्ष हैं। गोस्वामी ललिताचरणजी मधुर रस के मर्मज्ञ और राधावल्लभ साहित्य के अधिकारी विद्वान् हैं। स्वभावतः उनके द्वारा प्रस्तुत श्रीहित चौरासी तथा कवि के अन्य पदों की यह व्याख्या अपने विषय का सर्वथा प्रामाणिक अभिलेख है। इस प्रकार के काव्य के व्याख्याकार के लिये केवल अपने विषय का अधिकारी विद्वान् होना ही पर्याप्त नहीं है, उसे रसमर्मज्ञ भी होना चाहिये। ये दोनों गुण गोस्वामीजी में पूर्णतया विद्यमान हैं। उन्होंने एक ओर जहाँ कवि की सूक्ष्म-गहन अनुभूतियों का विश्लेषण किया है वहाँ दूसरी ओर उनकी अभिव्यंजना शैली के तत्वों की भी अत्यन्त मार्मिक व्याख्या प्रस्तुत की है। उत्कृष्ट व्याख्या का प्रमुख गुण यह है कि उसमें शब्दार्थ और भावार्थ—दोनों के साथ पूर्ण न्याय होना चाहिये। कहने की आवश्यकता नहीं कि यह दोनों गुण यहाँ समग्र रूप में विद्यमान हैं।

मुझे विश्वास है कि मधुर रस के पिपासु भक्तजन ही नहीं, वरन् काव्य रस के मर्मी सहृदयजन भी इस ग्रन्थ का स्वागत करेंगे और हिन्दी साहित्य के क्षेत्र में काव्य की प्रसिद्ध टीकाओं की विरल परंपरा में इसका अपना स्थान होगा।

१३४, वैशाली, पीतमपुरा
दिल्ली—३४

दिनांक १८-१२-८९ **[डा० नगेन्द्र]**

CC-0. Shri Vipin Kumar Col. Deoband. In Public Domain.

Digitized by Madhuban Trust, Delhi

सूची

CC-0. Shri Vipin Kumar Col. Deoband. In Public Domain.

Digitized by Madhuban Trust, Delhi
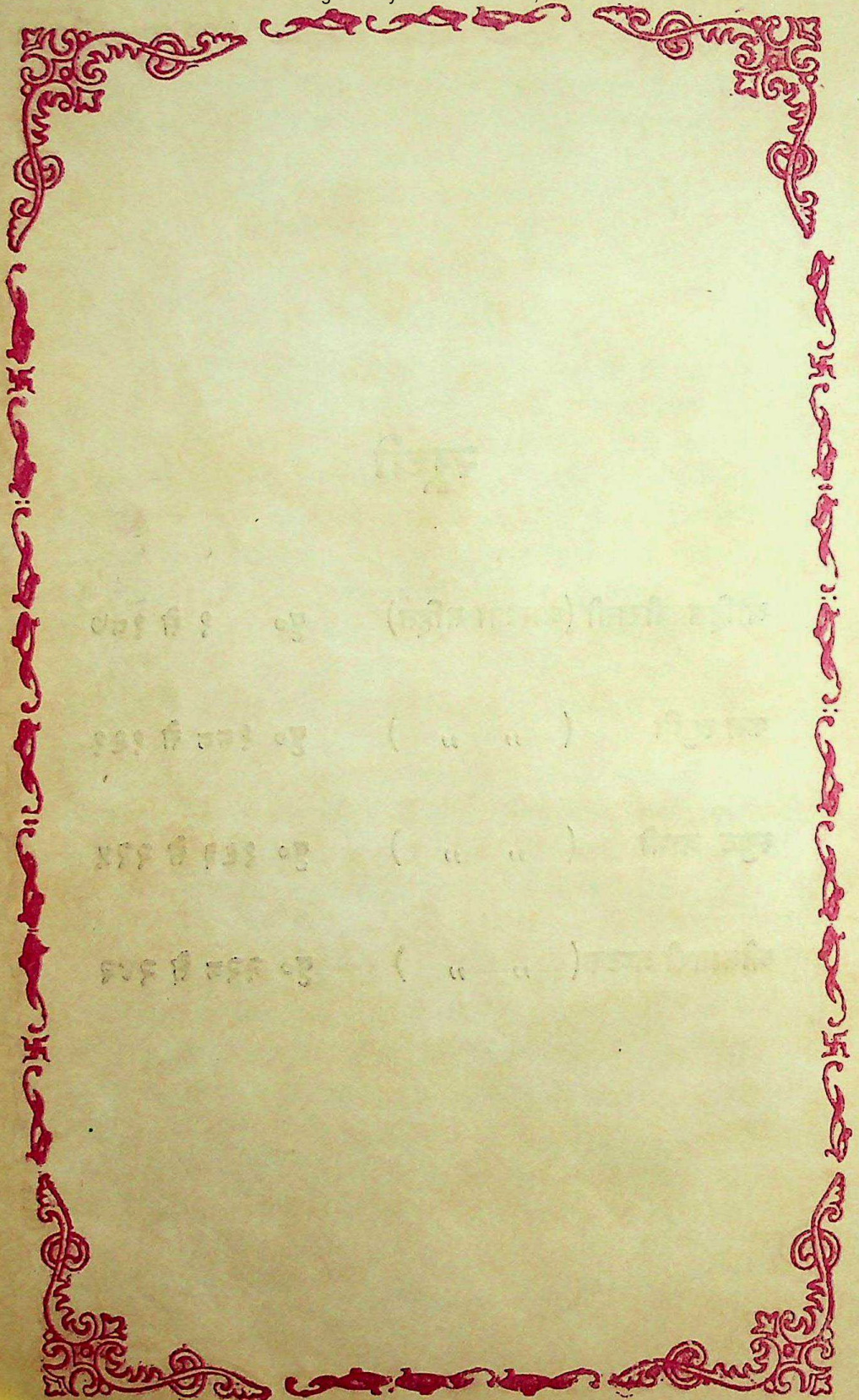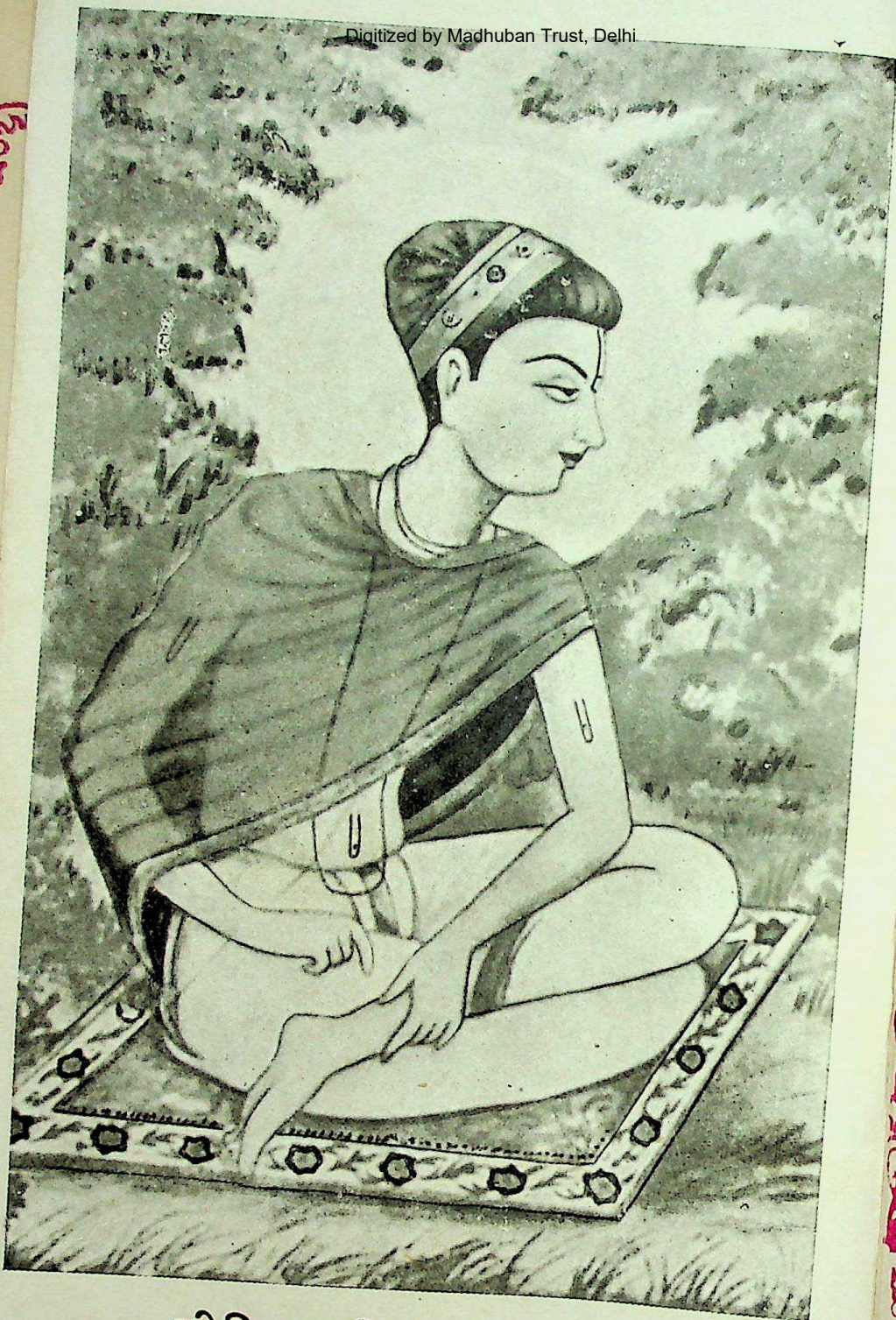
श्रीहित हरिवंश गोस्वामी

प्राकट्य सं० १५५९]
वैशाख शु० ११

[अन्तर्धान सं० १६०९
आश्विन कृ० १५

CC-0. Shri Vipin Kumar Col. Deoband. In Public Domain.

Digitized by Madhuban Trust, Delhi

श्रीहित चौरासी
[व्याख्या सहित]

[१]

जोई - जोई प्यारौ करै सोई मोहि भावै,
भावै मोहि जोई सोई-सोई करै प्यारे ॥१॥
मोकों तौ भावती ठौर प्यारे के नैनन में,
प्यारौ भयो चाहै मेरे नैनन के तारे ॥ २ ॥
मेरे तन - मन प्रान हूँ ते प्रीतम प्रिय,
अपने कोटिक प्राण प्रीतम मोसों हारे ॥३॥
जै श्रीहित हरिवंश हंस-हंसिनी साँवल गौर,
कहौ कौन करै जल - तरङ्गन न्यारे ॥४॥

भूमिका :—श्रीहित चौरासी के इस प्रथम पद में श्रीराधा-श्यामसुन्दर के हृदय और नेत्रों में विराजमान परस्पर अद्भुत प्रेम का संक्षिप्त किन्तु अत्यन्त मार्मिक वर्णन श्रीराधा के मुख से हुआ है । इस वर्णन के समय श्रीश्यामसुन्दर अन्य कुञ्ज में पुष्प-चयन के लिये गये

CC-0. Shri Vipin Kumar Col. Deoband. In Public Domain.

Digitized by Madhuban Trust, Delhi

हुये हैं और यह एकान्त अवसर देखकर श्रीहित सजनी से श्रीराधा अपने प्रियतम के अद्‌भुत प्रेम की चर्चा करने लगती हैं । इस पद में श्रीहिताचार्य ने श्रीराधा के परम उदार स्वरूप की व्यंजना बड़े सुन्दर ढंग से की है ।

व्याख्या :—**प्रियतम जो भी कुछ करते हैं वह मुझको प्रिय लगता है और जो कुछ मुझको भाता है वह प्रियतम करते हैं।** (इन पंक्तियों में श्रीराधा ने प्रेम की अत्यन्त दुर्लभ स्थिति का वर्णन किया है । प्रेमी और प्रेम-पात्र के मन में सर्वथा एक रुचि होना श्रीराधा श्यामसुन्दर के प्रेम में ही संभव है । लौकिक प्रेम में तो प्रेमी-प्रेमपात्र अपना-अपना सुख चाहते रहते हैं) ॥१॥

मुझको प्रियतम के नेत्रों में बसे रहना अच्छा लगता है और प्रियतम तो मेरे नेत्रों के तारे ही बन जाना चाहते हैं। (जिस प्रकार पहली पंक्ति में श्रीराधा ने अपनी और अपने प्रियतम की एक रुचि बतलाई है उसी प्रकार इन पंक्तियों में उन्होंने दोनों की एक दृष्टि बतलाई है ।) ॥२॥

मुझे मेरे तन-मन और प्राणों से अधिक प्रियतम प्रिय हैं और प्रियतम ने तो अपने करोड़ों प्राण मेरे ऊपर न्यौछावर कर दिये हैं। (इन पंक्तियों में श्रीराधा स्वयं को एवं अपने प्रियतम को एकप्राण बतलाती हैं । इस प्रकार यह दोनों एक रुचि, एक दृष्टि और एक प्राण सिद्ध होते हैं और यह प्रेम की अत्यन्त दुर्लभ और अलौकिक स्थिति है ।) ॥३॥

(श्रीराधा के मुख से उनकी और उनके प्रियतम की प्रीति का समान एवं ओतप्रोत वर्णन सुनकर सखीभावापन्न श्रीहित हरिवंश कहते हैं कि) **आप दोनों गौर और श्याम हंस-हंसिनी हैं तथा जल और तरंग की भाँति परस्पर ओतप्रोत हैं । अतः आपको कोई भी, यहां तक कि स्वयं आप भी एक दूसरे से अलग नहीं कर सकते।**

CC-0. Shri Vipin Kumar Col. Deoband. In Public Domain.

Digitized by Madhuban Trust, Delhi

(श्रीध्रुवदास ने प्रस्तुत पद से प्रेरणा ग्रहण करके श्रीश्यामाश्याम के प्रेम स्वरूप का निर्धारण इस प्रकार किया है)—

प्रीतम किशोरी गोरी, रसिक रँगीली जोरी,
प्रेम ही के रङ्ग बोरी शोभा कही जात है।
एक प्राण, एक वैस, एक ही सुभाव चाव,
एक बात दुहुनि के मनहि सुहात है॥
एक कुञ्ज, एक सेज, एक पट ओढ़े बैठे,
एक-एक बीरी दोऊ खंडि-खंडि खात हैं।
एक रस, एक प्राण, एक दृष्टि हित ध्रुव,
हेरि-हेरि बढ़ै चौंप क्यों हूँ न अघात हैं॥४॥

[२]

प्यारे बोली भामिनी आजु नीकी जामिनी,
भैंट नवीन मेघ सों दामिनी॥१॥
मोहन रसिक राइरी माई तासौं जु-
मान करै ऐसी कौन कामिनी॥२॥
जै श्रीहित हरिवंश श्रवण सुनत प्यारी,
राधिकारमण सों मिली गज गामिनी॥३॥

भूमिकाः—प्रथम पद में श्रीराधा के प्रेम का प्रियतम के अनुकूल रहने वाला स्वरूप वर्णित हुआ है। किन्तु इतने में उसका सम्पूर्ण रूप व्यक्त नहीं होता, क्योंकि प्रेम की अद्‌भुत गति के कारण, श्रीराधा सहज रूप से वामा हैं और उनकी वामता भी उनके प्रेम का उतना ही महत्वपूर्ण अंग है जितना कि उनकी प्रियतम के प्रति अनुकूलता। अतः वामता और अनुकूलता मिलकर ही श्रीराधा के प्रेम

CC-0. Shri Vipin Kumar Col. Deoband. In Public Domain.

Digitized by Madhuban Trust, Delhi

को पूर्णतया व्यक्त करते हैं । श्रीहिताचार्य ने, इसीलिये, इस ग्रन्थ के दूसरे पद में ही श्रीराधा की वामता को स्पष्ट कर दिया है ।

आज श्रीराधा मानवती होकर निकुञ्जान्तर में विराजमान हैं और श्रीहित सजनी प्रियतम की विकलता देखकर दोनों के सुखमय मिलन की सफल चेष्टा कर रही हैं ।

व्याख्या:—हे **भामिनी, आपको प्रियतम ने बुलाया है क्योंकि आज बड़ी सुन्दर रात्रि है और आकाश में नवीन मेघ से दामिनी का मिलन हो रहा है ।**

(व्यंजना यह है कि अपने प्रियतम श्यामघन के साथ दामिनी के समान आप भी मान त्याग कर मिलें ।) ॥१॥

(आकाश के घन-दामिनी जड़ एवं रसिकता से शून्य हैं फिर भी सुन्दर रात्रि देखकर वे एक दूसरे को भेट रहे हैं, इधर) **हे सखी, आपके प्रियतम मदनमोहन तो रसिक शिरोमणि हैं । ऐसी कौनसी कामिनी है जो** (इस सुन्दर रात्रि में) **उनसे मान कर सके** ॥२॥

श्रीहित हरिवंश **कहते हैं कि** (भावोद्दीपन करने वाले) **उपर्युक्त वचनों को सुनकर गजगामिनी श्रीराधा अपने प्रियतम श्रीराधारमण से मिलगईं ।**

(गजगामिनी विशेषण के द्वारा श्रीहिताचार्य ने श्रीराधा की उस समय की रस-दीप्त स्थिति की व्यंजना की है ।) ॥३॥

[३]

प्रात समय दोऊ रस लंपट,
सुरत - जुद्ध जय जुत अति फूल ॥१॥

CC-0. Shri Vipin Kumar Col. Deoband. In Public Domain.

Digitized by Madhuban Trust, Delhi

श्रम - वारिज घनविन्दु वदन पर,
भूषण अंगहि अंग विकूल ॥२॥
कछु रह्यौ तिलक शिथिल अलकावलि,
वदन कमल मानौं अलि भूल ॥३॥
जै श्रीहित हरिवंश मदन-रंग रँगि रहे,
नैंन - बैंन कटि शिथिल दुकूल ॥४॥

भूमिकाः—इस पद में युगल की सुरतांत छवि का वर्णन है। श्रीश्यामाश्याम ने सम्पूर्ण रात्रि प्रेम विहार में व्यतीत की है। इस विहार को समझने के लिये यह ध्यान में रखना परम आवश्यक है कि यह सामान्य लौकिक काम-विहार नहीं है। श्रीध्रुवदास ने बतलाया कि—'श्रीकृष्ण काम के वश में नहीं हैं। जिनका रूप देखते ही कोटि-कोटि मनोज रति सहित मूर्छित हो जाते हैं ऐसे नवलकिशोर श्रीवृन्दावनचन्द्र ने मदन सहित सबके मन मोहित कर रखे हैं। श्रीवृन्दावनेश्वरी श्रीवृषभानुनन्दिनी की प्रेममई अनंग चितवन, और रसमई भौंहों से जो प्रेम तरंग उत्पन्न होती हैं उन्होंने इन मदनमोहन को मोहित करके अपने वश में कर लिया है।'

जिह मन्मथ त्रैलोक सब अपने बस कियो आन।
सोई मैन मोह्यौ चितै मोहन मृदु मुसकान॥
मोहनी सोहनी भौंह तैं उपज्यौ सहज अनंग।
ते मोहन ध्रुव वस किये ते मनोज रस रंग॥

अतः श्रीश्यामाश्याम का काम सर्वथा अप्राकृत और असाधारण भाव है और कृपाबल से मन की असाधारण स्थिति प्राप्त होने पर ही रसिक भक्तों के हृदय में प्रतिविम्बित होता है। श्रीनागरीदास ने बतलाया कि यदि प्रेम-भजन के बल से नेत्रादिक इन्द्रियों द्वारा भाव का स्फुरण होने लगे तो सम्पूर्ण रूप-गुणमई वस्तु का दर्शन होने लगता है और चित्त में नित्य नवीन रुचि का उदय हो जाता है।

CC-0. Shri Vipin Kumar Col. Deoband. In Public Domain.

Digitized by Madhuban Trust, Delhi

को पूर्णतया व्यक्त करते हैं । श्रीहिताचार्य ने, इसीलिये, इस ग्रन्थ के दूसरे पद में ही श्रीराधा की वामता को स्पष्ट कर दिया है ।

आज श्रीराधा मानवती होकर निकुञ्जान्तर में विराजमान हैं और श्रीहित सजनी प्रियतम की विकलता देखकर दोनों के सुखमय मिलन की सफल चेष्टा कर रही हैं ।

व्याख्या:—**हे भामिनी, आपको प्रियतम ने बुलाया है क्योंकि आज बड़ी सुन्दर रात्रि है और आकाश में नवीन मेघ से दामिनी का मिलन हो रहा है ।**

(व्यंजना यह है कि अपने प्रियतम श्यामघन के साथ दामिनी के समान आप भी मान त्याग कर मिलें ।) ॥१॥

(आकाश के घन-दामिनी जड़ एवं रसिकता से शून्य हैं फिर भी सुन्दर रात्रि देखकर वे एक दूसरे को भेट रहे हैं, इधर) **हे सखी, आपके प्रियतम मदनमोहन तो रसिक शिरोमणि हैं । ऐसी कौनसी कामिनी है जो** (इस सुन्दर रात्रि में) **उनसे मान कर सके ॥२॥**

श्रीहित हरिवंश कहते हैं कि (भावोद्दीपन करने वाले) **उपर्युक्त वचनों को सुनकर गजगामिनी श्रीराधा अपने प्रियतम श्रीराधारमण से मिलगईं ।**

(गजगामिनी विशेषण के द्वारा श्रीहिताचार्य ने श्रीराधा की उस समय की रस-दीप्त स्थिति की व्यंजना की है ।) ॥३॥

[३]

प्रात समय दोऊ रस लंपट,
सुरत - जुद्ध जय जुत अति फूल ॥१॥

[४]

CC-0. Shri Vipin Kumar Col. Deoband. In Public Domain.

श्रम - वारिज घनविन्दु वदन पर,
भूषण अंगहि अंग विकूल ॥२॥
कछु रह्यौ तिलक शिथिल अलकावलि,
वदन कमल मानौं अलि भूल ॥३॥
जै श्रीहित हरिवंश मदन-रंग रँगि रहे,
नैंन - बैंन कटि शिथिल दुकूल ॥४॥

भूमिका:—इस पद में युगल की सुरतांत छवि का वर्णन है। श्रीश्यामाश्याम ने सम्पूर्ण रात्रि प्रेम विहार में व्यतीत की है। इस विहार को समझने के लिये यह ध्यान में रखना परम आवश्यक है कि यह सामान्य लौकिक काम-विहार नहीं है। श्रीध्रुवदास ने बतलाया कि—'श्रीकृष्ण काम के वश में नहीं हैं। जिनका रूप देखते ही कोटि-कोटि मनोज रति सहित मूर्छित हो जाते हैं ऐसे नवलकिशोर श्रीवृन्दावनचन्द्र ने मदन सहित सबके मन मोहित कर रखे हैं। श्रीवृन्दावनेश्वरी श्रीवृषभानुनन्दिनी की प्रेममई अनंग चितवन, और रसमई भौंहों से जो प्रेम तरंग उत्पन्न होती हैं उन्होंने इन मदनमोहन को मोहित करके अपने वश में कर लिया है।'

जिह मन्मथ त्रैलोक सब अपनें बस कियो आन।
सोई मैन मोह्यौ चितै मोहन मृदु मुसकान ॥
मोहनी सोहनी भौंह तैं उपज्यौ सहज अनंग।
ते मोहन ध्रुव वस किये ते मनोज रस रंग ॥

अत: श्रीश्यामाश्याम का काम सर्वथा अप्राकृत और असाधारण भाव है और कृपाबल से मन की असाधारण स्थिति प्राप्त होने पर ही रसिक भक्तों के हृदय में प्रतिविम्बित होता है। श्रीनागरीदास ने बतलाया कि यदि प्रेम-भजन के बल से नेत्रादिक इन्द्रियों द्वारा भाव का स्फुरण होने लगे तो सम्पूर्ण रूप-गुणमई वस्तु का दर्शन होने लगता है और चित्त में नित्य नवीन रुचि का उदय हो जाता है।

CC-0. Shri Vipin Kumar Col. Deoband. In Public Domain.

Digitized by Madhuban Trust, Delhi

भजन बल इन्द्री हाथ जो फुरिबौ करिहै भाव।
सब गुण वस्तु विलोकि है नव-नव नित चित चाव ।।

श्रीश्यामाश्याम का प्रेम रस, श्रीध्रुवदास के शब्दों में. "राग रंग युक्त अद्‌भुत अनंग केलि है"—'राग रंग जुत प्रेम रस अद्‌भुत केलि अनंग' और यह शृङ्गार रस के सब गुणों एवं अंगों से पूर्ण है।

प्रस्तुत पद में श्रीश्यामाश्याम ने इस अद्‌भुत अनंग केलि का सम्पूर्ण रात्रि उपभोग किया है और उसमें स्वयं सुख प्राप्त करने की रंचमात्र भी कामना न रखकर एक दूसरे को सुखित करके परस्पर विजय का अनुभव किया है । प्रातःकाल वे निभृत निकुञ्ज-भवन की किशलय शैय्या पर अपने सम्पूर्ण प्रीति-संभार, विजय-उल्लास एवं रति चिह्नों के सहित अत्यन्त छवि से विराजमान हैं। उनके त्रैलोक्य मोहन रूप को विभिन्न छवि-छटाओं से अलंकृत देखकर श्रीहितसखी उसका वर्णन अपनी कृपापात्र सखी से करती हुई कहती है :—

व्याख्या:—प्रातःकाल यह दोनों रस-लंपट (लोभी) प्रेम युद्ध में परस्पर विजय प्राप्त करके उस विजय की अत्यन्त फूलन (उल्लास) से मंडित हैं ।।१।।

दोनों के मस्तक पर तिलक थोड़ा ही शेष रह गया है और दोनों की अलकावलि शिथिल होकर मस्तक पर झूल रही है जिसको देखकर ऐसा मालूम होता है मानौ मुख रूपी कमल पर भ्रमरों की पंक्ति उड़ना भूलकर बैठी रह गयी है ।।३।।

सखी भावापन्न श्रीहित हरिवंश कहते हैं कि इस समय श्रीश्यामाश्याम के नेत्र और वाणी मदन के रंग से रँग रहे हैं और उनका कटि-वस्त्र शिथिल हो रहा है ।।४।।

CC-0. Shri Vipin Kumar Col. Deoband. In Public Domain.

Digitized by Madhuban Trust, Delhi

[४]

आजु तौ जुवति तेरौ वदन आनन्द भरचौ,
पिय के संगम के सूचत सुख - चैन ॥१॥
आलस - वलित बोल सुरंग रँगे कपोल,
विथकित अरुण उनींदे दोऊ नैंन ॥२॥
रुचिर तिलक - लेश किरत कुसुम - केश,
सिर सीमंत भूसित मानौं तैं न ॥३॥
करुणाकर उदार राखत कछु न सार,
दसन - वसन लागत जब दैन ॥४॥
काहे कों दुरत भीरु पलटे प्रीतम चीर,
बस किये श्याम सिखै सत मैन ॥५॥
गलित उरसि माल, सिथिल किंकिनी जाल,
जै श्रीहित हरिवंश लता - गृह सैन ॥६॥

भूमिका:—इस पद में भी श्रीश्यामाश्याम की सुरतांत छवि का वर्णन है । श्रीहिताचार्य को सुरत के वर्णन की अपेक्षा सुरतांत छवि का वर्णन अधिक रुचिकर है । सुरतांत के वर्णन में विशेषता यह होती है कि सुरतकाल में श्रीश्यामाश्याम के अत्यन्त रमणीय एवं मनमोहक श्रीअंगों में जो अद्‌भुत सौन्दर्य की छटा छा जाती है एवं जो अत्यन्त आकर्षक सुरत-चिह्न अंकित हो जाते हैं वे रसिकजनों के प्रेम-सौन्दर्यग्राही सरस चित्तों को अत्यन्त तृप्ति प्रदान करते हैं। श्रीहिताचार्य रसिक अनन्यों में मुख्य गुरु हैं अतः उनका इस छटा से मोहित होना स्वाभाविक है। सेवकजी ने कहा है कि श्रीश्यामाश्याम की सुरतांत छवि वर्णनातीत है और क्षण-क्षण में अर्थात् होली, झूला, वनविहार आदि के पदों में भी उसका वर्णन करने के बाद श्रीहित हरिवंश को तृप्ति नहीं होती।

CC-0. Shri Vipin Kumar Col. Deoband. In Public Domain.

"सुरत अंत छवि बरन न जाई,
छिन-छिन प्रति हरिवंश जु गाई।"

प्रस्तुत पद में, अपने प्रियतम के संग सम्पूर्ण रात्रि प्रेम-विहार करने के बाद श्रीराधा निकुंज भवन के द्वार पर पधारी हैं और वहाँ उनकी अद्भुत छवि का दर्शन करके एवं श्रीप्रिया में सुरत विहार के गोपन (छिपाने) की प्रवृत्ति देखकर श्रीहित सजनी उनसे लाड़ पूर्वक वार्तालाप में प्रवृत्त होती हैं।

व्याख्या:—हे युवति, आज तो आपका मुख आनन्द से भरा हुआ है और उससे प्रियतम के मिलन के सुख चैन प्रकट हो रहे हैं ॥१॥

आपकी बातचीत आलस्य पूर्ण है। आपके सुन्दर कपोलों पर पीक की लाली जहाँ-तहाँ चित्रित हो रही है तथा आपके दोनों नेत्र थके हुये, लालीयुक्त एवं उनींदे हो रहे हैं ॥२॥

आपके सुन्दर मस्तक पर लगा हुआ रमणीय तिलक थोड़ा सा ही शेष रह गया है, आपका मनोहर केश-पाश शिथिल हो गया है और उसमें गुँथे हुये फूल पृथ्वी पर बिखर रहे हैं। मोतियों से भरी हुई आपकी सुन्दर माँग भी उनके झड़ जाने से ऐसी लगती है मानौं आपने उसका शृङ्गार ही नहीं किया ॥३॥

आपके सहज अरुण वर्ण अधर आज लालिमा रहित हो रहे हैं क्योंकि आप अपने सहज एवं करुणामय उदार स्वभाव के कारण जब प्रियतम को अधर-पान कराने लगती हैं तब कुछ भी शेष नहीं रखतीं।

(श्रीराधा सखी के ऐसे रंग भरे वचन सुनकर अपने श्रीअङ्गों को छिपाने लगीं तब हितसखी बोलीं।) ॥४॥

CC-0. Shri Vipin Kumar Col. Deoband. In Public Domain.

Digitized by Madhuban Trust, Delhi

हे भयशीले (भीरु) आप अब अङ्गों को क्यों छिपाती हो क्योंकि प्रियतम को अपना नीलाम्बर उढ़ाकर आपने उनका पीताम्बर ओढ़ लिया है सो कैसे छिपाया जा सकता है ? वस्तुतः शत-शत कामदेवों को अपनें प्रियतम के हृदय में जागृत करके आपने उनको (प्रियतम को) अपने वश में कर लिया है ॥५॥

सखी भावापन्न श्रीहित हरिवंश कहते हैं कि (आप यदि अब भी अपने प्रियतम से मिलने का प्रमाण चाहती हैं तो यह देखिये) आपके वक्षस्थल पर धारण की हुई पुष्पमाला टूटी हुई है एवं किंकिणी समूह की ग्रन्थि (गाँठ) शिथिल हो रही है। (इससे यह निश्चित सूचना मिलती है कि) आपने अपने प्रियतम के साथ श्रीवृन्दावन लता-मन्दिर में विहार किया है ॥६॥

[५]

आजु प्रभात लता - मन्दिर में,
सुख बरसत अति हरखि युगल वर ॥१॥
गौर श्याम अभिराम रङ्गभरे,
लटकि - लटकि पग धरत अवनि पर ॥२॥
कुच - कुमकुम रंजित मालावलि,
सुरत नाथ श्रीश्याम धाम धर ॥३॥
प्रिया प्रेम के अंक अलंकृत,
चित्रित चतुर - शिरोमनि निजकर ॥४॥
दम्पति अति अनुराग मुदित कल-
गान करत मन हरत परस्पर ॥५॥
जै श्रीहित हरिवंश प्रसंश - परायन,
गायन अलि सुर देत मधुरतर ॥६॥

CC-0. Shri Vipin Kumar Col. Deoband. In Public Domain.

Digitized by Madhuban Trust, Delhi

भूमिकाः—श्रीहित हरिवंश गोस्वामी द्वारा प्रवर्तित नित्य-विहार की उपासना सुख की, हर्ष की, मोद की और आनन्द की उपासना है । इस उपासना में प्रेम-सौन्दर्य की अवधि रस-सागर श्रीश्यामाश्याम का परस्पर सुख और हर्ष ही उपास्य है । श्रीध्रुवदास ने बतलाया है कि श्रीवृन्दावन में जहाँ श्रीश्यामाश्याम का एक छत्र रसमय राज्य है वहाँ सदैव आनन्द का रंग छाया रहता है और सोच तथा दुचित्तता का लेश मात्र भी वहाँ नहीं है ।

आनँद कौ रँग नित जहाँ सोच न दुचितई लेश ।
इक छत राजत राज रस वृन्दाविपिन नरेश ॥

श्रीहिताचार्य का श्रीश्यामाश्याम की सुरतांत छवि के प्रति जो असाधारण आकर्षण है उसका एक कारण यह भी है कि इस छवि में श्रीश्यामाश्याम के हृदयों का अनुपम एवं अवर्णनीय सुख बाहर प्रकट होकर उनके श्रीअंगों पर रतिचिह्नों के रूप में अंकित हो जाता है और उपासक की दृष्टि का विषय बन जाता है ।

इस पद में भी सुरतांत छवि का वर्णन है । इससे पूर्व के पद में केवल श्रीराधा की छवि-छटा का वर्णन हुआ था । प्रस्तुत पद में युगल की इस प्रकार की छवि का वर्णन है ।

व्याख्याः—(श्रीहित सजनी अपनी कृपापात्र सखी से श्रीयुगल की अद्‌भुत छवि का वर्णन करती हुई कहती हैं) हे सखी ! आज **प्रातःकाल श्रीवृन्दावन लता मन्दिर में सुख की वर्षा हो रही है क्योंकि आज श्रीयुगलवर अत्यन्त हर्षित हैं ॥१॥**

प्रेम-रंग से भरे हुये सुन्दर गौर-श्याम बल खाती मन मोहक सुन्दर गति से अवनी पर चरणों को रख रहे हैं ॥२॥

श्रीराधा का आलिंगन करते समय उनके युगल उरोजों पर लगी हुई केसर के रंग से रँगी हुई मालावलि को सुरतनाथ श्रीश्यामसुन्दर अपने वक्षस्थल पर धारण किये हुये हैं ॥३॥

CC-0. Shri Vipin Kumar Col. Deoband. In Public Domain.

Digitized by Madhuban Trust, Delhi

श्रीराधा प्रेम के अंकों (रतिचिह्नों) से सुशोभित हैं जिनको चतुर शिरोमणि श्रीश्यामसुन्दर ने अपने कर कमलों से अंकित किया है ।।४।।

युगल श्रीश्यामाश्याम अत्यन्त अनुराग से मुदित होकर सुन्दर गान कर रहे हैं और उसके द्वारा एक दूसरे के मन का हरण कर रहे हैं ।।५।।

सखी भावापन्न श्रीहित हरिवंश कहते हैं कि युगल के अद्भुत गान को सुनकर जिनका हृदय प्रशंसा से पूर्ण हो रहा है ऐसी सखियाँ उनके (गान के) साथ मधुरातिमधुर स्वरों का संयोग कर रही हैं ।।६।।

[६]

कौन चतुर जुवती प्रिया,
जाहि मिलत लाल चोर ह्वै रैन ।।१।।
दुरवत क्योंऽब दुरै सुनि प्यारे,
रंग में गहिले चैन में नैन ।।२।।
उर नख - चन्द्र विराने-
पट अटपटे से बैन ।।३।।
(जै श्री) हित हरिवंश रसिक-
राधापति प्रमथित मैन ।।४।।

भूमिकाः—श्रीहिताचार्य का रस - मार्ग श्रीवृषभानुनन्दिनी श्रीराधा के चरणों की रति को लेकर खड़ा हुआ है । श्रीप्रिया की प्रधानता उनके अद्भुत रूप-सौन्दर्य, निरुपम गुण-गण एवं असीम रस-प्रवीणता आदि अनेक बातों के कारण है । श्रीध्रुवदास ने कहा है—

CC-0. Shri Vipin Kumar Col. Deoband. In Public Domain.

Digitized by Madhuban Trust, Delhi

सर्वोपरि राधा कुँवरि पिय प्रानन के प्रान।
ललितादिक सेवत तिर्नाहि अति प्रवीण रस जान ॥

श्रीराधा स्वकीया और स्वाधीन पतिका हैं । किन्तु अनेक रसिकजनों ने परकीया प्रेम में रसोन्नति मानी है और यह श्रीराधा-बल्लभीय रसिकों को स्वीकार नहीं है । किन्तु परकीया प्रेम के कई अंग ऐसे हैं जो स्वकीया प्रेम में भी साधक बनते हैं और रसास्वाद में चमत्कृति लाते हैं ।

परकीया प्रेम में नायक-नायिका के मिलन में जो बाधायें आती हैं उनसे उत्सुकता बढ़ जाने के कारण रस में वृद्धि होती है । इसी प्रकार छिपकर मिलने की भी एक सरस प्रवृत्ति परकीया प्रेम में है और उससे भी आस्वाद में नूतनता आती है । मिलन की प्रवृद्ध उत्सुकता एवं आस्वाद की नूतनता स्वकीया प्रेम में भी चमत्कार वर्धक होते हैं । किन्तु स्वकीया प्रेम में इन अंगों के विकास का आधार नायिका की नागरता एवं चातुर्य पर होता है ।

श्रीवृन्दावन रानी राधा भोलापन और चातुर्य की परावधि हैं । वे अपने प्रियतम के साथ मिलकर परम चतुर नायिका की भाँति रसास्वादन करती हैं । प्रस्तुत पद में उनके अद्‌भुत चातुर्य का उदाहरण श्रीहिताचार्य ने दिया है । चौथे पद में अकेली श्रीराधा की सुरतांत छवि का वर्णन है और इस पद में अकेले श्रीश्यामसुन्दर की उसी छवि का वर्णन हुआ है ।

आज श्रीराधा की चतुर योजना के कारण श्रीवृन्दावन निकुंज मन्दिर में श्रीश्यामघन चोरों की भाँति छुपकर उनसे मिले हैं और सम्पूर्ण रात्रि प्रेम-विहार में व्यतीत की है । प्रात:काल सखियों की दृष्टि बचाते हुये वे निकुंज मन्दिर के द्वार पर आकर उपस्थित हुये हैं कि चतुर सखियों ने उनका अद्‌भुत वेष देखकर उनको वहीं रोक लिया है और उनकी छिपाने की चेष्टा को व्यर्थ बनाती हुई दुलरा पूर्वक उनसे कहती हैं,

CC-0. Shri Vipin Kumar Col. Deoband. In Public Domain.

Digitized by Madhuban Trust, Delhi

व्याख्या:—हे लाल, आपकी वह कौन सी चतुर प्रिया है जिससे आप चोर बनकर मिलते हैं ?

(इस बात को सुनकर श्यामसुन्दर चौंक उठते हैं और अपने रूप को छिपाने की विफल चेष्टा करते हैं कि सखियाँ मुसकराकर कहने लगती हैं।) ॥१॥

हे प्यारे, आप सब कुछ छिपा सकते हैं—किन्तु प्रम रंग के सुख से भरे हुये आपके नेत्र छिपाने से भी नहीं छिप रहे हैं।

(यदि आप इसको भी अपनी चोरी का पर्याप्त प्रमाण नहीं मानते हैं तो देखिये।) ॥२॥

आपके वक्षस्थल पर श्रीप्रिया द्वारा लगाये गये नख-चन्द्र उदित हो रहे हैं, आपने प्रिया का नीलाम्बर अपनें पीताम्बर के स्थान पर ओढ़ रखा है और आपके वचन भी असम्बद्ध हैं।

(आप जो कुछ बोल रहे हैं उसका पूर्वापर सम्बन्ध नहीं लग रहा है।) ॥३॥

सखी भावापन्न श्रीहित हरिवंश कहते हैं कि रसिक राधा-पति, सत्य बात तो यह है कि (श्रीराधा के भृकुटि-विलास से उत्पन्न) काम ने आपके हृदय को मथ रखा है ॥४॥

[७]

आजु निकुंज मंजु में खेलत,
नवल किशोर नवीन किशोरी ॥१॥
अति अनुपम अनुराग परस्पर,
सुन अभूत भूतल पर जोरी ॥२॥

CC-0. Shri Vipin Kumar Col. Deoband. In Public Domain.

Digitized by Madhuban Trust, Delhi

विद्रुम फटिक विविध निर्मित धर,
नव कर्पूर पराग न थोरी ॥३॥
कोमल किशलय सयन सुपेसल,
तापर श्याम निवेसित गोरी ॥४॥
मिथुन हास - परिहास परायन,
पीक कपोल कमल पर झोरी ॥५॥
गौर श्याम भुज कलह मनोहर,
नीवी - बन्धन मोचत डोरी ॥६॥
हरि उर मुकुर विलोकि अपनपौ,
विभ्रम विकल मान जुत भोरी ॥७॥
चिबुक सुचारु प्रलोइ प्रबोधत,
पिय प्रतिबिंब जनाय निहोरी ॥८॥
नेति - नेति बचनामृत सुनि - सुनि,
ललितादिक देखत दुरि चोरी ॥९॥
जै श्रीहित हरिवंश करत कर - धूनन,
प्रणयकोप मालावलि तोरी ॥१०॥

भूमिका:—इस पद में श्रीयुगल का परम अद्भुत एवं नागरता पूर्ण प्रेमविहार वर्णित है। श्रीहिताचार्य ने जिस उपासना का प्रचलन किया उसका प्रधान लक्षण यह है कि वह प्रकट भाव पर आधारित है। 'सुधर्म-बोधनी' में बतलाया गया है कि अपने धर्म में भाव प्रकट[1]

१—प्रकट श्रीराधावल्लभलाल को ही नित्य विहारी श्यामाश्याम समझ कर एवं प्रकट श्रीवृन्दावन को नित्य वृन्दावन तथा श्रीवृन्दावन वासियों को नित्य परिकर समझकर उपासना करना ही प्रगट भाव की उपासना है।

CC-0. Shri Vipin Kumar Col. Deoband. In Public Domain.

Digitized by Madhuban Trust, Delhi

है और सेवा प्रकट है, इसीलिये यहाँ श्रीश्यामाश्याम, श्रीवृन्दावन एवं सहचरीगण अगम होते हुए भी सुगम बन रहे हैं।

"प्रगट भाव सेवा प्रगट यह सुधर्म पहिचान।
धामी, धाम, समाज, अलि अगम सुगम भये आन॥"

शास्त्रों ने श्रीश्यामाश्याम की स्थिति अनादि-अनन्त बतलाई है। द्वापर के अंत में इन दोनों का धरातल पर अवतीर्ण होना माना जाता है। और नियत काल के बाद उनका अन्तर्धान भी पुराणों में वर्णित है। किन्तु विक्रम की सोलहवीं शती में जो रसिक महानुभाव अवतीर्ण हुए उन्होंने अपने उपास्य स्वरूपों को प्रकट मानकर-भूतल स्थित मानकर-उपासना की एक नई विधा को जन्म दिया। उसी काल में श्रीहित महाप्रभु ने अपने आराध्य श्रीश्यामाश्याम के भूतल स्थित स्वरूप का प्राकट्य किया। श्रीध्रुवदास ने बतलाया है कि नव-किशोर, अत्यन्त सुकुमार, परस्पर अंसों पर भुजा रखे हुए एवं प्रेम रस से ओत-प्रोत जोरी (युगल) श्रीहरिवंश ने प्रकट की।

"नव किशोर सुकुमार तन मृदु भुज मेलैं अंस।
जोरी सनी सनेह रस प्रगट करी हरिवंश॥"

प्रस्तुत पद में श्रीहिताचार्य ने अपनी जोरी को भूतल पर 'अभूत' बतलाया है। इसका अर्थ यह है कि नित्य अनादि-अनन्त होते हुये भी यह जोड़ी उनसे पूर्व किसी को दृष्टिगोचर नहीं थी—किसी के नेत्रों का विषय नहीं थी। उसको नेत्रों का विषय बनाने का श्रेय श्रीहिताचार्य को है।

व्याख्या:—(श्रीहित सखी अपनी कृपापात्र सखी से कहती हैं कि) **आज परम सुन्दर श्रीवृन्दावन निकुञ्ज मन्दिर में नवलकिशोर श्रीश्यामसुन्दर एवं नवीन किशोरी श्रीवृषभानुनंदिनी खेल रहे हैं अर्थात् प्रेम-क्रीड़ा में रत हैं॥१॥**

CC-0. Shri Vipin Kumar Col. Deoband. In Public Domain.

Digitized by Madhuban Trust, Delhi

इन दोनों में परस्पर अत्यन्त अनुपम अनुराग है अर्थात् इन दोनों के परस्पर प्रेम के समान प्रेम अन्यत्र कहीं देखनें में नहीं आता, और हे सखी, यह भी सुनलो कि श्यामाश्याम की यह जोड़ी पृथ्वी तल पर अभूत है अर्थात् अब से पूर्व किसी की दृष्टि का विषय नहीं थी ।।२।।

(अब श्रीश्यामाश्याम के क्रीड़ा-स्थल श्रीवृन्दावन का वर्णन करते हुये कहते हैं कि जहाँ यह युगल खेल रहे हैं) वहाँ की भूमि विद्रुम (मूँगा) स्फटिक (श्वेत वर्ण की मणि) के द्वारा बनी हुई है और उस पर नवीन कपूर तथा पुष्प-पराग की धूलि बिछी हुई है ।।३।।

(इस परम रमणीय वृन्दावन निकुंज मन्दिर में) कोमल किशलयों (कोपलों) के द्वारा सुन्दर शैया की रचना हो रही है जिस पर श्रीश्यामसुन्दर नें अपनी प्रिया को विराजमान किया है ।।४।।

श्रीयुगल परस्पर हास-परिहास में प्रवृत्त हैं और परस्पर चुम्बन करनें के कारण उनके कपोलों पर जो पान की पीक लगी है वह ऐसी मालूम हो रही है जैसे कमल पर मुलम्मा (पालिश) कर दिया हो ।।५।।

श्रीश्यामसुन्दर श्रीराधा के नीवी बंधन की डोरी को खोलना चाहते हैं इसलिए सुन्दर गौर-श्याम भुजाओं में मनोहर कलह मच रही है ।।६।।

इस लीला-विलास के मध्य में श्रीराधा की दृष्टि अचानक श्रीश्यामसुन्दर के दर्पण के समान स्वच्छ एवं उज्ज्वल वक्षस्थल पर पड़ती है और उसमें अपना प्रतिविम्ब देखकर परम भोली श्रीराधा (उसको अन्य किसी रूपवती रमणी का प्रतिविम्ब समझकर) भ्रम में पड़ जाती हैं और विकल बनकर मानयुक्त हो जाती हैं ।।७।।

CC-0. Shri Vipin Kumar Col. Deoband. In Public Domain.

Digitized by Madhuban Trust, Delhi

ऐसे रस-विलास के मध्य में इस अचानक और अप्रत्याशित मान को देखकर श्रीश्यामसुन्दर चकित बन जाते हैं और श्रीराधा की सुन्दर चिबुक को सहलाकर उनसे विनम्रतापूर्वक कहते हैं कि हे प्रिया, मेरे हृदय में दीखनें वाला यह आपका ही प्रतिबिंब है, अन्य किसी का नहीं है ॥८॥

किन्तु प्रियतम के अनुनय-विनय एवं समझाने पर भी मानवती श्रीप्रिया के ऊपर उसका कोई प्रभाव नहीं पड़ता और वे 'ऐसा नहीं है—ऐसा नहीं है' इस प्रकार के वचनामृत बोलने लगती हैं। श्रीराधा की उस समय की प्रणय-कोप से रंजित अद्भुत मुख छवि को देखकर एवं उनके प्रेम-गर्व से भरे हुये वचनों को सुनकर ललितादिक सखीगण छिपकर कुञ्ज भवन के छिद्रों में से इस अद्भुत सुख को देखनें लगती हैं ॥६॥

इतनें ही में प्रणय-कोप से भरी हुई श्रीराधा नें अपनें प्रियतम के वक्षस्थल पर धारण की हुई मालावलि को झटककर तोड़ दिया और यह देखकर श्रीहित हरिवंश रूपा सजनी निरुपायता एवं निराशा से कर-धूनन करनें लगीं अर्थात् हाथों को हिलानें लगीं ॥१०॥

(श्रीप्रिया के सहजवामा स्वरूप से श्रीहित सजनी भली भाँति परिचित हैं । आज बहुत अनुनय-विनय करके एवं अपने प्रियतम से वामता न करने के लिये समझा-बुझाकर उन्होंने श्रीप्रिया को निकुंज मन्दिर में पधराया था । किन्तु प्रेम की लपेट में पड़कर श्रीप्रिया सब कुछ भूल गईं और अपने प्रियतम के प्रति पूर्ण वामता का आचरण कर ही दिया । उनकी वामता जब यहाँ तक बढ़ गई कि उन्होंने अपने प्रियतम के गले में धारण की हुई मालावलि को तोड़ दिया तब श्रीहित सजनी निरुपाय बनकर अपनी दोनों हथेलियों को फैलाकर हाथों को हिलाने लगीं । मुख से कुछ न बोल कर अपने हाथों के इस संकेत से उन्होंने यह व्यक्त किया कि हे स्वामिनी, मेरी इतनी अनुनय-

CC-0. Shri Vipin Kumar Col. Deoband. In Public Domain.

Digitized by Madhuban Trust, Delhi

विनय एवं समझाने-बुझाने के बाद भी आपने अपने सर्वथा अनुकूल एवं अनन्यव्रती प्रियतम के प्रति यह कठोर व्यवहार कर ही दिया।)

[८]

अति हो अरुन तेरे नैंन नलिन री ॥१॥
आलस जुत इतरात रँगमगे,
भये निशि जागर मखिन मलिन री ॥२॥
शिथिल पलक में उठत गोलक गति,
बिंधयौ मोहन मृग सकत चलि न री ॥३॥
जै श्रीहित हरिवंश हंस कल गामिनि,
संभ्रम देत भ्रमरन अलिन री ॥४॥

भूमिकाः—जिस प्रकार चौथे पद में श्रीहिताचार्य ने श्रीराधा की सर्वांग सुरतांत छवि का वर्णन किया है उसी प्रकार इस पद में श्रीप्रिया के केवल नेत्रों की छवि का वर्णन है । सम्पूर्ण रात्रि अपने प्रियतम के साथ प्रेम विहार में व्यतीत करने के बाद श्रीराधा कुञ्ज-द्वार पर पधारी हैं और वहाँ उनके नेत्रों की अद्‌भुत छवि देखकर श्रीहित सजनी उनसे उनके नेत्रों के अनुपम चमत्कार का वर्णन करने लगती हैं ।

व्याख्याः—हे सखी, तुम्हारे कुमुद के समान नेत्र अत्यन्त अरुण (लाल) हो रहे हैं ॥१॥

तुम्हारे ये प्रेम रंग से भरे हुए आलस्य युक्त नेत्र (प्रियतम के लाड़ के कारण) इठला रहे हैं और रात्रि-जागरण से इनका काजल फीका पड़ गया है ॥२॥

CC-0. Shri Vipin Kumar Col. Deoband. In Public Domain.

Digitized by Madhuban Trust, Delhi

(इन आलस्ययुक्त नेत्रों के) शिथिल पलकों में रहे हुए गोलकों (तारों) ने सहसा चंचल बनकर मोहनलाल के मन रूपी मृग को इस प्रकार विद्ध कर दिया है कि वह चलने में असमर्थ बन गया है ॥३॥

सखी भावापन्न श्रीहित हरिवंश कहते हैं, हे हंस के समान सुन्दर गति वाली श्रीप्रिया, आपके नेत्र एक ओर तो भ्रमरों को भ्रम पैदा कर रहे हैं (कि ये नेत्र हैं या सचमुच ही कमल हैं) और दूसरी ओर आपके नेत्रों की वेधन-सामर्थ्य को देखकर सखियाँ भी भ्रम में पड़ गई हैं (कि यह नेत्र हैं या बाण) ॥४॥

[९]

बनी श्रीराधा मोहन की जोरी ॥१॥
इन्द्रनीलमणि श्याम मनोहर, सात कुम्भ तन गोरी ॥२॥
भाल विशाल तिलक हरि कामिनि, चिकुर चन्द्र बिच रोरी ॥३॥
गज-नायक प्रभु चाल, गयन्दनि-गति वृषभानु किसोरी ॥४॥
नील निचोल जुवति मोहन, पटपीत अरुण सिर खोरी ॥५॥
जै श्रीहित हरिवंश रसिक, राधापति सुरत रंग में बोरी ॥६॥

भूमिकाः—सौन्दर्य की सृष्टि करने वाले साधनों में वर्णों (रंगों) की परस्पर विरुद्धता एक प्रधान साधन माना जाता है। विरुद्ध वर्ण एक दूसरे के पूरक बनकर सौन्दर्य की सर्जना करते हैं। इसीलिये श्रीश्यामाश्याम के परस्पर विरुद्ध वर्ण-गौर और श्याम मिलकर एक समन्वित अनुपम सौन्दर्य की रचना कर देते हैं। प्रस्तुत पद में इसी तथ्य की ओर संकेत किया गया है।

आज श्रीवृन्दावन निकुञ्ज मन्दिर में सखियों ने श्रीयुगल का रुचि पूर्वक शृङ्गार किया है और अब दोनों छविपूर्वक कुञ्जमहल के

CC-0. Shri Vipin Kumar Col. Deoband. In Public Domain.

Digitized by Madhuban Trust, Delhi

प्रांगण में पधार रहे हैं । श्रीहित सजनी उनकी इस समय की शोभा का वर्णन अपनी कृपापात्र सखी से करती हुई कहती हैं:—

श्रीराधा एवं मोहन की जोड़ी खूब फब रही है ॥१॥

इस जोड़ी में मनोहर श्यामसुन्दर नीलकान्त मणि के समान हैं और शुद्ध कंचन के समान गौर वर्ण वाली श्रीराधा हैं ॥२॥

श्रीहरि के विशाल भाल पर तिलक शोभायमान है तथा कामिनी श्रीराधा के मस्तक पर रोली की बैंदी धारण हो रही है ॥३॥

प्रभु श्रीवृन्दावननाथ की चाल गजनायक के समान मत्त है और श्रीवृषभानुकिशोरी की गति गयन्दनि के समान झूमती हुई है ॥४॥

युवति श्रीराधा नें नीले रंग की ओढ़नी धारण कर रखी है और मोहन ने पीताम्बर के साथ सिर पर लाल रंग की पाग धारण की है ॥५॥

श्रीहित हरिवंशचन्द्र कहते हैं कि रसिक राधापति की यह जोड़ी शृङ्गारिक प्रेम के रंग में डूबी हुई है ॥६॥

[१०]

आजु नागरीकिशोर भांवती विचित्र जोर,
कहा कहौं अंग-अंग परम माधुरी ॥१॥
करत केलि कंठ मेलि बाहुदंड गंड-गंड-
परस सरस रास लास मंडली जुरी ॥२॥

CC-0. Shri Vipin Kumar Col. Deoband. In Public Domain.

Digitized by Madhuban Trust, Delhi

श्यामसुन्दरी विहार बांसुरी मृदंग तार,
मधुर घोष नूपुरादि किंकिनी चुरी ॥३॥
जैश्री देखत हरिवंश आलि, निर्तनी सुधंग चाल,
वारि फेर देत प्राण देहसौं दुरी ॥४॥

भूमिका:—इस पद में सखियों की मंडली में श्रीयुगल की रास क्रीड़ा का वर्णन है। यह रास वंशीवट के प्रसिद्ध रास से भिन्न है और श्रीश्यामाश्याम के नित्य रास-विलास से सम्बन्धित है। प्रेमानुभव की गहनता में एक स्थिति ऐसी आती है जहाँ नृत्य, संगीत आदि गुणों के विविध अंग सहज रूप से प्रकाशित हो जाते हैं और प्रेम की वृद्धि में सहायक बनते हैं। श्रीश्यामाश्याम तो मूर्तिमान प्रेम ही हैं और उनका परस्पर प्रेम सदैव अपनी तीव्रतम स्थितियों में संचरण करता रहता है। उनके प्रेमोल्लास का प्रकाश सहज रूप से रास क्रीड़ा में होता है और उसी सहज रास का वर्णन इस पद में है।

आज के रास में श्रीश्यामाश्याम के अंगों से एवं उनके नृत्य विलास से रूप-सौन्दर्य की अद्‌भुत उच्छलन हुई है। उसका दर्शन करके मनुष्य-देह में स्थित श्रीहित सजनी (श्रीहित हरिवंश) अत्यन्त आनंद विभोर बन गई हैं और उस विभोरता में युगल के रास रंग का वर्णन करती हुई कहती हैं:—

आज नागरी श्रीराधा एवं नवकिशोर श्रीश्यामसुन्दर की अत्यन्त रुचिकर एवं विचित्र जोड़ी के अंग-अंग अवर्णनीय परम माधुर्य से मंडित हैं ॥१॥

यह दोनों परस्पर कंठों में बाहु डालकर एवं कपोलों को परस्पर मिले रखकर केलि कर रहे हैं और उनके चारों ओर सरस रास-नृत्य में प्रवृत्त सखियों की मंडली एकत्रित है ॥२॥

CC-0. Shri Vipin Kumar Col. Deoband. In Public Domain.

Digitized by Madhuban Trust, Delhi

यह श्रीश्यामघन एवं सुन्दरी श्रीराधा का प्रेम-विहार हो रहा है जिसमें बाँसुरी, मृदंग एवं सारंगी आदि के साथ नूपुर, किंकिनी, चूड़ी आदि का मधुर शब्द उत्पन्न हो रहा है ॥३॥

मनुष्य देह में छिपी हुई (श्रीश्यामाश्याम की नित्य सहचरी) श्रीहरिवंश सखी सुधंग नृत्य की अद्‌भुत चाल को देख रही हैं और आनन्द गद्‌गद् चित्त से इस विहार पर अपने प्राणों को न्यौछावर कर रही हैं ॥४॥

नोट:—हित चौरासी के टीकाकारों ने 'देह सौं दुरी' का तात्पर्य 'लता-भवन की ओट में छिपी हुई' बतलाया है । किन्तु सखियाँ ऐसा तभी करती हैं जब श्रीप्रियालाल शृङ्गार-केलि में प्रवृत्त होते हैं । इस पद में तो उनके रास का वर्णन है और सखियों के लता-ओट में जाने की कोई आवश्यकता नहीं है । रास-केलि में तो सब सहचरियाँ किसी न किसी रूप में भाग लेती ही हैं ।

अतः 'देह सौं दुरी' का यही अर्थ समीचीन प्रतीत होता है जो ऊपर किया गया है । श्रीहिताचार्य को यह रास-केलि नेत्रों के सामने घटित होती तो दिखलाई दे रही है किन्तु वे मनुष्य देह में अवरुद्ध होने के कारण इसमें प्रत्यक्ष रूप से भाग नहीं ले पा रहे हैं और उनको प्राण न्यौछावर करके ही सन्तोष करना पड़ रहा है । यही परिताप उन्होंने 'देह सौं दुरी' शब्दों के द्वारा व्यक्त किया है ।

[११]

मंजुल कल कुंज देश, राधा हरि विशद वेश,
राका नभ कुमुद-बन्धु शरद जामिनी ॥१॥
साँवल दुति कनक अंग, विहरत मिलि एक संग,
नीरद मनौ नील मध्य लसत दामिनी ॥२॥

CC-0. Shri Vipin Kumar Col. Deoband. In Public Domain.

Digitized by Madhuban Trust, Delhi

अरुण पीत नव दुकूल, अनुपम अनुराग मूल,
सौरभयुत शीत अनिल मन्द गामिनी ॥३॥

किसलय दल रचित शैन, बोलत पिय चाटु बैन,
मान सहित प्रतिपद प्रतिकूल कामिनी ॥४॥

मोहन मन मथत मार, परसत कुच-नीवी-हार,
वेपथयुत नेति-नेति बदत भामिनी ॥५॥

नरवाहन प्रभु सुकेलि, बहुविधि भर भरत झेलि,
सौरत रस रूप नदी जगत-पावनी ॥६॥

भूमिका:—ये दो पद श्रीहिताचार्य ने अपने शिष्य नरवाहनजी को प्रदान किये हैं और उन्हीं के नाम का 'भोग' इन पदों में दिया है। सर्वत्र शिष्यों ने गुरु को पद भेंट किये हैं और इसके अनेक उदाहरण विद्यमान हैं किन्तु हितप्रभु ने ये पद अपने शिष्य को भेंट किये हैं और इसका कोई उदाहरण कहीं भी नहीं है। जिस प्रीति से प्रेरित होकर श्रीहिताचार्य ने यह अद्भुत कार्य किया है वह इन पदों में मूर्तिमती हो रही है। यही कारण है कि पिछले पाँच सौ वर्षों में यह दोनों पद रसिकजनों का अत्यन्त उपकार करते रहे हैं और उनके चित्त में श्रीश्यामाश्याम के अद्भुत रूप-सौन्दर्य एवं उनकी अनुपम प्रेम-केलि का अनायास स्फुरण कराते रहे हैं। इनमें से प्रथम पद में श्रीश्यामाश्याम की श्रृङ्गार-केलि का वर्णन किया गया है और दूसरे में रास का। इस प्रकार यह दोनों मिलकर रास-विलास का वर्णन पूर्ण बना देते हैं।

व्याख्या:—**परम रम्य श्रीवृन्दावन का कुञ्ज देश है। रस स्वरूप श्रीराधा-हरि स्वच्छ एवं देदीप्यमान वस्त्र धारण किये हुये हैं एवं** (नवीन रस का उद्दीपन करने वाली) **पूर्णचन्द्र से मंडित शरद की रात्रि है ॥१॥**

CC-0. Shri Vipin Kumar Col. Deoband. In Public Domain.

Digitized by Madhuban Trust, Delhi

साँवल कांति वाले श्रीश्यामसुन्दर एवं कनक के समान गौर अंग वाली श्रीराधा एक दूसरे से मिलकर विहार कर रहे हैं। उनको देखकर ऐसा मालुम होता है मानौ[1] नील वर्ण के मेघ के मध्य में दामिनी सुशोभित है ॥२॥

परस्पर अनुपम अनुराग के मूल कारण रूप अरुण-पीत वर्ण के नवीन वस्त्र दोनों ने धारण कर रखे हैं। (अर्थात् श्रीराधा ने अरुण वर्ण की ओढ़नी और श्रीश्यामसुन्दर ने पीताम्बर धारण कर रखा है और सौरभ युक्त शीतल पवन मंद-मंद बह रहा है।)

(नित्य विहार-रस के रसिकजनों के अनुसार श्रीश्यामाश्याम सदैव प्रथम मिलन के सुख का ही उपभोग करते हैं। ध्रुवदासजी ने कहा है कि ये दोनों अनादिकाल से विहार कर रहे हैं किन्तु अभी तक एक दूसरे को पहिचान नहीं पाये हैं:—

न आदि न अंत विलास करें,
दोऊ लाल प्रिया में भई न चिन्हारी।

प्रथम मिलन में एक दूसरे के वस्त्रों का स्पर्श मात्र भी परम सुखमय होता है। सहचरिसुखजी ने अपने झूला के प्रसिद्ध पद 'रच्यो है हिंडोलना माई वंशीवट की छाँह' में श्रीश्यामाश्याम की प्रथम मिलनमयी नवीन प्रीति की ओर संकेत करते हुए कहा है कि झूले पर विराजमान ये दोनों एक दूसरे के वस्त्रों के स्पर्श से पुलकित हो रहे हैं।

१—'नीरदमणि नील' के स्थान पर गोस्वामी श्रीरसिकलालजी की टीका में 'नीरद मनौ नील' पाठ है जो अधिक उपयुक्त लगता है। इस पंक्ति में उत्प्रेक्षा अलंकार है, 'मनौ' उत्प्रेक्षा वाचक शब्द है। सुकवियों की रचनाओं में, सामान्यतः, उत्प्रेक्षा वाचक शब्द के बिना उत्प्रेक्षा नहीं देखी जाती। लोकनाथजी की टीका में भी 'मनौ' पाठ है।

CC-0. Shri Vipin Kumar Col. Deoband. In Public Domain.

Digitized by Madhuban Trust, Delhi

तिय परसि पुलकत पीत पट,
पिय परसि सुन्दर चीर।

अरुण-पीत दुकूलों को अनुराग मूलता से श्रीहिताचार्य का यही तात्पर्य मालुम होता है।)॥३॥

परम मृदुल कपोलों के द्वारा रचित शैय्या पर श्रीश्यामाश्याम विराजमान हैं। प्रियतम श्रीश्यामसुन्दर अपनी प्रिया की अनुकूलता प्राप्त करने के लिए उनसे खुशामद के वचन बोल रहे हैं और श्रीप्रिया मान सहित अपनी प्रत्येक क्रिया में प्रतिकूलता प्रदर्शित कर रही हैं ॥४॥

(एक ओर तो मदन के मन को मोहित करने वाले) मोहन के मन का (श्रीराधा की भृकुटि से उत्पन्न) अनंग मथन कर रहा है और वे श्रीराधा के कुच, नीवी एवं हार का स्पर्श कर रहे हैं। दूसरी ओर (प्रियतम के द्वारा शरीर में स्थित रस-केन्द्रों के स्पर्श से श्रीराधा के मन में रस-समुद्र उमड़ पड़ा है और उसके भार से) श्रीराधा का अंग कंपयुक्त बन गया है और वे मुख से नेति-नेति (नहीं-नहीं) शब्द बोल रही हैं।

(प्रेम के अन्तर्गत दो या तीन परस्पर विरोधी भावों का एक साथ उन्मीलन हृदय को मथित करके शरीर में कंप उत्पन्न कर देता है। यहाँ प्रियतम के प्रेम की सहज स्वीकृति के साथ स्वभावगत वामता के द्वारा प्रेरित अस्वीकृति ने मिलकर श्रीराधा के अंगों में कंप की सृष्टि की है ॥५॥

श्रीनरवाहन कहते हैं कि मेरे प्रभु श्रीश्यामाश्याम की इस सुन्दर केलि में प्रेम सम्भार को एक - दूसरे के हृदय में अनेक प्रकार से भरते हैं और झेलते हैं, इस दिव्य प्रेम केलि में से प्रवाहित होने वाली श्रृङ्गार-रस की सरिता संसार को पवित्र करने वाली होती है।

CC-0. Shri Vipin Kumar Col. Deoband. In Public Domain.

('बहुविधि भर भरत झेलि' में श्रीहिताचार्य ने रस-केलि के स्वरूप को स्पष्ट किया है । जब दो प्रेमी अपनें मन में पूरित अगाध प्रेम-संभार को परस्पर भरने और झेलनें की चेष्टा करते हैं तब प्रेम के इस घात-प्रतिघात से शृङ्गार-केलि की सृष्टि होती है । यहाँ श्रीश्यामघन अपनी चाटूक्तियों के द्वारा एवं श्रीराधा के अंग-स्पर्श द्वारा अपनें हृदय में भरे हुए अगाध प्रेम को उनके हृदय में संचरित करते हैं और श्रीराधा उसको झेलकर कंप के द्वारा एवं नेति-नेति वचनों के द्वारा अपनें हृदय में उमड़े हुए रससागर को अपने प्रियतम के हृदय में भरती हैं । श्रीश्यामाश्याम की यह परम सुखमयी प्रेम केलि अनादि-अनन्त रूप से चलती रहती है) ।।६।।

[१२]

चलहि राधिके सुजान, तेरे हित सुख निधान,
रास रच्यौ श्याम तट कलिंद नंदिनी ।।१।।
निर्तत युवती समूह राग-रंग अति कुतूह,
बाजत रसमूल मुरलिका अनन्दिनी ।।२।।
वंशीबट निकट जहाँ, परम रवन भूमि तहाँ,
सकल सुखद मलय बहै वायु मन्दिनी ।।३।।
जाती ईषद विकास, कानन अतिसय सुवास,
राका निशि सरद मास विमल चंदिनी ।।४।।
नरबाहन प्रभु निहार, लोचन भरि घोष नारि,
नख-सिख सौंदर्य्य काम-दुख निकन्दिनी ।।५।।
बिलसहु भुज ग्रीव मेलि, भामिनी सुख-सिंधु झेलि,
नव निकुञ्ज श्याम केलि जगत-बन्दिनी ।।६।।

CC-0. Shri Vipin Kumar Col. Deoband. In Public Domain.

भूमिका :—यह रास का पद है। इसकी विलक्षणता यह है कि जहाँ श्रीमद्भागवत में वर्णित रास में श्रीश्यामसुन्दर के वंशीनाद से आकृष्ट होकर श्रीराधिका आदिक गोपीजन उनके समीप पहुँचती हैं, वहाँ इस रास की सृष्टि श्रीश्यामसुन्दर केवल श्रीराधा के हित के लिए अर्थात् उनको सुख देने की कामना से प्रेरित होकर करते हैं, अन्य युवतिजन तो पहिले से ही उनके साथ रास-नृत्य में प्रवृत्त हैं।

दूसरी बात यह है कि इस रास में श्रीश्यामघन के मुरलीनाद से आकृष्ट होकर श्रीराधा स्वयं उनके निकट नहीं पहुँचतीं। सहचरी को उनके पास जाकर रास एवं वंशीनाद की सूचना देनी पड़ती है और उनके हृदय में रस का उद्दीपन करना पड़ता है तब कहीं वे रास में सम्मिलित होने को उद्यत होती हैं। श्रीहित सहचरी की रास में पधारने की प्रार्थना से यह पद आरंभ होता है :—

व्याख्या :—**हे सुख निधान एवं प्रवीण राधिके, आपको सुख देने के लिये श्यामसुन्दर ने कलिन्द-नन्दिनी श्रीयमुनाजी के तट पर रास की रचना की है ॥१॥**

(अब सखी श्रीराधा के मन में रस उद्दीपन करती हुई कहती हैं कि) **उक्त रास में युवतियों का समूह नृत्य कर रहा है जिसके कारण अत्यन्त आश्चर्यमय राग-रंग की सृष्टि हो रही है और उसके साथ आनन्दमय रस की मूल मुरलिका बज रही है।**

(प्रसिद्ध रास का आरम्भ वेणुनाद से हुआ था और उसके माध्यम से ही स्थावर-जंगम ने रसानुभूति की थी, इसलिये यहाँ मुरलिका को रस मूल कहा गया है ॥२॥

वंशीबट के निकट जहाँ रास-रस के योग्य परम रमणीय भूमि है, त्रिविध पवन बह रहा है।

Digitized by Madhuban Trust, Delhi

('सकल सुखद' से शीतल, 'मलय' से सुगन्धयुक्त और 'मन्दिनी' से मंद का ग्रहण करके त्रिविध पवन का बोध होता है) ॥३॥

जाती (चमेली) के थोड़ी सी विकसित होनें के कारण श्रीवृन्दावन अतिशय सुवास युक्त हो रहा है । पूर्णिमा की रात्रि है, शरद मास है और निर्मल चाँदनी खिल रही है ॥४॥

नरवाहन सखी श्रीश्यामसुन्दर से कहती हैं कि हे मेरे प्रभु, मैंने जिन प्रिया को इस समय रास में प्रवृत्त किया है उनका दर्शन आप लोचन भरके कर लीजिये । यह नख-शिख से सुन्दर एवं आपकी प्रेम-वेदना को शमन करनें वाली हैं ॥५॥

(पुनः श्रीराधा से निवेदन किया कि) हे भामिनी, आप अपनें प्रियतम के कंठ में भुजा डालकर रास-विलास करो और उससे उत्पन्न सुख-सिन्धु का उपभोग करो । आप दोनों की नव निकुञ्ज की शृङ्गार मयी केलि जगत के द्वारा वन्दनीय है अर्थात् इस केलि के द्वारा जगत का परम उपकार होगा ॥६॥

[१३]

नन्द के लाल हरयौ मन मोर ॥१॥
हौं अपने मोतिन लर पोवत,
काँकर डारि गयो सखी भोर ॥२॥
बंक विलोकन चाल छबीली,
रसिक सिरोमनि नन्द किसोर ॥३॥
कहि कैसे मन रहत श्रवन सुनि,
सरस मधुर मुरली की घोर ॥४॥

CC-0. Shri Vipin Kumar Col. Deoband. In Public Domain.

Digitized by Madhuban Trust, Delhi

इन्दु गोविन्द वदन के कारन,
चितवन कौं भये नैन चकोर ।।५।।
जै श्रीहित हरिबंश रसिक रस जुवती,
तू लै मिल सखी प्रान अकोर ।।६।।

भूमिका :—यह पद पूर्वराग का है और इसमें श्रीराधा के हृदय में प्रेम के उन्मीलन का वर्णन है। प्रश्न यह उठता है कि नित्य-विहार में पूर्वराग कैसा ? नित्य प्रीति में प्रीति का आरम्भ कैसा ? इसका उत्तर यह है कि श्रीश्यामाश्याम का प्रेम नित्य होने के साथ नित्य नवीन भी है और इसीलिए रसिकजनों को उसका नित्य नूतन आस्वाद होता रहता है। नित्य-नवीन वही होता है जिसका नित्य नवीन रूप में आरम्भ हो। इसके संबंध में ध्रुवदासजी ने 'नित्य ही नित्य विहार करें' यह परस्पर विरोधी बात कही है जिसका अर्थ यह है कि श्यामाश्याम का नित्य-विहार प्रतिदिन नवीन रूप से आरम्भ होता है। इसीलिए हित चौरासी के अनेक पद 'आज' शब्द से आरम्भ होते हैं।

श्रीध्रुवदास की 'ब्रजलीला' इसी पद पर आधारित है और इसमें वर्णित पूर्वराग का ही चित्रण उसमें हुआ है।

त्रिभुवन मोहन श्यामघन के अनायास दर्शन से श्रीराधा के हृदय में प्रीति का सहज उन्मेष हो जाता है और वे उसी प्रीति से उत्पन्न व्याकुलता का वर्णन अपनी कृपापात्र श्रीहित सहचरी से करती हुई कहती हैं :—

व्याख्या :—**हे सखी, नन्द के लाल नें मेरा मन हरण कर लिया है ।।१।।**

आज सबेरे जब मैं अपनें मोतियों की लड़ पो रही थी तब वह (मेरा ध्यान अपनी ओर आकृष्ट करने के लिए) **मेरे मोतियों में कंकड़ डाल गया।**

CC-0. Shri Vipin Kumar Col. Deoband. In Public Domain.

Digitized by Madhuban Trust, Delhi

(प्रेमोदय का यह बड़ा मार्मिक वर्णन है । हृदय में किसी के प्रति प्रेम उत्पन्न होते ही मनुष्य की आत्म-निष्ठता में कंकड़ पड़ जाता है और उसकी सारी वृत्तियाँ अपनपे से हटकर प्रेम-पात्र में केन्द्रित हो जाती हैं । 'भोर' शब्द से यौवनोदय काल व्यंजित होता है क्योंकि जीवन के माधुर्य का भोर वही होता है और श्रीश्यामाश्याम में यौवनोदय के आरम्भ में ही परस्पर-प्रेम संचार प्रसिद्ध है) ।।२।।

(श्रीनन्दकिशोर के जिन अद्भुत गुणों से श्रीराधा का मन उनकी ओर आकृष्ट हुआ, अब उनका वर्णन करती हैं ।)

हे सखी, उनकी चितवन बाँकी थी और चाल छबीली थी जिनको देखकर मुझे उनके रसास्वादी प्रेमियों में शिरोमणि होने का आभास मिल गया ।।३।।

उन्होंने मुरली में उच्च स्वर से सरस और मधुर प्रेम-गान आरम्भ कर दिया जिसको सुनकर तू ही बता; कौन अपने मन को हाथ में रख सकता है ? ।।४।।

हे सखी, (इन सब बातों का परिणाम यह हुआ कि) श्रीगोविन्द के मुख-चन्द्र के दर्शन के लिए मेरे नेत्र चकोर की भाँति आतुर बन गये हैं ।।५।।

(श्रीराधा को अत्यन्त अधीर देखकर श्रीहरिवंश सखी ने उनसे निवेदन किया कि) हे स्वामिनी, आप रस-स्वरूपा तो हैं हीं किन्तु इसके साथ प्रेम-पंथ की मर्मज्ञ रसिक भी हैं । (आपकी प्रेम-पीड़ा को दूर करने के लिए मैं आपको क्या उपाय बताऊँ ? किन्तु मुझसे यह देखा नहीं जाता, अतः मेरी प्रार्थना है) कि आप अपने प्रियतम को अपने प्राणों की भेंट देकर उनसे मिलें अर्थात् प्रियतम पर अपना सर्वस्व न्यौछावर करके उनको अपने अधीन बनावें ।।६।।

CC-0. Shri Vipin Kumar Col. Deoband. In Public Domain.

Digitized by Madhuban Trust, Delhi

[१४]

अधर अरुन तेरे कैसे कै दुराऊँ।
रवि ससि संक भजन कियौ अपवस,
अद्भुत रंगन कुसुम बनाऊँ।
सुभ कौसेय कसिब कौस्तुभमनि,
पंकज - सुतन लै अंगनि लुपाऊँ।
हरखित इन्दु तजत जैसे जलधर,
सो भ्रम ढूँढि कहाँ हौं पाऊँ।
अम्बुन दम्भ कछू नहीं व्यापत,
हिमकर तपै ताहि कैसे कै बुझाऊँ।
जै श्रीहित हरिवंश रसिक नवरंग पिय,
भृकुटि भौंह तेरे खंजन लराऊँ।

(बहुत विचार करने के बाद भी हम प्रस्तुत पद की अर्थ-संगति नहीं लगा पाये हैं अतः इसका मूल मात्र देखकर सन्तोष करना पड़ा है। जो सज्जन इसका अर्थ देखना चाहें वे प्रेमदासजी की प्रकाशित टीका में देख लें)

[१५]

अपनी बात मोसौं कहि री भामिनी,
औंगीमौंगी रहत गरब की माती ॥१॥
हौं तोसौं कहत हारी, सुनिरी राधिका प्यारी,
निशि को रंग क्यों न कहत लजाती ॥२॥

CC-0. Shri Vipin Kumar Col. Deoband. In Public Domain.

Digitized by Madhuban Trust, Delhi

गलित कुसुम बैनी, सुनिरी सारंग - नैनी,
छुटी लट अचरा बदत अलसाती ॥३॥
अधर निरंग, रंग रच्यौरी कपोलन,
जुवति चलत गजगति अरुझाती ॥४॥
रहसि रमी छबीले, रसन बसन ढीले,
शिथिल कसन कंचुकी उर राती ॥५॥
सखी सौं सुनि श्रवन वचन,
मुदित मन चली हरिवंश भवन मुसकाती ॥६॥

भूमिका :—यह सुरतांत का पद है । चौरासीजी के अनेक पदों में सुरतांत का वर्णन है और वे सब श्रीराधा को संबोधन करके कहे गये हैं । सखियाँ परस्पर भी इस अद्भुत छबि का वर्णन कर सकती थीं किन्तु सदैव श्रीप्रिया के सामने ही उनकी सुरतांत छवि का वर्णन करने का हेतु यह मालुम होता है कि उनकी इस छवि में उनके अद्भुत सुहाग एवं उनके प्रति उनके प्रियतम के अगाध प्रेम की व्यंजना होती है । अपने सुहाग का इतना सरस वर्णन सुनकर श्रीप्रिया का प्रसन्न होना स्वाभाविक है और उनकी प्रसन्नता ही सखियों का सर्वस्व धन है । इसीलिये वे बार-बार उनके सामने उनकी छवि का वर्णन करती हैं ।

दूसरी बात यह है कि सखियाँ श्रीश्यामाश्याम की शृङ्गार-केलि का पूर्ण रसास्वाद करने के लिए उनके अधिक से अधिक निकट रहना चाहती हैं । श्रीराधा सहज सलज्ज हैं और प्रियतम के साथ अपनी रस-केलि को सखियों के आगे प्रकट होने देने में संकोच करती हैं । सखियाँ अपने और प्रिया के बीच में उस संकोच को रहने नहीं देना चाहतीं और उनके सामने बार-बार उनकी प्रेम-केलि के चिन्हों को प्रकट करके उसको दूर करना चाहती हैं । इससे श्रीप्रिया का

CC-0. Shri Vipin Kumar Col. Deoband. In Public Domain.

Digitized by Madhuban Trust, Delhi

संकोच तो कुछ दूर तक दूर होता ही है सखियों के विदग्ध बचनों को सुनकर उनको बिनोद भी होता है और वह भी उनकी प्रसन्नता का कारण बनता है।

श्रीश्यामाश्याम ने सम्पूर्ण रात्रि श्रीवृन्दावन निकुंज मन्दिर में प्रेम-विहार में व्यतीत की है। सखियाँ अत्यन्त व्याकुलता पूर्वक अपनी स्वामिनी के दर्शन की प्रतीक्षा करती रही हैं और उनके मन में उनसे प्रेमालाप करने के अनेक मनोरथ उठते रहे हैं। प्रात: जब श्रीप्रिया निकुंज मन्दिर से बाहर पधारीं तो सखियों ने देखा कि वे गुमसुम हैं और किसी से कोई बात करने को तैयार नहीं हैं। सखियों को यह देखकर निराशा हुई और उन्होंने कातर दृष्टि से अपनी नायक श्रीहितरूपा सहचरो की ओर देखा। हित सजनी श्रीप्रिया के अत्यन्त निकट रहने वाली हैं। उन्होंने उनकी आज की छबि को देखकर समझ लिया कि वे इस समय अपने प्रियतम द्वारा किये गए दुलार के अथाह सागर में निमग्न हैं और थोड़े चातुर्यपूर्ण वार्तालाप से ही उनके मन की वृत्तियाँ बाहर की ओर लाई जा सकती हैं। अत: वे अपनी बात चोत उलाहने के रूप में आरम्भ करती हुई कहती हैं:—

व्याख्या :- **हे सुन्दरी, तुम अपने मन की बात मुझसे कहो। तुम (अपने प्रियतम के प्रेम में) इस प्रकार गर्व-मत्त हो रही हो कि किसी से कोई बात ही नहीं करतीं ॥१॥**

हे राधिका प्यारी, मेरी बात सुनो और यह बताओ कि तुम अपनी निकट सखीजनों से भी अपने प्रियतम के साथ रात्रि में हुये प्रेम-रंग का वर्णन करने में क्यों लज्जित हो रही हो? ॥२॥

(किन्तु यह प्रेम-रंग छिप सकने वाली वस्तु नहीं है) **हे मृग-नयनी, यह देखो, तुम्हारी फूलों से गुँथी हुई वेणी के फूल गलित हो रहे हैं, तुम्हारी लटें छूट रही हैं, वक्षस्थल पर से अंचल भी छुटा हुआ है और तुमको बोलनें में भी आलस्य मालुम दे रहा है ॥३॥**

CC-0. Shri Vipin Kumar Col. Deoband. In Public Domain.

Digitized by Madhuban Trust, Delhi

तुम्हारे अधर रंग-शून्य हो रहे हैं और कपोल रंग से रँगे हुए हैं। हे युवति, तुम्हारी गज जैसी चाल इस समय डगमगाई हुई है ॥४॥

तुम्हारी किंकिणी के निकट का वस्त्र (कटि वस्त्र) ढीला हो रहा है और तुम्हारे वक्षस्थल पर धारण लाल कंचुकी का बन्धन भी शिथिल है। (तुम्हारे इस अद्भुत वेष के कारण जो अनुपम छवि तुम्हारे अंगों में प्रकट हुई है वह स्पष्ट बता रही है कि) तुमने अपने छबीले प्रियतम के साथ एकान्त विहार किया है ॥५॥

श्रीहित हरिवंश कहते हैं कि सखी के मुख से यह चातुर्यपूर्ण वचन सुनकर श्रीराधा का मन मुदित हो गया और वे मुसकाती हुई शृङ्गार-कुञ्ज की ओर पधारीं ॥६॥

[१६]

आजु मेरे कहे चलौ मृगनैंनी ॥१॥
गावत सरस जुवति मंडल में,
पिय सौं मिलैं भलैं पिकबैंनी ॥२॥
परम प्रवीन कोक विद्या में,
अभिनय निपुन लाग - गति लैंनी ॥३॥
रूपरासि सुनि नवल किसोरी,
पल - पल घटत चाँदनी रैंनी ॥४॥
(जै श्री) हित हरिवंश चली अति आतुर,
राधारवन सुरत सुखदैंनी ॥५॥
रहसि रभस आलिंगन चुम्बन,
मदन कोटि कुल भई कुचैंनी ॥६॥

CC-0. Shri Vipin Kumar Col. Deoband. In Public Domain.

भूमिका:—श्रीराधा प्रेम की अत्यन्त गहन-गंभीर सागर हैं। इसके साथ ही वे संगीत, अभिनय, कला आदि की भी परावधि हैं। उनके प्रेम की गम्भीरता उनको अपनपे में सीमित और स्तब्ध रखना चाहती है और उनकी गुण-शालिता उनको चंचल और तरंगायित बनाना चाहती है। उनकी परस्पर विरोधी-सी दिखलाई देने वाली इन दो सहज वृत्तियों में जब जिसकी प्रधानता हो जाती है वही उस समय उनकी भाव-दशा बन जाती है।

इस पद में श्रीराधा मानवती नहीं हैं। इस समय इनकी प्रीति केवल अन्तर्मुख हो रही है और सखीगण एवं श्रीश्यामसुन्दर उनके मन को रास-विलास की ओर लाने के लिए सचेष्ट हैं। श्रीश्यामघन ने इसीलिए युवतीजनों के सहयोग से रासमंडल की रचना की है और हित सजनीजी को किसी भी प्रकार श्रीराधा को क्रीड़ा के लिए उद्यत करने के लिए उनके पास भेजा है। हित सजनी श्रीप्रिया की अन्तर्मुखता देखकर चकित हो जाती हैं और उनके मन को रास-विलासोन्मुख बनाने के लिए अपनपे का दवाब उनके ऊपर डालती हुई उनसे प्रार्थना करती हैं:—

व्याख्या:—**हे मृगनैनी, आज मेरे कहने से तुम अपने प्रियतम के पास चलो ॥१॥**

वे (तुम्हारी प्रसन्नता के लिए) युवतीजनों के मंडल की रचना करके उसमें सरस गान कर रहे हैं। हे कोकिल के समान कंठ वाली, तुम्हारे इस समय अपने प्रियतम के साथ मिलने से नृत्य-गान अनन्त गुणित सरस बन जायगा ॥२॥

तुम शृङ्गार रस की कलाओं में अत्यन्त प्रवीण, भाव-प्रदर्शन में निपुण, और नृत्य की विकट गतिओं को लेने वाली हो ॥३॥

हे रूप की राशि नवलकिशोरी, सुनो। देखो यह चाँदनी रात पल-पल घटती जा रही है।

Digitized by Madhuban Trust, Delhi

(तुम हो इसका उपभोग न करोगी तो कौन करेगा ? साथ ही चाँदनी के फीके पड़ जाने पर तुम्हारा यह अद्भुत रूप उसमें वैसा नहीं दमक पायेगा) ।।४।।

सखी भावापन्न श्रीहित हरिवंश कहते हैं कि राधारमण को सुरत सुख प्रदान करने वाली श्रीराधा अत्यन्त आतुर गति से अपने प्रियतम से मिलने के लिये चल दीं ।।५।।

श्रीराधा श्रीश्यामसुन्दर से एकान्त निकुञ्ज मन्दिर में मिलीं और वहाँ दोनों परस्पर प्रियतमों के वेग पूर्वक आलिंगन-चुम्बन को देखकर कोटि-कोटि मदन-कुल बेचैन बन गया, लज्जित हो गया ।।६।।

[१७]

आजु देख ब्रजसुन्दरी मोहन बनी केलि ।।१।।
अंस - अंस बाहु दै, किसोर जोर रूप रासि,
मनौ तमाल अरुझि रही सरस कनक बेलि ।।२।।
नव निकुंज भ्रमर गुंज, मंजु घोष प्रेम पुंज,
गानकरत मोर पिकन अपने सुरसौं मेलि ।।३।।
मदन मुदित अङ्ग-अङ्ग, बीच-बीच सुरत रंग,
पल-पल हरिवंश पिवत नैन चषक झेलि ।।४।।

भूमिका:—इस छोटे से पद में यह बात स्पष्ट होती है कि श्रीहिताचार्य की वाणी में रास और विलास सर्वथा भिन्न वस्तु नहीं है। उनके द्वारा वर्णित रास में विलास और विलास में रास है।

श्रीश्यामाश्याम श्रीवृन्दावन निकुंज मन्दिर में रास-विलास में मग्न हैं। सखी भावापन्न श्रीहित हरिवंश इस केलि का दर्शन कर रहे

CC-0. Shri Vipin Kumar Col. Deoband. In Public Domain.

Digitized by Madhuban Trust, Delhi

हैं और आनन्द विभोर होकर अपनी कृपापात्र सखियों को उसका दर्शन करने के लिए प्रेरित कर रहे हैं।

व्याख्या:—**हे सखी, आज देख ब्रज सुन्दरी श्रीराधा और मदनमोहन की प्रेम-केलि बनी है अर्थात् भली प्रकार फब गई है ॥१॥**

इस केलि में रूप की राशि यह नवकिशोर जोड़ी परस्पर अंसों पर बाहु रखकर ऐसी प्रतीत हो रही है, जैसे नव तमाल से कनक की सरस बेलि उलझ रही हो ॥२॥

नव निकुञ्ज में भ्रमरों की गुञ्जार से प्रेम का पुञ्ज मंजुल स्वर उत्पन्न हो रहा है और (इस स्वर को पृष्ठभूमि बनाकर सुघर शिरोमणि) **श्रीश्यामाश्याम मोर और कोयलों के स्वरों को अपने स्वर से मिलाकर गान कर रहे हैं।**

(श्रीराधा कोयल के स्वर को अपने स्वर में मिलाकर गान कर रही हैं और श्रीश्यामघन अपने स्वर को मोर के स्वर में मिलाकर गान कर रहे हैं । भ्रमर षडज में गुंजार करते हैं, कोयल पंचम में कूकती है और मोर निषाद में बोलते हैं । इस प्रकार श्रीश्यामाश्याम षडज के आधार पर पंचम और षड़ज में गान कर रहे हैं।)

(श्रीहिताचार्य की यह शैली है कि जिस राग में श्रीश्यामाश्याम गान करते होते हैं वे उनको उस लीला का वर्णन उसी राग में कर देते हैं। उदाहरण के लिए 'मोहनी मोहन रंगे प्रेम सुरंगे' वाला पद (सं० ६६) कल्याण राग में बँधा हुआ है और इस पद में जो लीला वर्णित है उसमें श्रीश्यामाश्याम कल्याण राग में ही गान कर रहे हैं।) ॥३॥

श्रीश्यामाश्याम के अंग-अंग में मदन मुदित हो रहा है (फूल रहा है) **और वे गान के बीच-बीच में सुरत रंग में प्रवृत्त हो रहे हैं।**

CC-0. Shri Vipin Kumar Col. Deoband. In Public Domain.

Digitized by Madhuban Trust, Delhi

(परस्पर आलिंगन-चुम्बन आदि कर रहे हैं) उनके इस प्रेम बिहार में जो अद्भुत रस उत्पन्न हो रहा है, श्रीहरिवंशचन्द्र कहते हैं, उसको मैं अपने नेत्रों का पान-पात्र बनाकर क्षण-क्षण में पान करता रहता हूँ ॥४॥

[१८]

सुनि मेरो बचन छबीली राधा,
तैं पायौ रससिंधु अगाधा ॥१॥
तू वृषभानु गोप की बेटी,
मोहन लाल रसिक हँसि भेटी ॥२॥
जाहि बिरंचि उमापति नाये,
तापै तैं बन - फूल बिनाये ॥३॥
जो रस नेति - नेति श्रुति भाख्यौ,
ताकौ तैं अधर सुधारस चाख्यौ ॥४॥
तेरौ रूप कहत नहीं आवै,
(जैश्री) हित हरिवंश कछुक जस गावै ॥५॥

भूमिका:—श्रीवृन्दावन की आनन्द-कुंज में श्रीप्रियालाल प्रेम-शैय्या पर विराजमान हैं । आज प्रियतम ने वन में से फूल बीनकर स्वयं आभूषणों की रचना की है और श्रीप्रिया के अंगों में धारण कराकर उनकी अद्भुत छवि निहार रहे हैं । श्रीहित सजनी दोनों के प्रेम-रूप का दर्शन करती हुई आनंद मग्नता में दोनों पर पंखा झल रही हैं । प्रियतम ने श्रीप्रिया का दर्शन करते हुए हित सजनीजी की ओर देखा और उनसे कहा कि आप श्रीप्रिया की आज की छवि का

CC-0. Shri Vipin Kumar Col. Deoband. In Public Domain.

Digitized by Madhuban Trust, Delhi

वर्णन करें। श्रीराधा ने जब यह बात सुनी तब वह बोलीं कि हित-सजनीजी मेरा यश-गान तो सदैव करती ही रहती हैं, मैं यह चाहती हूँ कि आज वे प्रियतम का यश गान करें। इसको लेकर दोनों ही अपनी बात का आग्रह करने लगे। श्रीहित सजनी के दोनों ही प्राण हैं और दोनों की प्रसन्नता में ही उनकी प्रसन्नता है। उन्होंने मुसकराकर प्रीतम की ओर देखा और अत्यन्त विदग्धता पूर्वक अपनी स्वामिनी को सम्बोधन करती हुई बोलीं:—

व्याख्या:—**हे छबीली राधा, मेरे वचनों को सुनिये।** (संकेत यह है कि तुम अन्यथा न समझना मैं तुम्हारी आज्ञा का भी यथाशक्ति पालन करने की चेष्टा करूँगी) **हे प्रिया, तुमने रस के अगाध सिन्धु प्रियतम पाये हैं ॥१॥**

तुम वृषभानु गोप की बेटी हो और गोपकुमार मोहनलाल ने तुमसे उमंग कर प्रीति की है।

(व्यंजना यह है कि तुम दोनों के कुल-शील समान हैं और परस्पर प्रेम के उपयुक्त हैं) ॥२॥

(अब दोनों में श्रीराधा की विशिष्टता का वर्णन करते हुए बोले कि) **जिन मोहनलाल को शिव और ब्रह्मा नमन करते हैं वे तुम्हारे प्रसाधन के लिए वन में घूमकर पुष्प-चयन करके लाते हैं।**

जिस रस के वर्णन करने में श्रुतियाँ अपने को सर्वथा असमर्थ पाती हैं और केवल नेति-नेति कहकर संकेत भर करती हैं उस श्रुति दुर्लभ रस के अधरामृत का पान तुमने किया है ॥४॥

सखी भावापन्न श्रीहित हरिवंश कहते हैं कि हे प्रिया, तुम्हारे रूप का सम्पूर्ण कथन असम्भव है। मैं तो (तुम्हारी कृपा से और तुम्हारे प्रियतम की प्रसन्नता के लिए) **उसका कुछ यशगान मात्र करता हूँ ॥५॥**

CC-0. Shri Vipin Kumar Col. Deoband. In Public Domain.

Digitized by Madhuban Trust, Delhi

[१९]

खेलत रास रसिक ब्रज - मंडन,
जुवतिन अंस दिये भुज दंडन ॥१॥
सरद विमल नभ चन्द्र विराजै,
मधुर - मधुर मुरली कल बाजै ॥२॥
अति राजत घनश्याम तमाला,
कंचन - बेलि बनी ब्रजबाला ॥३॥
बाजत ताल मृदंग उपंगा,
गान मथत मन कोटि अनंगा ॥४॥
भूषन बहुत विविध रंग सारी,
अंग सुधंग दिखावत नारी ॥५॥
बरसत कुसुम मुदित सुरयोषा,
सुनियत दिवि दुंदुभि कल घोषा ॥६॥
(जै श्री) हित हरिबंश मगन मन श्यामा,
राधारवन सकल सुख धामा ॥७॥

भूमिकाः—प्रस्तुत पद में श्रीहित हरिवंशचन्द्र ने ब्रज के रास का अपने ढंग से वर्णन किया है। इस पद में तथा इस प्रकार के हित चौरासी के अन्य कई पदों में प्रश्न यह उठता है कि श्रीहिताचार्य ने सम्पूर्णतया निकुंजोपासक एवं निकुंजोपासना के स्थापक होते हुए भी अपने इन पदों में ब्रज के रास का वर्णन क्यों किया है ? हित चौरासी के टीकाकारों के सामने यह प्रश्न सदैव खड़ा रहा है और इससे बचने के लिए इन लोगों ने अपनी टीकाओं में इन पदों के निकुंज-परक अर्थ लगाने की चेष्टा की है । फिर भी प्रश्न तो ज्यों का त्यों

CC-0. Shri Vipin Kumar Col. Deoband. In Public Domain.

Digitized by Madhuban Trust, Delhi

बना ही रहता है कि जिन पदों के खींच तान कर निकुंज-परक अर्थ लगाये जाँय ऐसे पदों की रचना श्रीहिताचार्य ने क्यों की ? इस ग्रन्थ में निकुंज-लीला का सीधा वर्णन करने वाले जैसे उनके अन्य पद हैं उसी भाँति से इन पदों की रचना उन्होंने क्यों नहीं की ?

इन प्रश्नों का सम्यक् उत्तर तभी मिल सकता है कि जब हम अपना कोई अभीष्ट अर्थ इन पदों पर लादने की चेष्टा न करके रसिक शिरोमणि श्रीहरिवंशचन्द्र की रस-दृष्टि को समझने की चेष्टा करें और उसको समझ कर उसके अनुकूल अपना दृष्टिकोण बनावें।

श्रीहिताचार्य श्रीराधा चरणों की प्रधानता स्थापित करने के लिए संसार में अवतरित हुए थे । परकीया भाव इस प्रधानता में बाधक है अत: उन्होंने श्रीराधा को स्वकीया रूप में स्वीकार किया। ब्रज के रास में श्रीराधा, पुराणों के अनुसार, परकीया हैं अत: श्रीहिताचार्य का पहिला कार्य यह था कि वे इस रास में श्रीकृष्ण की स्थापना राधापति के रूप में करें और इसको श्रीराधा की प्रसन्नता के लिए की हुई श्रीराधा पति की लीला घोषित करें। प्रस्तुत पद में तो उन्होंने श्रीश्यामसुन्दर के लिए 'राधारमण' शब्द प्रयुक्त किया है जिससे यह बात उतनी स्पष्ट नहीं होती किन्तु 'आज बन नीको रास बनायौ' पद के अन्त में उन्होंने रासलीला को 'राधापति' की लीला बतलाया है–'हित हरिवंश रसिक राधापति जस वितान जग छायौ'। इसी प्रकार 'आज गोपाल रास-रस खेलत' वाले पद में मदन गोपाल अनन्त गोपियों के साथ रास खेलते हैं किन्तु उनकी 'मदन घन पीर' का अपनोदन श्रीश्यामा ही करती हैं।

आज निकुंजोपासक चाहे इसको स्वीकार करें या न करें किन्तु नित्य विहार की उपासना की प्रेरणा श्रीमद्भागवत में वर्णित रास-लीला से मिली है । भक्ति के क्षेत्र में रसोपासना की दिशा बताने वाली यह लीला ही है। इस लीला में प्रेम-रस का जो स्वरूप सामने आया उसी का परिष्कार करके एवं उसकी त्रुटियाँ दूर करके

CC-0. Shri Vipin Kumar Col. Deoband. In Public Domain.

निकुंजोपासना खड़ी हुई। निकुंजोपासना के निर्माण की इस प्रारम्भिक प्रक्रिया और हमारे बीच में लगभग पाँच सौ वर्ष का अन्तर पड़ चुका है अतः इसको समझने में हमको कठिनाई होती है। हमको तो निकुंजोपासना का तैयार किया हुआ रूप मिला है अतः इसको तैयार करने वालों की प्रारम्भिक कठिनाइयों को हम नहीं समझ पाते।

नित्य विहार के प्रारम्भिक प्रचारकों में, चाचा वृन्दावन-दासजी ने, चार महानुभावों के नाम मुख्य बतलाये हैं—गोस्वामी श्रीहित हरिवंशजी, श्रीस्वामी हरिदासजी, श्रीहरिराम व्यासजी और श्रीप्रबोधानन्दजी। इनमें से श्रीहितजी महाराज, श्रीव्यासजी और श्रीप्रबोधानन्दजी की रचनाओं में श्रीमद्भागवत में वर्णित रास से लेकर नित्य विहार की उपासना तक का विकास क्रम दिखलाई देता है। श्रीस्वामीजी की वाणी में नित्य विहार का तैयार रूप सामने आता है।

इस विकास के प्रथम-चरण का उल्लेख ऊपर किया जा चुका है, जिसमें श्रीश्यामसुन्दर को राधापति के रूप में स्थापित किया गया है। विकास का दूसरा चरण 'मोहन मदन त्रिभंगी' पद में दिख-लाई देता है। इस पद में श्रीहिताचार्य ने बंशीवट के रास का वर्णन किया है किन्तु उसमें से अन्तर्धान का प्रसंग छोड़ दिया है। नित्य विहार की रस-पद्धति में स्थूल विरह स्वीकार नहीं किया गया है और उसकी नींव इस पद में रख दी गई है।

इस रास में श्रीश्यामसुन्दर अनन्त गोपियों के प्रेम-रस का पान मधुकर-रूप में करते हैं। नित्य विहार में किसी गोपी या उनके भाव का प्रवेश नहीं है। वहाँ केवल श्रीश्यामाश्याम की लीला है अतः हित चौरासी के एक पद 'प्रीति की रीति रंगीलोई जानै' में मधुकर के प्रेम को नश्वर बताया गया है और यह निर्देश दिया गया है कि नित्य विहार में श्रीश्यामसुन्दर को, अनेक गोपियों का रस ग्रहण करने

CC-0. Shri Vipin Kumar Col. Deoband. In Public Domain.

Digitized by Madhuban Trust, Delhi

वाले, मधुकर के रूप में ग्रहण न करके श्रीराधा चरणों के अनन्य मधुकर के रूप में ग्रहण करना चाहिए।

विकास का तीसरा चरण 'श्याम संग राधिका रास मंडल बनी' पद में दिखलाई देता है। इसमें श्रीहिताचार्य ने दो मंडलों की स्थापना की है—अंतरंग और बहिरंग। बाहर के मंडल में दो गोपियों के बीच में एक नन्दलाल के क्रम से नृत्य हो रहा है और अन्दर के मंडल में नन्दलाल और चम्पक बरनी बाल श्रीराधा नृत्य कर रहे हैं। श्रीहितजी महाराज ने बाहर के मंडल का संकेत भर करके इस पद में अंतरंग मंडल में स्थित श्रीप्रियालाल के नृत्य-विलास का वर्णन किया है और इससे यह भी स्पष्ट कर दिया है कि अपनी उपासना इस अन्तरंग मंडल के रास-विलास की है।

इस विकास क्रम को देखने से दो बातें स्पष्ट होती हैं। एक तो यह कि, जैसा हम ऊपर कह चुके हैं, नित्य विहार की उपासना का मूल स्रोत वंशीवट का रास है। इसी का परिष्कार करके निकुञ्ज लीला का राग-रंग खड़ा हुआ है। दूसरी बात यह है कि व्रज और निकुञ्ज में श्रीराधा-श्यामसुन्दर एक ही हैं। दोनों में भेद लीला का और भाव का है। दोनों जगह है प्रेम लीला ही किन्तु प्रेम का स्वरूप दोनों जगह भिन्न है और इस भिन्नता को लेकर दोनों जगह की लीला भिन्न बनी हुई है। लीला की भिन्नता के कारण प्रेम स्वरूप श्रीश्यामाश्याम भी दोनों जगह भिन्न-से दिखलाई देते हैं। किन्तु दो भिन्न प्रकाशों में दीखने वाला प्रेम जिस प्रकार मूलतः एक है उसी प्रकार दो भिन्न प्रकार के भावों का प्रकाश करने वाले श्रीश्यामा-श्याम भी एक हैं। इनको दो मानने से कई ऐसी कठिनाईयाँ पैदा होती हैं जिनका उत्तर दायित्व—पूर्ण ढंग से नहीं दिया जा सकता।

पहली कठिनाई तो यह होगी कि भगवद्‌रूप दो हो जायेंगे जो किसी भी साधन मार्ग को, चाहे वह ज्ञान-मार्ग या भक्ति-मार्ग अथवा कर्म-मार्ग हो, अभीष्ट नहीं हो सकता। भक्त एक ही भगवद्-

CC-0. Shri Vipin Kumar Col. Deoband. In Public Domain.

Digitized by Madhuban Trust, Delhi

तत्व को जड़ चेतन, पुण्यात्मा-पापात्मा सभी में देखने की चेष्टा करता है और उसको पूर्ण शान्ति भी तभी मिलती है जब वह अपने इस प्रकार के भाव को सुदृढ़ बना लेता है अतः ब्रज और निकुञ्ज में दो भगवानों की कल्पना और उनमें ऊँच नीच देखना चपलता मात्र है। श्रुतियों से लेकर अब तक सभी साधकों का अनुभव है कि द्वितीय में भय है, निर्भयता एकत्व में है।

दूसरी कठिनाई यह होगी कि ब्रज के न मानने से श्यामा-श्याम का जन्म भी असिद्ध हो जायगा और यह बात प्रेमोपासना के लिए अत्यन्त घातक सिद्ध होगी। प्रेम की उपासना प्रकट रूपों पर आधारित है और जन्म के बिना प्रकट रूप कैसे सम्भव होगा? जन्म को छोड़कर अन्य किसी प्रकार से प्राकट्य माना जाय तो घोर ऐश्वर्य आ जायगा और माधुर्य नष्ट हो जायगा। कबीर दासजी ने यही किया था। उन्होंने दशरथ-पुत्र राम को न मानकर अजन्मा और निर्गुण राम को माना है। उसका परिणाम यह हुआ है कि स्वयं कबीर दास जी के परम प्रेमी-भक्त होते हुए भी उनके द्वारा स्थापित पंथ योग-मार्ग के बहुत निकट आ गया है।

अतः श्रीहिताचार्य द्वारा रचित रासलीला के ये पद सोद्देश्य हैं और इनकी रचना ऊपर बताये हुए हेतुओं की सिद्धि के लिए की गई है। इनके अर्थ को बदलकर उनको निकुञ्ज में लगाने की चेष्टा करने से श्रीहिताचार्य के वे हेतु दृष्टि से ओझल हो जाते हैं और उनके हार्द को समझने में कठिनाई होती है।

व्याख्या—**ब्रज के भूषण रसिक श्रीश्यामसुन्दर युवतीजनों के अंसों पर भुजा रखकर रास खेल रहे हैं ॥१॥**

शरद ऋतु के निर्मल आकाश में पूर्ण चन्द्र शोभायमान है और मधुर-मधुर मुरली नाद हो रहा है ॥२॥

CC-0. Shri Vipin Kumar Col. Deoband. In Public Domain.

Digitized by Madhuban Trust, Delhi

शरद चन्द्र के निर्मल प्रकाश में घनश्याम तमाल अत्यन्त सुशोभित हो रहे हैं और उनका आश्रय लिये हुए ब्रज बालायें श्याम तमाल से लिपटी हुई कंचन-बेलियों के समान शोभा पा रही हैं ॥३॥

मृदंग और उपंग में मधुर ताल बज रही है और श्रीश्याम-सुन्दर एवं ब्रज युवतीजन अद्भुत गान कर रहे हैं उसको सुनकर कोटि अनंगों के मन-मथित हो रहे हैं ॥४॥

युवतीजनों ने नाना रंगों की साड़ियाँ और अनेक भाँति के भूषण धारण कर रखे हैं और वे सुधंग नृत्य के विविध अंगों को दिखा रही हैं ॥५॥

इस अद्भुत रास को देखकर देवांगनायें प्रसन्न हो रही हैं और कुसुमों की वर्षा कर रही हैं। इसके साथ ही आकाश में दुंदुभी का मधुर घोष सुनाई दे रहा है ॥६॥

श्रीहितहरिवंश कहते हैं कि यह देखकर कि (उनके प्राण-पति) राधारमण (नृत्य-संगीत आदि) सम्पूर्ण सुखों के धाम हैं, श्रीश्यामा अपने मन में आनंदित हो रही हैं ॥७॥

[२०]

मोहनलाल के रसमाती ॥१॥

बधू गुपत गोवत कत मोसों, प्रथम नेह सकुचाती ॥२॥

देख सँभार पीत पट ऊपर, कहाँ चूनरी राती ॥३॥

टूटी लर लटकत मोतिन की, नख बिधु अंकित छाती ॥४॥

अधर-बिंब खंडित, मखि मंडित गंड, चलत अरुझाती ॥५॥

अरुन नैंन घूमत आलस जुत, कुसुम गलित लट पाँती ॥६॥

CC-0. Shri Vipin Kumar Col. Deoband. In Public Domain.

Digitized by Madhuban Trust, Delhi

आजु रहसि मोहन सब लूटी, विविध आपनी थाती ॥७॥
(जै श्री) हितहरिवंश वचन सुनि भामिनी,
भवन चली मुसकाती ॥८॥

भूमिका—इस पद में सुरतान्त छबि का वर्णन है। श्रीराधा अपने मनमोहन प्रियतम के साथ सम्पूर्ण रात्रि प्रेम-विहार में व्यतीत करने के बाद रसमत्त स्थिति में निकुञ्ज मन्दिर के आँगन में पधारी हैं। प्रियतम के साथ प्रथम समागम होने के कारण वे स्वभावतः अपनी सखियों से उसको छिपाने की चेष्टा कर रही हैं किन्तु श्रीअङ्ग पर सुरत चिन्हों के स्पष्टतः दृष्टि गोचर होने के कारण वे इस कार्य में तनिक भी सफल नहीं हो रही हैं। श्रीहित सजनी उनको साव-धान करने की दृष्टि से उनकी उस समय की अद्‌भुत छबि का वर्णन करती हुई कहती हैं—

व्याख्या—(हे स्वामिनी) आज तो आप अपने परम मोहन **प्रियतम के रस में मत्त हो रही हैं ॥१॥**

हे नववधू, आज आपनें अपनें प्रियतम के साथ प्रथम मिलन का गुप्त रूप से उपभोग किया है और इसीलिए आप सकुचा रही हैं किन्तु (मुझसे तो आप अत्यन्त निकटता मानती हैं अतः) **मुझसे गुप्त बात का भी गोपन नहीं होना चाहिए ॥२॥**

(यदि आप कहें कि मेरा प्रियतम से एकान्त में मिलन नहीं हुआ है और कोई गुप्त बात है ही नहीं जिसे मैं छिपाऊँ तो) **आप यह बताईये कि आपकी लाल चूनरी कहाँ है? उसके स्थान में आपने प्रियतम का यह पीतपट ओढ़ रखा है, इसे तो सँभालिये ॥३॥**

आपकी मोतियों की लड़ टूटकर लटक रही है एवं आपका वक्षस्थल नख चन्द्रों से चिन्हित हो रहा है ॥४॥

CC-0. Shri Vipin Kumar Col. Deoband. In Public Domain.

Digitized by Madhuban Trust, Delhi

आपके बिंबफल के समान अरुण अधर खंडित हो रहे हैं, आपके कपोल काजल से मंडित हैं एवं आप डगमगाती चाल से चल रही हैं ॥५॥

रात्रि जागरण के कारण अरुण बने हुये आपके नेत्र आलस्य से घूम रहे हैं एवं आपके केशों की लटें खुल रही हैं जिसके कारण इनमें गुंथे हुये फूल गलित हो रहे हैं ॥६॥

(नीचे की पंक्ति में प्रेम और सौन्दर्य के पारस्परिक सम्बन्ध को स्पष्ट किया गया है। प्रेमी में प्रेम की प्रधानता होती है और प्रेम-पात्र में सौन्दर्य की। प्रेम और सौन्दर्य का सम्बन्ध समुद्र और जल जैसा है। प्रेम के समुद्र में सौन्दर्य का जल भरा होता है अतः जहाँ प्रेम होता है वहाँ सौन्दर्य का होना अनिवार्य है। प्रेमी अपनी प्रेम पूर्ण दृष्टि के द्वारा प्रेम-पात्र में सौंदर्य का दर्शन करके अथवा यह कहिये कि प्रेम-पात्र में सौंदर्य का निक्षेप करके उसका उपभोग करता है। यदि सौन्दर्य परावधि श्रीराधा प्रेम-पात्र हों तो प्रेम परावधि श्रीश्यामघन के द्वारा उनको दी हुई सौन्दर्य की थाती से उनका रूप कितना अधिक वैभवशाली हो जायगा, इसकी कल्पना भी नहीं की जा सकती।) ऐसा मालुम होता है कि आज आपके परम मोहन प्रियतम ने एकान्त में आपके विविध अंगों को प्रदत्त अपनी सौन्दर्य-थाती (धरोहर) को भली प्रकार लूटा है। (उसका सम्यक् उपभोग किया है।) ॥७॥

सखी भावापन्न श्रीहितहरिवंश कहते हैं कि इन वचनों को सुनकर श्रीराधा मुसकाती हुई शृङ्गार भवन की ओर चल दीं ॥८॥

[२१]

तेरे नैंन करत दोऊ चारी ॥१॥
अति कुलकात समात नहीं,
कहुँ मिले हैं कुञ्जबिहारी ॥२॥

CC-0. Shri Vipin Kumar Col. Deoband. In Public Domain.

Digitized by Madhuban Trust, Delhi

बिथुरी माँग, कुसुम गिर-गिर परैं,
लटकि रही लट न्यारी ॥३॥
उर नख-रेख प्रगट देखियत हैं,
कहा दुरावत प्यारी ॥४॥
परी है पीक सुभग गंडन पर,
अधर निरंग सुकुमारी ॥५॥
(जै श्री) हित हरिवंश रसिकनी भामिनि,
आलस अँग - अँग भारी ॥६॥

भूमिकाः—इस पद में भी सुरतांत छबि का ही वर्णन है। सहचरियाँ इस प्रकार के प्रत्येक पद में श्रीराधा के प्रेम-मिलन को प्रकट करने के लिए उनके श्रीअंगों में व्यक्त किसी एक अनुभाव को पकड़ लेती हैं। इस पद में उन्होंने उनके नेत्रों से प्रकट होने वाले भाव को चुना है।

श्रीहितरूपा सहचरी श्रीराधा के अतिशय चंचल नेत्रों की ओर देखकर उनसे कहती हैं:—

व्याख्याः—(हे प्रिया) **आपके ये नेत्र आज आपकी चुगली कर रहे हैं।** (आपके होते हुए भी आपकी विरुद्धता कर रहे हैं।) ॥१॥

ये ऐसे प्रसन्न हो रहे हैं कि पलकों में भी नहीं समाते। मालुम होता है कि कुन्जबिहारी लाल कहीं एकान्त में आपसे मिले हैं ॥२॥

आपकी माँग अस्तव्यस्त हो रही है और आपके केशों में गुँथे हुए फूल टूटकर भूमि पर गिर रहे हैं। इसके साथ ही आपका केश-पाश इतना शिथिल हो गया है कि बालों की पतली लटें छूट-कर लटक रही हैं ॥३॥

CC-0. Shri Vipin Kumar Col. Deoband. In Public Domain.

Digitized by Madhuban Trust, Delhi

आपके वक्षस्थल पर प्रियतम के नख-चिन्ह स्पष्ट दिखलाई दे रहे हैं। हे प्रिया, इनको आप व्यर्थ में क्यों छिपा रही हो ? ॥४॥

प्रियतम की पीक आपके सुन्दर कपोलों पर लग रही है और आपके अधर रंग-शून्य हो रहे हैं ॥५॥

सखी भावापन्न श्रीहितहरिवंश कहते हैं कि हे रसिकनी सुन्दरी, आपके श्रीअंगों में सुरत-जनित अतिशय अलसान भरी हुई है।

(अलस सौंदर्य के प्रति रसिक समुदाय का अतिशय आकर्षण सुविदित है। श्रीराधा के समान अनिन्द्य, अनुपम एवं असीम सौन्दर्य के साथ आलस्य का योग उसके आकर्षण को स्वभावत: अनन्त गुणित कर देता है। इस सौंदर्य का वर्णन करने वाले प्रस्तुत पद की अंतिम पंक्ति में आलस्य का उल्लेख सौंदर्य की पराकोटि का निदर्शन करता है। यह आलस्य श्रीराधा की रसास्वाद-प्रवीणता का ही परिणाम हैं, इस बात को सूचित करने के लिए यहाँ उनको 'रसिकनी भामिनी' कहा गया है।) ॥६॥

[२२]

नैनन पर वारौं कोटिक खंजन ॥१॥
चंचल चपल अरुन अनियारे,
अग्रभाग बन्यौ अञ्जन ॥२॥
रुचिर मनोहर वक्र बिलोकन,
सुरत - समर दल गंजन ॥३॥
(जै श्री) हित हरिवंश कहत न बनै छबि,
सुख - समुद्र - मन - रंजन ॥४॥

भूमिका:—इस पद में श्रीराधा के नेत्रों का वर्णन है।

CC-0. Shri Vipin Kumar Col. Deoband. In Public Domain.

Digitized by Madhuban Trust, Delhi

श्रीहिताचार्य ने श्रीप्रिया की नेत्र-छबि का वर्णन हित चौरासी के कई पदों में किया है। प्रेम के क्षेत्र में नेत्रों का विशिष्ट स्थान है क्योंकि हृदय में स्थित प्रीति का सर्वाधिक प्रकाश इनके द्वारा ही होता है। प्रेम-क्रीड़ा में भी नेत्र सबसे प्रधान भूमिका का निर्वाह करते हैं। सौंदर्य के क्षेत्र में भी नेत्रों के सौंदर्य को महत्वपूर्ण माना जाता है क्योंकि अन्य अंगों की सुन्दरता इनके सुन्दर हुये बिना असिद्ध हो जाती है। श्रीराधा सर्वांग सुन्दरी हैं फिर भी उनकी अद्भुत सुन्दरता में उनके अनुपम नेत्रों का योगदान सबसे अधिक है। इस समय सहचरियों की दृष्टि उनके नेत्र-कमलों पर लगी हुई है। इससे पूर्व का 'तेरे नैन करत दोऊ चारी' वाला पद उन्होंने नेत्रों की शोभा के वर्णन से ही आरम्भ किया है किन्तु इस पद में तो वे केवल नेत्र-शोभा का ही कथन कर रही हैं।

व्याख्या:—(हे प्रिया) **आपके नेत्रों पर मैं करोड़ों खंजन न्यौछावर करता हूँ ॥१॥**

आपके नेत्र (नव यौवन के प्रवेश के कारण) **अतिशय चंचल होने के साथ** (प्रेमासव का पान करने के कारण) **लाली लिये हुए हैं और पैने हैं।** (नेत्रों को अनियारे बताकर प्रियतम का मर्म-भेदन करने की इनकी सहज सामर्थ्य का सूचन किया गया है) **इन नेत्रों के अग्रभाग में अंजन की पतली रेखा सदैव शोभायमान रहती है ॥२॥**

(रुचिर शब्द के दो अर्थ हैं-प्रकाशवान, और रुचि उत्पन्न करने वाला) **आपके ये नेत्र अद्भुत प्रकाश से मंडित हैं एवं आपके प्रियतम के चित्त में सदैव नवीन रुचि उत्पन्न करने वाले हैं। इसके साथ, वे प्रियतम के मन को हरण करने वाले हैं। इनकी चितवन सहज रूप से तिरछी है जिसके कारण ये नेत्र प्रेम-युद्ध में सदैव आपको विजयी बनाते रहते हैं ॥३॥**

सखी भावापन्न श्रीहित हरिवंश कहते हैं कि मुझसे इन नेत्रों

CC-0. Shri Vipin Kumar Col. Deoband. In Public Domain.

Digitized by Madhuban Trust, Delhi

की छबि कहते नहीं बनती। (मैं इससे अधिक और क्या कहूँ कि) नेत्र सुख-समुद्र के मन का रंजन करने वाले हैं।

(सामान्यतया सुन्दर नेत्रों को देखकर सभी का चित्त आनंदित होता है किन्तु आपके ये नेत्र तो सुख को भी सुखी बनाने वाले हैं, आनंद को भी आनंदित करने वाले हैं। आपके प्रियतम स्वयं सुख के सागर हैं और ये नेत्र उनके मन का रंजन करते हैं अर्थात् सुख को सुखी बनाते हैं ।।४।।

[२३]

राधा प्यारी तेरे नैंन सलोल ।।१।।
तैं निज भजन कनक तन जोवन,
लियो मनोहर मोल ।।२।।
अधर निरंग अलक लट छूटी,
रंजित पीक कपोल ।।३।।
तू रस मगन भई नहिं जानत-
ऊपर पीत निचोल ।।४।।
कुच युग पर नख रेख प्रगट मानों-
संकर सिर शशि टोल ।।५।।
(जै श्री) हित हरिवंश कहत कछु भामिनी,
अति आलस सों बोल ।।६।।

भूमिका:—इस पद में भी सुरतांत छबि का वर्णन है। श्री राधा अपने प्रियतम के साथ सुख-समुद्र में निमज्जन करके निभृत निकुञ्ज-मंदिर से बाहर पधारी हैं। उनके सुन्दर नेत्र असामान्य रूप से चंचल हो रहे हैं। उन्होंने रस विभोरता में अपने प्रियतम का

CC-0. Shri Vipin Kumar Col. Deoband. In Public Domain.

Digitized by Madhuban Trust, Delhi

पीत पट ओढ़ लिया है जो गौर वर्ण से मिल कर उसकी श्री वृद्धि कर रहा है। सखियों की छेड़छाड़ का उत्तर वे आलस्य भरे आधे-आधे वचनों से दे रही हैं। हित रूपा सहचरी उनको सम्बोधन करके उनकी उस अद्‌भुत छबि का वर्णन करती हुई कहती हैं—

व्याख्या:—हे राधा प्यारी, आज तुम्हारे नेत्र प्रसन्नता से अत्यन्त चंचल हो रहे हैं ॥१॥

तुमनें अपनें प्रेम, कनक के समान तन एवं यौवन से अपनें मनोहर प्रियतम को मोल ले लिया है।

(सर्वथा अपने अधीन बना लिया है और इसी की प्रसन्नता में आज तुम्हारे नेत्र चंचल बनें हुए हैं।) ॥२॥

(प्रियतम के साथ उन्मुक्त प्रेम-विहार के कारण) तुम्हारे लाल अधर रंग-शून्य हो रहे हैं, केशों की लटें छूट रही हैं और कपोल पीक से रंजित हो रहे हैं ॥३॥

रस मग्नता के कारण तुमको यह भी पता नहीं चल रहा है कि तुमने अपने प्रियतम का पीताम्बर ओढ़ रखा है ॥४॥

तुम्हारे युगल-कुचों पर प्रियतम की नख रेखायें शंकरजी के मस्तक पर चन्द्रमाओं के समूह की भाँति सुशोभित हो रहीं हैं ॥५॥

सखी भावापन्न श्रीहितहरिवंश कहते हैं कि हे सुन्दरी, आज तो तुम को बोलनें में भी अत्यन्त आलस्य का अनुभव हो रहा है ॥६॥

[२४]

आजु गोपाल रास रस खेलत,
पुलिन कल्पतरु तीर री सजनी ॥१॥

CC-0. Shri Vipin Kumar Col. Deoband. In Public Domain.

Digitized by Madhuban Trust, Delhi

सकल मंडल भलीं तुम जु हरिसों मिलीं,
बनी वर बनित उपमा कहौं कासु री ॥५॥
तुम जु कंचनतनी, लाल मर्कतमनी,
उभै कल हंस हरिवंश बलि दासु री ॥६॥

भूमिका:—इस पद में रास लीला का वर्णन है किन्तु यह वह रास है जिसमें कांताभाव वाली ब्रज देवियों का प्रवेश नहीं है और जिसकी रचना सखियों (श्रीराधा-किंकरियों) के सहयोग से हुई है। श्रीयमुना तट पर श्याम घन ने श्रीराधा के सुख के लिए रास का आयोजन किया है और उनको अपनी इस प्रेमोल्लासमई रचना की सूचना देने के लिए उन्होंने वंशी नाद किया है। श्रीराधा निकट ही एक कुञ्ज में रस निमग्न स्थिति में विराजमान हैं और वंशी नाद का उन पर कोई प्रभाव नहीं होता और वे उससे आकृष्ट होकर रास में सम्मिलित होने के लिए नहीं पधारतीं। निरुपाय बनकर श्रीश्याम सुन्दर हित सजनी की ओर देखते हैं और वे उनकी अधीरता देखकर श्रीप्रिया को बुलाने के लिए उनकी वंशी नाद एवं रास रचना की सूचना देती हुई उनसे प्रार्थना करती हैं—

व्याख्या—(हे स्वामिनी) **मदनगोपाल की बांसुरी का नाद अत्यन्त मोहक है ॥१॥**

हे राधिके, आप (अपने चित्त की वृत्तियों को तनिक बाहर की ओर लाकर) **मेरी यह बात सुनें। इस वंशी नाद की माधुरी को श्रवण पुटों से सुनने पर इसके द्वारा रतिराज के ताप का नाश होता** । (अर्थात् प्रेम वेदना का अपहरण हो जाता है।)

(यह कहकर श्रीहित सजनी ने श्रीराधा के समक्ष वंशी नाद के सामान्य गुण का वर्णन किया किन्तु श्रीराधा इस समय 'रतिराज

CC-0. Shri Vipin Kumar Col. Deoband. In Public Domain.

Digitized by Madhuban Trust, Delhi

के ताप' से तप्त तो हैं नहीं अतः इसका कोई प्रभाव उनके ऊपर नहीं पड़ा और वे अविचल रूप से अपने भाव में ही स्थित रहीं। श्रीहित सजनी यह देखकर अन्य प्रकार से भावोद्दीपन की चेष्टा करती हुई कहती हैं) ॥२॥

हे सखी, देखो यह शरद पूर्णिमा की रात्रि है और (आपको अपने कण-कण से प्रेम करने वाला) **यह वृन्दाविपिन है जहाँ** (आपको सुख देने के लिए उत्सुक) **शीतल-मंद-सुगंध पवन बह रहा है** ॥३॥

श्रीयमुनाजी का परम पवित्र एवं निर्मल पुलिन है जहाँ भृङ्गों के द्वारा सेवित नलिन खिल रही हैं। (पवित्र पुलिन पर प्रेमी भृङ्गों का उल्लेख करके यहाँ के प्रेम की पावनता एवं निर्मलता को ध्वनित किया गया है) **ऐसे पावन एवं प्रेमप्लावित स्थान में कल्पवृक्ष के निकट बलवीर श्रीश्यामसुन्दर ने रास की रचना की है।**

(बलवीर शब्द का अर्थ है बलरामजी के भाई। हित चौरासी के प्राचीन टीकाकार निकुञ्ज लीला से सम्बन्धित इस रास में श्रीश्यामसुन्दर के लिये इस शब्द का प्रयोग देखकर असमंजस में पड़े हैं। हमारी दृष्टि में 'बलवीर' शब्द का प्रयोग केवल इसके पूर्व प्रयुक्त 'तीर' शब्द के साथ इसका अनुप्रास मिलाने के लिए किया गया है और इस शब्द का अन्वर्थ ग्रहण करने का प्रयोजन यहाँ दिखलाई नहीं देता। फिर भी यदि इसका अन्वर्थ ही ग्रहण करना है तो, प्रेमदासजी की टीका के अनुसार, यह कहा जा सकता है कि 'बलवीर' शब्द के द्वारा यहाँ श्रीश्यामसुन्दर की प्रेम-मत्तता व्यंजित की गई है। श्रीबलराम वारुणी पीकर मत्त रहते हैं और उनके अनुज प्रेम-मदिरा का पान करके।)

❁

(हित सजनी के इन विदग्ध वचनों को सुनकर श्रीराधा उनके साथ रास मंडल पर पधार कर अपने प्रियतम से मिलीं। इन दो सौन्दर्य-सागरों के मिलने से मंडल पर जिस अनुपम शोभा का प्रकाश हुआ उससे अभिभूत होकर हित सजनी श्रीराधा से बोलीं ॥४॥

CC-0. Shri Vipin Kumar Col. Deoband. In Public Domain.

Digitized by Madhuban Trust, Delhi

हे प्रिया, (आप मेरी प्रार्थना मानकर यहाँ पधारी हैं तो) देखिये इस समय मंडल पर उपस्थित युवतियों में आपकी शोभा सर्वश्रेष्ठ है और आपके श्रीहरि के साथ मिलने से छबि का अनुपम बानक बना है उसकी उपमा मुझको ढँढ़ने पर नहीं मिल रही है ॥५॥

(वस्तुतः तुम दोनों के मिलने से मणि-कांचन योग हो गया है क्योंकि) तुम कंचन के समान गौर शरीर वाली हो और तुम्हारे प्रियतम मर्कत मणि के समान श्याम हैं। इसके साथ ही तुम दोनों (उज्ज्वलता एवं परस्पर अनन्य प्रेम के कारण) कल हंस हो और हरिवंशदास तुम पर बलिहार है ॥६॥

[२७]

मधुऋतु वृन्दावन आनन्द न थोर।
राजत नागरी नव कुशल किशोर ॥१॥
जूथिका जुगल रूप मञ्जरी रसाल।
विथकित अलि मधुमाधवी गुलाल ॥२॥
चंपक बकुल कुल विविध सरोज।
केतकी मेदनी मद मुदित मनोज ॥३॥
रोचक रुचिर बहै त्रिविध समीर।
मुकुलित नूत नदत पिक-कीर ॥४॥
पावन पुलिन घन मंजुल निकुञ्ज।
किसलय सैन रचित सुख-पुञ्ज ॥५॥
मंजीर मुरज डफ मुरली मृदंग।
बाजत उपंग वीणा वर मुख चंग ॥६॥

CC-0. Shri Vipin Kumar Col. Deoband. In Public Domain.

Digitized by Madhuban Trust, Delhi

मृगमद मलयज कुंकुम अबीर।
बंदन अगरसत सुरँगित चीर ॥७॥
गावत सुन्दरि-हरि सरस धमार।
पुलकित खग मृग बहत न वारि ॥८॥
जै श्रीहित हरिवंश हंस-हंसिनी समाज।
ऐसे ही करौ मिलि जुग-जुग राज ॥९॥

भूमिका:—इस पद में श्रीवृन्दावन में वसन्त के आगमन का एवं युगल की वसंत-केलि का वर्णन है। हित चौरासी के चौसठवें पद में श्रीवृन्दावन में वसंत की नित्य स्थिति बतलाई है—'सदा वसंत रहत वृन्दाबन'। इस पद में वसंत आगम का वर्णन है, किन्तु जो नित्य स्थित है उसका आना-जाना नहीं बनता।

इसके लिए यह समझना चाहिए कि राधावल्लभीय सिद्धांत में श्रीवृन्दावन, सहचरीगण, श्रीराधा और श्रीकृष्ण नित्य एवं परात्पर प्रेम की विभिन्न परिणतियाँ मानी जाती है। प्रेम नित्य-नूतन तत्व है, और यही एक ऐसा पदार्थ है जिसमें नित्यता और नूतनता जैसे परस्पर विरोधी दिखलाई देने वाले गुणों की एक साथ स्थिति रहती है। अन्यथा जो नित्य है वह नवीन नहीं हो सकता और जो नवीन है वह नित्य नहीं हो सकता। इसी बात को ध्वनित करने के लिए रसिकजनों ने श्रीवृन्दावन में वसंत की नित्य स्थिति भी मानी है और वसंत ऋतु में उसका नवीन आगमन भी। इससे नित्य के साथ प्राचीनता बँधी हुई है उसका परिहार हो जाता है और रसास्वाद में नूतनता बनी रहती है।

व्याख्या:—**श्रीवृन्दावन में वसन्त ऋतु के आगमन से अपार आनन्द की वृद्धि हुई है और** (इस आनंद का उपभोग करने के लिए) **नवीन नागरी श्रीराधा एवं नवीन कुशल किशोर श्रीश्यामघन वहाँ शोभायमान हैं ॥१॥**

CC-0. Shri Vipin Kumar Col. Deoband. In Public Domain.

Digitized by Madhuban Trust, Delhi

सरद विमल नभ चन्द्र विराजत,
रोचक त्रिविध समीर री सजनी ॥२॥
चंपक बकुल मालती मुकुलित,
मत्त मुदित पिक कीर री सजनी ॥३॥
देसी सुधंग राग रँग नीकौ,
ब्रज-जुवतिन की भीर री सजनी ॥४॥
मघवा मुदित निसान बजायौ,
व्रत छाँड़्यौ मुनि धीर री सजनी ॥५॥
जै श्रीहित हरिवंश मगन मन श्यामा,
हरत मदन घन पीर री सजनी ॥६॥

भूमिका:—इस पद में वंशीबट के रास का वर्णन है। इस प्रकार के पदों का स्पष्टीकरण उन्नीसवे पद की भूमिका में किया जा चुका है। नित्य विहार का वर्णन करने वाले पदों की भाँति यह पद भी 'आज' शब्द से आरम्भ होता है। आज का तात्पर्य है वर्तमान, अतः श्रीहिताचार्य की दृष्टि में यह रास भी वर्तमान है और किसी काल विशेष अर्थात् द्वापरांत से आवद्ध नहीं है। नित्य विहार की अन्य लीलाओं की भाँति इस लीला को भी वर्तमान मानकर भजन करने से ही सुख मिलता है। श्रीहितसजनी नंद नंदन की इस रस भई क्रीड़ा का वर्णन करती हुई अपनी कृपापात्र सखी से कहती हैं:—

व्याख्या:—**हे सजनी, आज श्रीमदनगोपाल यमुना पर स्थित कल्पवृक्ष के निकट रस पूर्ण रास क्रीड़ा कर रहे हैं।**

(इस लीला को कल्पवृक्ष के निकट बताकर यह सूचित किया है कि इसके द्वारा, अपने भाव के अनुसार, सबके रस-मनोरथों की पूर्ति होती है।) ॥१॥

CC-0. Shri Vipin Kumar Col. Deoband. In Public Domain.

Digitized by Madhuban Trust, Delhi

(रास के अद्भुत स्थान की ओर संकेत करने के बाद अब उसके काल का वर्णन करते हुए कहते हैं) हे सजनी, इस समय शरद ऋतु के निर्मल आकाश में पूर्ण चन्द्र सुशोभित है और (रस-क्रीड़ा की रुचि उत्पन्न करने वाला) शीतल-मंद-सुगंध समीर बह रहा है ॥२॥

हे सजनी, इस समय चंपक, मौलश्री और मालती खिलकर अपनी सुगन्ध विस्तार कर रहे हैं एवं उनके ऊपर बैठे हुए पिक और कीर आदि पक्षीगण इस रस क्रीड़ा को देखकर महा मोद से मत्त हो रहे हैं ॥३॥

(अब रास क्रीड़ा का प्रकार बतलाते हुए कहते हैं) हे सजनी, ब्रज युवतियों का समूह और श्रीमदनगोपाल देसी राग गाते हुए सुधंग-नृत्य में प्रवृत्त हैं और राग-रंग का समा बँधा हुआ है ॥४॥

हे सजनी, इस अद्भुत राग-रंग मई रस क्रीड़ा को देखकर इन्द्र दुन्दुभि बजाने लगा और मुनिगण अपना धैर्य खो बैठे।

इधर मुनियों की निर्वितर्क समाधि भंग होकर उनकी लीला-रस में रुचि उत्पन्न हो गई। इधर इन्द्र देवराज माना जाता है। रासलीला के दर्शन से मुदित होकर उसके दुन्दुभि बजाने से मनुष्य की एकादश इन्द्रियों के अधिष्ठातृ देवगण भी हर्षित हो गये। अतः इस अलंकृत वर्णन का सीधा अर्थ यह होता है कि रासलीला के दर्शन से मनुष्यों के तन-मन उल्लसित हो गये।) ॥५॥

सखी भावापन्न श्रीहितहरिवंश कहते हैं कि हे सजनी, (अपने प्रियतम की यह अद्भुत रस मई केलि देखकर) श्रीश्यामा का मन आनन्द मग्न हो गया और उन्होंने (रति-दान के द्वारा) उनकी सघन मदन व्यथा का अपहरण करके उनको सुख सागर में निमज्जित कर दिया।

CC-0. Shri Vipin Kumar Col. Deoband. In Public Domain.

Digitized by Madhuban Trust, Delhi

(इस प्रकार, रास-दर्शन से मनुष्य उल्लसित हो गये, मुनिगण समाधि त्याग कर लीला-गान करने लगे और रासेश्वरी श्रीराधा ने रस मग्न होकर स्वयं रसराज श्रीकृष्ण को उपकृत कर दिया।) ॥६॥

[२५]

आजु नीकी बनी राधिका नागरी ॥१॥
ब्रज-जुवति-जूथ में रूप अरु चतुरई,
सील सिंगार गुन सबन तें आगरी ॥२॥
कमल दक्षिण भुजा बाम भुज अंस सखि,
गावती सरस मिलि मधुर स्वर रागरी ॥३॥
सकल विद्या विदित रहसि हरिवंश हित,
मिलत नवकुञ्ज वर श्याम बड़ भागरी ॥४॥

भूमिका:—सखियों ने शृङ्गार-कुञ्ज में श्रीराधा का भली प्रकार शृङ्गार किया है। इस समय श्रीश्यामसुन्दर निकटस्थ एकांत कुञ्ज में विराजे हुए श्रीप्रिया की परम उत्सुकतापूर्वक प्रतीक्षा कर रहे हैं। श्रीराधा को भी अपने प्रियतम से मिलने के लिए उत्सुक देखकर सखीजन उनसे उस एकान्त कुञ्ज में पधारने की प्रार्थना करती हैं। श्रीराधा सखियों से वेष्टित होकर उस कुञ्ज की ओर उत्साहपूर्वक चल पड़ती हैं। श्रीहित सजनी उनकी शृङ्गार मंडित प्रेमोल्लास मई छबि का वर्णन करती हुई कहती हैं:—

व्याख्या:—**आज नागरी** (रस-विदग्धा) **श्रीराधिका भली प्रकार से शोभायमान हैं ॥१॥**

(तीनों लोकों की युवतिओं के साथ तो इनकी तुलना सम्भव ही नहीं है, किन्तु श्रीब्रजेन्द्रनन्दन के मन को हरण करने वाली)

CC-0. Shri Vipin Kumar Col. Deoband. In Public Domain.

Digitized by Madhuban Trust, Delhi

ब्रज युवतियों के यूथ में भी रूप, सौन्दर्य, चातुर्य, शील-सुभाव और (शृङ्गार-रस के परिपोषक लज्जा, उदारता, धैर्य आदि) गुणों में ये सबसे श्रेष्ठ हैं ॥२॥

इनके दक्षिण कर में कमल है (जिसको वे लीला पूर्वक घुमाती जा रही हैं) और उनकी वाम भुजा सखी के अंस पर स्थित है। वे सरस रीति से सखी के स्वर में स्वर मिलाकर मधुर स्वरों से युक्त राग का गान कर रही हैं ॥३॥

श्रीहितहरिवंश चन्द्र कहते हैं कि श्रीप्रिया नृत्य, संगीत, कोक-कला आदि सकल विद्याओं में पारंगत हैं और एकान्त नव कुञ्ज में बड़भागी श्याम से मिलती हैं।

(यहाँ श्याम को बड़भागी कहकर श्रीराधा की अद्‌भुत रूप-गुण शालिता एवं उनकी दुर्लभता को व्यंजित किया गया है। तात्पर्य यह है कि ऐसी श्रीराधा जिनसे स्वयं उमँग कर मिलती हैं उनके भाग्य की प्रशंसा नहीं की जा सकती।) ॥४॥

[२६]

मोहनी मदन गोपाल की बाँसुरी ॥१॥
माधुरी स्रवन पुट सुनत, सुनि राधिके !
करत रति राज के ताप कौ नासुरी ॥२॥
सरद राका रजनि, विपिन वृन्दा सजनि,
अनिल अति मंद सीतल सहित बासुरी ॥३॥
परम पावन पुलिन, भृङ्ग-सेवित नलिन,
कल्पतरु तीर बलवीर कृत रासु री ॥४॥

CC-0. Shri Vipin Kumar Col. Deoband. In Public Domain.

Digitized by Madhuban Trust, Delhi

श्रीवृन्दावन में युगल-रूप अर्थात् पीत और श्वेत दो प्रकार के वर्णों वाली चमेली के, मंजरी (तिलका) नामक रस मुक्त लता के मधु (अशोक) के, तथा माधवी (वासंती) नामक लता के पराग से, अलिकुल थकित हो रहा है।

(आप्टे के शब्द कोष में मंजरी का अर्थ 'तिलका' नामक लता और 'मधु' का अर्थ अशोक दिया हुआ है) ॥२॥

चम्पा और मौलिश्री समूह के, विविध भाँति के कमलों के तथा केतकी और मेदिनी के पराग से मनोज मुदित हो रहा है। (अर्थात् हृदयों में कामोद्दीपन हो रहा है।) ॥३॥

शीतल-मन्द सुगंध तीन प्रकार का रुचिकारक समीर सुन्दर रीति से बह रहा है। आम्र में मंजरियाँ निकल रही हैं और उस पर बैठे हुए पिक और कीर नाद कर रहे हैं ॥४॥

परम पवित्र श्रीयमुना-पुलिन पर स्थित सघन एवं सुन्दर निकुंज में सुख पुञ्ज शैया की किसलयों (कोंपलों) के द्वारा रचना की हुई है ॥५॥

वहाँ नूपुर, मुरज, डफ, मुरली, मृदंग, उपंग, वीणा, मुख चंग आदि बज रहे हैं ॥६॥

श्रीराधाश्यामसुन्दर के वस्त्र मृगमद (कस्तूरी), मलयज, (चंदन), केसर, अबीर, बन्दन, अगरसत आदि सुगन्धित एवं विभिन्न रंग वाले द्रव्यों से रँग रहे [illegible]॥

सुन्दरी श्रीराधा एवं हरि [illegible] श्यामघन मिलकर सरस धमार गा रहे हैं जिसको सुनकर श्रीवृन्दावन के खग-मृगों को रोमाञ्च हो रहा है एवं यमुना का बहना बन्द हो गया है ॥८॥

श्रीहितहरिवंश चन्द्र अत्यन्त उल्लसित होकर श्रीश्यामा-श्याम को आशीष देते हुए कहते हैं कि हे हंस-हंसिनी की जोड़ी के

CC-0. Shri Vipin Kumar Col. Deoband. In Public Domain.

Digitized by Madhuban Trust, Delhi

समान परमोज्ज्वल श्रीराधा श्यामसुन्दर, तुम श्रीवृन्दाबन में इसी प्रकार परस्पर हिल मिलकर युग-युग राज करते रहो।

(श्रीवृन्दावन के कण-कण में एवं अपनी दासी गण के तन-मन में सम्पूर्ण रूप से छाये रहो) ॥६॥

[२८]

राधे देख बन की बात ॥१॥
ऋतु वसन्त अनन्त मुकुलित,
कुसुम अरु फल - पात ॥२॥
बेनु धुनि नन्दलाल बोली,
सुनिव क्यों अरसात ॥३॥
करत कतव बिलम्ब भामिनि,
वृथा औसर जात ॥४॥
लाल मरकत मनि छबीलो,
तुम जु कंचन गात ॥५॥
बनी हित हरिवंश जोरी,
उभय गुन-गन मात ॥६॥

भूमिका:—यह भी व राज वर्णन का पद है। पिछले पद में वसंत-विहार का वर्णन है किन्तु उसमें सखियों की किसी सेवा का उल्लेख नहीं है। सखियों को सर्वाधिक महत्वपूर्ण सेवा श्रीश्यामा-श्याम को परस्पर मिलाकर क्रीड़ा में प्रवृत्त कर देना है। श्रीध्रुवदास की 'ब्रजलीला' में श्रीश्यामसुन्दर ने उसी सखी को चतुर बताया है जो उनकी प्रिया को उनसे मिला दे—चतुर सोई जो प्रिया मिलावै।

CC-0. Shri Vipin Kumar Col. Deoband. In Public Domain.

Digitized by Madhuban Trust, Delhi

इस पद में पहले तो हित सजनी श्रीराधा को वृन्दावन में वसन्त आगम की सूचना देती हैं फिर उनके प्रियतम के द्वारा मुरली में निरन्तर उनको बुलाने की बात कहती हैं। अंत में गौर-श्याम को एक दूसरे से मिलाकर दोनों के रूप-गुणों को अपने नेत्रों में तौलती हैं और उनको एक से एक अधिक पाकर आनन्द सागर में निमग्न हो जाती हैं।

श्रीहितरूपा सहचरी अपनी स्वामिनी को सम्बोधन करती हुई कहती हैं:—

व्याख्या:— हे राधे, (आपके सुख के लिए) श्रीवृन्दावन ने जो रचना की है उसे आप देखिये ॥१॥

श्रीवृन्दाबन में वसन्त ऋतु के प्रवेश से अनन्त पत्र, पुष्प और फल मुकुलित हो उठे हैं।

(वृक्षों में नवीन कोंपलें और कलियाँ निकल आई हैं तथा उनमें नवीन फल भी लगने लगे हैं) ॥२॥

आपके प्रियतम आपको मुरली में बुला रहे हैं और आप हैं कि उसको सुनकर भी उनसे मिलने में आलस्य क र रही हैं ॥३॥

हे सुन्दरी, आप प्रियतम के पास पधारने में विलम्ब क्यों करती हैं ? इससे तो (रसोपभोग का) यह सुन्दर अवसर व्यर्थ नष्ट हो जावेगा ॥४॥

(इस प्रकार उद्दीपन कराने पर श्रीराधा सखी के साथ जाकर अपने प्रियतम से मिलीं) दो सौन्दर्य-सागरों को एकत्रित देखकर सखी भावापन्न श्रीहितहरिवंश कहते हैं:—

छबीले श्यामसुन्दर मर्कत-मणि के समान हैं और तुम कंचन के समान गौर अंग वाली हो ॥५॥

CC-0. Shri Vipin Kumar Col. Deoband. In Public Domain.

Digitized by Madhuban Trust, Delhi

तुम्हारी यह अद्भुत जोड़ी एक दूसरे के गुण-गणों से मात है, पराजित है। (तुम दोनों के रूप-गुण एक दूसरे से अधिक हैं। ॥६॥

[२६]

ब्रज नव तरुनि-कदम्ब मुकुटमनि श्यामा आजु बनी।
नखसिख लौं अंग-अंग माधुरी मोहे श्याम धनी ॥१॥
यौं राजत कवरी गूँथित कच कनक-कंज-बदनी।
चिकुर चंद्रिकन बीच अर्ध बिधु मानो ग्रसित फनी ॥२॥
सौभग रस सिर स्रवत पनारो, पिय सीमन्त ठनी।
भृकुटि काम-कोदंड, नैंन सर, कज्जल रेख अनी ॥३॥
तरल तिलक, ताटंक गंड पर, नासा जलज मनी।
दसन कुन्द, सरसाधर पल्लव प्रीतम मन समनी ॥४॥
चिबुक मध्य अति चारु सहज सखि, साँवल बिंदुकनी।
प्रीतम प्राण रतन संपुट कुच, कंचुकि कसिब तनी ॥५॥
भुज मृनाल बल हरत बलय जुत परस सरस स्रवनी।
श्याम सीस तरु मनौ मिडवारी रचो रुचिर रवनी ॥६॥
नाभि गंभीर मीन मोहन मन खेलन कौं हृदनी।
कृस कटि, पृथु नितम्ब किंकिनि व्रत, कदलि खंभ जघनी ॥७॥
पद अम्बुज जावक जुत, भूषन प्रीतम उर अवनी।
नव-नव भाय बिलोभि भाम इभ विहरत वर करनी ॥८॥
(जैश्री) हित हरिवंश प्रसंसत श्यामा कीरत विसद घनी।
गावत, स्रवनन सुनत सुखाकर, विश्व दुरित दवनी ॥९॥

CC-0. Shri Vipin Kumar Col. Deoband. In Public Domain.

Digitized by Madhuban Trust, Delhi

भूमिका:—श्रीराधा के नख-शिख का वर्णन करने वाला यह अपने ढंग का अनूठा पद है। हित चौरासी के अन्य कई पदों में भी श्रीराधा के विभिन्न अंगों के सौन्दर्य का मार्मिक वर्णन मिलता है किन्तु उनमें इस पद के समान क्रम बद्धता नहीं है।

आज प्रियतम ने अपनी प्राणाधिका प्रिया का अपने हाथों से पूर्ण मनोयोग पूर्वक शृङ्गार किया है और उनके विभूषित अंगों का माधुर्य देखकर वे मुग्ध हो रहे हैं। आज के शृङ्गार की विशेषता यह है कि श्रीराधा के अनुपम सौंदर्य के साथ उनके प्रियतम के असामान्य प्रेम का संयोग हो गया है जिससे उसकी छटा अमित सुषमायुक्त बन गई है।

इस अद्‌भुत छबि का दर्शन करके श्रीहितहरिवंशचन्द्र का हृदय आज प्रेम-पूरित होने के साथ करुणा पूरित भी हो गया है। उनके मन में यह भाव जागा है कि यदि इस परमोज्ज्वल रूप का परिचय किसी प्रकार संसार के कलि-कल्मष युक्त जीवों को मिल जाय तो उनका हृदय पाप मुक्त होकर उज्ज्वल बन सकता है। अत: आज वे कृपा-विगलित चित्त से अपनी स्वामिनी के नख शिख सौंदर्य का वर्णन करते हुए कहते हैं:—

व्याख्या:—**ब्रज की नवीन तरुणियों के समूह की मुकुटमणि श्रीश्यामा आज बहुत सुन्दर बनी है। शिखा से नख पर्यन्त इनके सम्पूर्ण अंगों के माधुर्य को देखकर इनके प्रियतम श्रीश्यामघन मोहित हो रहे हैं ॥१॥**

स्वर्ण-कमल के समान मुख वाली श्रीराधा की वेणी में गूँथित कच इस प्रकार शोभित हैं मानो राहु ने बालों की चन्द्रिकाओं के बीच में स्थित मुख-चन्द्र के आधे भाग (मस्तक) को ग्रस लिया है ॥२॥

श्रीराधा के सिर में प्रियतम के द्वारा रचित सुरेख माँग ऐसी मालुम हो रही है जैसे वह सुहाग रस को श्रवित करने वाली पनारी

CC-0. Shri Vipin Kumar Col. Deoband. In Public Domain.

Digitized by Madhuban Trust, Delhi

हो। उनका भृकुटि कामदेव के धनुष के समान, नेत्र बाण के समान और नेत्रों में विराजमान काजल की रेखा अनी (बाण की नोंक) के समान है ॥३॥

उनके मस्तक पर दैदीप्यमान तिलक है, (शब्द कोष में तरल शब्द का एक अर्थ दैदीप्यमान भी दिया हुआ है) कपोलों पर कुण्डल धारण हैं तथा नासिका में मोती शोभायमान है। (इसका अर्थ यह हुआ कि उन्होंने नथ धारण कर रखी है।) उनकी दन्तावली कुन्द कलियों के समान है और उनके पल्लव के समान पतले, रसयुक्त अधर प्रियतम के मन को शान्ति प्रदान करने वाले हैं ॥४॥

हे सखी, श्रीराधा की ठोड़ी के मध्य में अत्यन्त सुन्दर सहज श्याम वर्ण का विन्दु-कण सुशोभित है। उनके कुच युगल उस मञ्जूषा (डिब्बा) के समान हैं जिसमें उनके प्रियतम के प्राण रूपी रत्न बन्द हैं और उनके कुचों पर कंचुकी कसकर बँधी हुई है।

(जिसके कारण कुचों की कोर बाहर छिटक कर उनकी शोभा वृद्धि कर रही है।) ॥५॥

चूड़ियों से मण्डित श्रीराधा की मृणाल (कमल की डंडी) के समान मृदुल भुजायें (दर्शन मात्र से) प्रियतम के बल का हरण करने वाली हैं और सरस स्पर्श को श्रवित करती रहती हैं (अर्थात् इनका स्पर्श अत्यन्त सरस होता है।) (उनकी भुजा श्यामसुन्दर के कंठ में सदैव डली रहती है जिसको देखकर ऐसा मालुम होता है।) मानो उसके द्वारा श्रीश्यामसुन्दर के शीश रूपी तरु (वृक्ष) के पोषण-सम्वर्धन के लिए (विधाता ने) रुचिर-रमणीय थाँवले की रचना कर रखी है ॥६॥

उनकी गम्भीर नाभि उनके त्रिभुवन मोहन प्रियतम के मन रूपी मीन को क्रीड़ा करने के लिए गहरे सरोवर के समान है। उनकी कटि पतली है, किंकिणी द्वारा वेष्टित नितम्ब भारी हैं एवं

CC-0. Shri Vipin Kumar Col. Deoband. In Public Domain.

Digitized by Madhuban Trust, Delhi

उनकी जंघा कदली के खम्भ के समान (सुढार एवं सचिक्कण) है ॥७॥

उनके जावक (अलता) से रंगे हुए चरण कमल उनके प्रियतम की हृदय रूपी अवनी के भूषण हैं और वे नवीन-नवीन भावों से लोभित होकर (अपने प्रियतम के साथ) इस प्रकार विहार करती हैं जैसे श्रेष्ठ करिनी गज के साथ करती है।

श्रीहरिवंशचन्द्र कहते हैं कि मैंने (इस पद में) श्रीश्यामा के निर्मल एवं प्रचुर यश का प्रशंसा युक्त वर्णन किया है। यह गान करने में एवं श्रवण करने में सुख की खान है तथा विश्व के पापों का दमन करने वाला है ॥८॥

[३०]

देखत नवनिकुञ्ज सुनि सजनी लागत है अति चारु।
माधविका केतुकी लता लै, रच्यौ मदन आगारु ॥१॥
सरद मास, राका निशि, सीतल-मन्द-सुगन्ध समीर।
परिमल लुब्ध मधुव्रत विथकित, नदत कोकिला-कीर ॥२॥
बहुविध रंग मृदुल किसलय दल, निर्मित पिय सखि सेज।
भाजन कनक विविध मधुपूरित, धरे धरनि पर हेज ॥३॥
तापर कुसल किसोर-किसोरी करत हास-परिहास।
प्रीतम पानि उरज वर परसत प्रिया दुरावत वास ॥४॥
कामिनि कुटिल भृकुटि अवलोकत दिन प्रतिपद प्रतिकूल।
आतुर अति अनुराग विवश हरि धाइ धरत भुज मूल ॥५॥
नागर नीबी-बंधन मोचत ऐंचत नील निचोल।
बधू कपट हठ कोप कहत कल नेति-नेति मधुबोल ॥६॥

CC-0. Shri Vipin Kumar Col. Deoband. In Public Domain.

Digitized by Madhuban Trust, Delhi

परिरंभन विपरित रति वितरत सरस सुरत निजुकेलि ।
इन्द्रनील मनिमय तरु मानों लसत कनक की बेलि ।।७।।
रतिरन मिथुन ललाट पटल पर श्रमजल-सीकर संग ।
ललितादिक अंचल झकझोरत मन अनुराग अभंग ।।८।।
(जै श्री) हित हरिवंश यथामति बरनत कृष्ण-रसामृत-सार ।
स्रवन सुनत प्रापक रति राधा पद-अम्बुज सुकुमार ।।

भूमिकाः—इस पद में श्रीश्यामा-श्याम की सुरत-केलि का विशद वर्णन है । पद के अंत में इस केलि-वर्णन को शृंगार रस का सार कहा गया है और इसका उद्देश्य श्रीराधा के सुकुमार चरण-कमलों में रति प्राप्त कराना बतलाया है ।

श्रीराधा मोहन की रहस्य-केलि का वर्णन करती हुई श्रीहित सखी अपनी कृपा पात्र सखी से कहती हैं:—

व्याख्याः—हे सजनी, तू मेरी बात सुन । श्रीवृन्दावन की यह नव निकुञ्ज देखने में कैसी सुन्दर लगती है । इस मदन-केलि के उपयुक्त स्थान की रचना माधवी और केतकी लताओं को लेकर हुई है ।।१।।

(अब केलि के उपयुक्त समय का वर्णन करते हुये कहते हैं कि) शरद मास है, पूर्णिमा की रात्रि है और शीतल-मंद-सुगन्ध पवन बह रहा है । पुष्पों के पराग के लोभी भ्रमर अधिक मधुपान से अपनी चंचलता भूल गये हैं एवं कोकिला और कीर मधुर शब्द कर रहे हैं ।।२।।

हे सखी, प्रियतम ने स्वयं अनेक रंगों के मृदुल किसलय दलों के द्वारा शैया की रचना की है एवं सखीजनों ने अनेक प्रकार के मधु से भरे हुये सुवर्ण पात्र शैया के पास पृथ्वी पर प्रेम पूर्वक रखे हुए हैं । (सेवक वाणी के तेरहवें प्रकरण में श्रीहरिवंश धर्म को भली भाँति समझने वाले धर्मी के स्वरूप का परिचय देते हुये एक बात यह बताई गई है कि हित धर्मी का उपास्य प्रेम-रस मादक

CC-0. Shri Vipin Kumar Col. Deoband. In Public Domain.

Digitized by Madhuban Trust, Delhi

होता है—मत्त बनाने वाला होता है और हित धर्मी इस तथ्य को असंदिग्ध रूप से मानता है—"रस मादक संक न आनत हैं"। इस पद में कनक पात्रों में भरे हुये अनेक प्रकार के मधु से तात्पर्य अनेक आस्वादों से पूर्ण उस प्रेम रस से है जिसका भोग श्रीश्यामा-श्याम अहर्निश करते रहते हैं और जिसका अनुभव करके कृपा पात्र हित धर्मी रसिक जन निरन्तर रस मत्त बने रहते हैं।)

इस शैया पर रस विलास में परम कुशल किशोर किशोरी श्रीश्यामा श्याम हास-परिहास कर रहे हैं। (अब श्रीकिशोर किशोरी की कुशलता का उदाहरण देते हैं कि) प्रियतम अपने कर कमल से श्रीप्रिया के श्रेष्ठ उरोजों का स्पर्श करते हैं और श्रीप्रिया उनको वस्त्र से छिपाती हैं। (इसमें श्रीराधा की कुशलता यह है कि कुच-स्पर्श से प्रियतम के हाथ को कंपयुक्त देखकर वे इस भय से कि कहीं कंप अधिक बढ़कर प्रियतम को सम्पूर्ण रूप से विवश न बना दे अपने कुचों को वस्त्र से ढँक लेती हैं) ॥४॥

सदा पद-पद पर प्रतिकूल रहने वाली कामिनी श्रीराधा प्रियतम की ओर कुटिल भ्रकुटियों से देखती हैं और अनुराग विवश बनें हुये अत्यन्त आतुर श्रीहरि आगे बढ़कर श्रीप्रिया के भुज मूल (कंधे) पर हाथ रखकर उनको अपने अंक में भरते हैं ॥५॥

रसिक शिरोमणि श्रीश्यामघन श्रीराधा के नीवी-बंधन का मोचन करते हैं और उनके नील उत्तरीय को खींचते हैं और नव दुलहिन श्रीराधा मिथ्या हठपूर्ण प्रणय-कोप से सुन्दर अमृतमय नेति-नेति (नहीं-नहीं) वचन कहती हैं ॥६॥

इस रसयुक्त सहज शृङ्गार केलि में श्रीप्रिया (प्रियतम की अधीरता देखकर) उनका आलिंगन करती हैं एवं विपरीत रति का वितरण (दान) करती हैं। उस समय श्रीराधा की छबि ऐसी प्रतिभासित होती है मानों इन्द्रनील मणिमय वृक्ष पर कनक-लता सुशोभित हो रही है ॥७॥

युगल श्रीश्यामा श्याम के ललाट पटल पर रति-रण श्रमजल कणों के साथ सुशोभित है। (रति रण के द्वारा युगल के ललाट

CC-0. Shri Vipin Kumar Col. Deoband. In Public Domain.

Digitized by Madhuban Trust, Delhi

पटल पर जो तमक आई है वह श्रमजल कणों से सुशोभित है) यह देखकर अभंग अनुराग से पूर्ण मन वाली ललितादिक सखीगण युगल को अपने अंचलों से पवन करती हैं ।।८।।

श्रीहितहरिवंश कहते हैं कि मैंने अपनी मति के अनुसार इस पद में शृङ्गार रसामृत के सार का वर्णन किया है। इसके श्रवण मात्र से श्रीराधा के सुकुमार चरण कमलों में रति प्राप्त होती है।

[३१]

आज अति राजत दंपति भोर ।।१।।
सुरत रंग के रस में भीने नागरि-नवलकिशोर ।।२।।
अंसन पर भुज दिये बिलोकत इन्दुबदन विवि ओर।
करत पान रस मत्त परस्पर लोचन तृषित चकोर ।।३।।
छूटी लटन लाल मन करष्यौ ये याके चितचोर।
परिरम्भन चुम्बन मिल गावत सुर मंदर कलघोर ।।४।।
पग डगमगत चलत बन विहरत रुचिर कुञ्ज घनखोर ।।५।।
(जै श्री) हित हरिवंश लाल-ललना-
मिलि हियौ सिरावत मोर ।।६।।

भूमिकाः—यह वह पद है जिसको नवलदासजी ने ओरछा पहुँचकर श्रीहरिराम व्यास को सुनाया था। श्रीव्यासजी दिग्विजयी विद्वान थे और अपनी बयालीस वर्ष की अवस्था तक वे यह निर्णय नहीं कर पाये थे कि किस महानुभाव से दीक्षा लेकर भजन आरम्भ करें। नवलदासजी से यह पद सुनकर उन पर इसका बहुत गहरा प्रभाव पड़ा और वे घर-बार छोड़कर नवलदासजी के साथ ही श्रीवृन्दावन आ गये। इस पद की अंतिम पंक्ति 'जै श्रीहितहरिवश लाल-ललना मिल हियो सिरावत मोर' ने उनके हृदय में श्रीहित-हरिवंश का स्वरूप स्पष्ट कर दिया और उन्होंने निर्णय किया कि जिनके हृदय को शीतल करने के लिए श्रीश्यामाश्याम रास-विलास करते हैं उन्हीं की शरण मुझको ग्रहण करनी चाहिए।

CC-0. Shri Vipin Kumar Col. Deoband. In Public Domain.

श्रीहिताचार्य ने व्यासजी को, विश्राम प्राप्ति के लिए, श्रीश्यामाश्याम के चरणानुरागी रसिक भक्तों की शरण ग्रहण करने को कहा था। अतः वे जीवन भर भक्तों को ही अपना इष्ट मानते रहे। नाभाजी ने श्रीव्यासजी के संबंध में जो छप्पय लिखा है उसमें इस बात को लक्षित किया है।

इस पद में सुरतांत छबि का वर्णन है जो नवीन भंगिमा के साथ किया गया है।

व्याख्या:—आज भोर में श्रीयुगल अत्यन्त शोभा युक्त हो रहे हैं ।।१।।

नागरी श्रीराधा और नवलकिशोर श्रीश्यामघन इस समय शृङ्गार केलि के रंग में भीगे हुए उठे हैं ।।२।।

ये दोनों परस्पर अंसों पर भुजा रखे एक दूसरे के मुख चन्द्र को देख रहे हैं और दोनों के नेत्र प्यासे चकोरों की भाँति रसमत्त बनकर एक दूसरे की छबि का पान कर रहे हैं ।।३।।

श्रीराधा की छूटी हुई लटें श्रीश्यामसुन्दर की चितचोर हैं और उन्होंने उनके मन को अपनी ओर आकृ[illegible] लिया है। इसके परिणामस्वरूप दोनों परस्पर आ[illegible] करते हुए तीनों स्वर ग्रामों का आश्रय लेकर गान [illegible]

श्रीयुगल वृन्दाबन की सघन [illegible] डगमगाती चाल से विचरण करते हुये प्रेम विहार क[illegible]।

श्रीहितहरिवंश चन्द्र कहते हैं कि लाल-ललना श्रीश्यामाश्याम परस्पर इस प्रकार मिलकर मेरे हृदय को शीतल करते रहते हैं ।।६।।

Digitized by Madhuban Trust, Delhi

[.३२]

आजु बन क्रीड़त श्यामा-श्याम ॥१॥
सुभग बनी निशि सरद चाँदनी, रुचिर कुञ्ज अभिराम ॥२॥
खंडन अधर करत परिरम्भन ऐंचत जघन दुकूल ।
उर नख पात, तिरोछी चितबन, दम्पतिरस समतूल ॥३॥
वे भुज पीन पयोधर परसत, वामदृशा पिय हार ।
बसनन पीक, अलक आकर्षत, समर स्रमित सतमार ॥४॥
पल-पल प्रबल चौंप रस-लम्पट अति सुन्दर सुकुमार ।
(जै श्री) हित हरिवंश आजु तृण टूटत,
हौं बलि विसद विहार ॥५॥

भूमिका:—इस पद में श्रीश्यामाश्याम के शैया विहार का विशद वर्णन दोनों में समान बलशालिनी रस-स्थिति मानकर किया गया है। भरत ने उत्तम रति के लिये नायक नायिका में रस की समान स्थिति आवश्यक मानी है। इसके विपरीत गौड़ीय रस-सिद्धान्त में नायक-नायिका में रस की विषम स्थिति स्वीकार की गई है। उक्त सिद्धा[illegible] में महाभाव के कुछ अंगों का विकास श्रीराधा ही में माना [illegible] श्रीकृष्ण में नहीं। श्रीहिताचार्य ने भरत के सिद्धान्[illegible] किया है जो अपेक्षाकृत अधिक मनो-वैज्ञानिक है[illegible]

श्रीहि[illegible]अ[illegible]ना कृपा पात्र सखी से इस विहार का वर्णन करती हु[illegible] ग[illegible]ह—

व्याख्या:—आज श्रीवृन्दावन में श्रीश्यामाश्याम श्रृङ्गार केलि कर रहे हैं ॥१॥

CC-0. Shri Vipin Kumar Col. Deoband. In Public Domain.

Digitized by Madhuban Trust, Delhi

चाँदनी से युक्त शरद की रात्रि सुन्दर बनी है और कुञ्ज अत्यन्त रमणीय है ।।२।।

(प्रियतम) श्रीप्रिया का आलिंगन करते हुये उनका अधर खंडन करते हैं एवं उनके जघन के वस्त्र को खींचते हैं। वे श्रीराधा उरोजों पर नख क्षत करते हैं एवं श्रीप्रिया उनकी ओर रसपूर्ण तिरछी चितवन से देखती हैं क्योंकि युगल में रस की समान बलशाली स्थिति है ।।३।।

(अब रस समतूलता का उदाहरण देते हुए कहते हैं) प्रियतम श्रीप्रिया की भुजाओं का एवं पुष्ट उरोजों का स्पर्श करते हैं और सुन्दर नेत्रों वाली श्रीराधा अपने प्रियतम के कंठ में धारण किये हुए हार का स्पर्श करती हैं। अपने कपोलों पर लगी हुई पीक श्रीराधा का अंचल छोर रंजित हो रहा है एवं श्रीश्यामघन उनकी घुंघराली अलकों को दुलार से खींच रहे हैं। श्रीश्यामाश्याम के इस रति रण को देखकर सैकड़ों काम थकित हो रहे हैं ।।४।।

इन दोनों रस लोभी अत्यन्त सुकुमारों में प्रतिपल रस भोग की चोंप-चाह प्रबल बनती रहती है। सखी भावापन्न श्रीहितहरिवंश कहते हैं कि आज तो मैं युगलकिशोर को अपनी नजर लगने से बचाने के लिए तृण तोड़ता हुआ इस निर्मल प्रेम विहार की बलिहार जाता हूँ ।।५।।

[३३]

आज बन राजत जुगल किशोर ।।१।।
नन्दनंदन वृषभानुनन्दिनी उठे उनीदे भोर ।।२।।

CC-0. Shri Vipin Kumar Col. Deoband. In Public Domain.

Digitized by Madhuban Trust, Delhi

डगमगात पग परत, सिथिल गति,
परसत नख - ससि छोर ॥३॥
दसन-वसन खण्डित, मषि मंडित,
गंड तिलक कछु थोर ॥४॥
दुरत न कच - करजन के रोके,
अरुन नैंन अलि चोर ॥५॥
(जै श्री) हित हरिवंश संभार न तन-मन,
सुरत - समुद्र झकोर ॥३॥

भूमिका:—इस पद में भी श्रीश्यामाश्याम की सुरतांत छबि का वर्णन है। हित चौरासी में सुरतांत छबि का वर्णन करने वाले अनेक पद हैं। इस छबि के वर्णन के लिए आवश्यक कुछ बातें तो इन सभी पदों में सामान्य हैं किन्तु प्रत्येक पद अपनी विशिष्टता भी लिये हुए है और सुरतांत स्थिति के किसी नवीन अंग को रेखांकित कर देता है। इस पद में रस-बिभोरता से उत्पन्न श्रीश्यामाश्याम की असावधान दशा को रेखांकित किया गया है।

श्रीश्यामाश्याम सम्पूर्ण रात्रि प्रेम विहार में इस प्रकार निमग्न रहे हैं कि उनको निद्रा के लिए बहुत कम अवकाश मिला है और इतने में प्रातःकाल हो जाने से वे उनींदी अवस्था में ही निकुञ्ज मन्दिर से बाहर निकल कर सखियों के साथ यमुना तट की ओर पधार रहे हैं। श्रीहित रूपा सखी उनकी उस समय की अद्भुत छबि का वर्णन अपनी कृपापात्र सखी से करती हुई कहती हैं:—

व्याख्या:— **आज श्रीवृन्दावन में युगलकिशोर श्रीश्यामाश्याम शोभायमान हैं ॥१॥**

श्रीनन्दनन्दन और श्रीवृषभानुनन्दिनी सम्पूर्ण रात्रि प्रेम विहार करने के बाद उनींदी अवस्था में प्रातःकाल उठे हैं ॥२॥

CC-0. Shri Vipin Kumar Col. Deoband. In Public Domain.

Digitized by Madhuban Trust, Delhi

उनके चरण डगमगाते हुए पड़ रहे हैं और उनकी गति शिथिल हो रही है। (डगमगाने के कारण) उनके चरणों में स्थित नख-चन्द्रों के अग्रभाग पृथ्वी को स्पर्श कर रहे हैं ॥३॥

(अब श्रीयुगल के अंगों में उदित सुरत-चिन्हों का वर्णन करते हुए कहते हैं) उनके अधर खंडित हैं, कपोल काजल की रेखाओं से मंडित हैं और श्रमजल के बार-बार पोंछने से उनके मस्तक पर तिलक कुछ ही शेष रह गया है ॥४॥

(प्रेम-रसासव पान से) अरुण बनें हुए उनके नेत्र रूपी भ्रमर चोरी से (अर्थात् एक दूसरे की दृष्टि बचाकर) परस्पर रूप-मकरंद का पान करनें की चेष्टा में हैं और वे उन पर पड़ी हुई लट रूपी अंगुलियों के द्वारा छिपाये जानें पर भी नहीं छिप रहे हैं ॥५॥

सखी स्वरूप श्रीहितहरिवंश कहते हैं कि शृङ्गार-केलि रूपी समुद्र में झकोरे जाने के कारण श्रीश्यामाश्याम के तन और मन आज बे सँभार हो रहे हैं ॥६॥

[३४]

बन की कुंजन-कुंजन डोलन ॥१॥
निकसत निपट साँकरी बीथिन परसत नाहि निचोलन ॥२॥
प्रातकाल रजनी सब जागे सूचत सुख दृग लोलन ॥३॥
आलसवन्त अरुण अति व्याकुल कछु उपजत गति गोलन ॥४॥
निर्त्तन भृकुटि बदन अम्बुज मृदु सरस हास मधु बोलन ॥५॥
अति आसक्त लाल अलि लम्पट बस कीने बिनु मोलन ॥६॥
बिलुलित सिथिल श्याम छूटी लट राजत रुचिर कपोलन ॥७॥
रति विपरित चुम्बन परिरम्भन चिबुक चारु टक टोलन ॥८॥

CC-0. Shri Vipin Kumar Col. Deoband. In Public Domain.

Digitized by Madhuban Trust, Delhi

कबहुँ स्रमित किसलय सिज्या पर मुख अंचल झक झोलन ॥९॥
दिन हरिवंश दासि हिय सींचत वारिध केलि कलोलन ॥१०॥

भूमिका:—यह अपने ढंग का अनोखा पद है। अभी तक जितने पद आये हैं उनमें किसी एक समय की लीला अथवा छबि का वर्णन है। किन्तु यह पद बन विहार से आरम्भ होकर सुरतांत छबि का वर्णन करता है और फिर शैया विहार का वर्णन करके समाप्त होता है। पद के अन्त में श्रीहिताचार्य कहते हैं कि श्रीश्यामा-केलि समुद्र की तरंगों से अपनी दासीजनों के हृदय का सिंचन सदैव करते रहते हैं। श्रीश्यामाश्याम का नित्य विहार एक अनादि और अनंत लीला है और उसमें एक ही भाव अविचल रूप से स्थित रहता है। इस भाव-समुद्र में श्रीश्यामाश्याम की विभिन्न प्रेम लीलायें तरंगों की भाँति उन्मज्जन-निमज्जन करती रहती हैं। इन तरंगों में स्वभावत: कोई क्रम नहीं होता और भाव की जिस समय जिस प्रकार की परिणति हो जाती है वैसी ही तरंग उठ जाती है। इसी तथ्य की व्यंजना इस पद में हुई है।

श्रीध्रुवदास ने अपनी सम्पूर्ण रस-लीलाओं की रचना इसी शैली पर की है। उनकी लीलाओं में एक ही भाव पर आश्रित विविध केलि-तरंगें एक के बाद एक उठती रहती हैं और उन सबको मिलाकर एक लीला का नाम रख दिया जाता है। नित्य विहार की तरंगायित स्थिति को व्यंजित करने के लिए ध्रुवदासजी ने लीला वर्णन की प्राचीन पद-शैली छोड़कर नवीन शैली का विकास किया है और दोहा चौपाईयों में लीला का वर्णन किया है। ध्रुवदासजी को हित चौरासी के इस पद से ही प्रेरणा मिली है।

व्याख्या —**श्रीयुगलकिशोर वृन्दावन की एक कुन्ज से दूसरी कुन्ज में विचरण करते रहते हैं ॥१॥**

(एक कुन्ज से दूसरी कुन्ज में जाने के लिए) **उनको श्री वृन्दावन की अत्यन्त सकड़ी कुन्ज-वीथियों में से निकलना होता है।**

CC-0. Shri Vipin Kumar Col. Deoband. In Public Domain.

Digitized by Madhuban Trust, Delhi

फिर भी उनके नील-पीत उत्तरीयों का स्पर्श किसी लता के साथ नहीं होता।

(सेवकजी ने अपनी वाणी में इन पंक्तियों की व्याख्या एक स्वतन्त्र छंद में की है। उन्होंने बतलाया है कि जिस समय श्रीश्यामाश्याम श्री वृन्दाबन की सघन वीथियों से निकलते हैं उस समय वे देहाभिमान शून्य प्रेम-विह्वल स्थिति में होते हैं। वे अपनी प्रेम-मग्नता में एक दूसरे से हटकर इधर-उधर चलने लगते हैं और दूसरे क्षण में ही व्याकुलता पूर्वक डगमगाती चाल से एक दूसरे के साथ मिल जाते हैं। तो फिर वन की सघनता उनकी स्वच्छंद गति में बाधक क्यों नहीं बनती ? इसका उत्तर देते हुए सेवकजी बतलाते हैं कि श्रीवृन्दावन के चिद्घन लता-द्रुम इन दोनों में निरतिशय प्रेम देखकर इधर-उधर हट जाते हैं और उनके निकलने का मार्ग बना देते हैं।)

कही नित केलि रस खेल वृन्दाविपिन कुंज तें कुंज डोलन बखानी।
पट न परसंत निकसंत वीथिन सघन प्रेम विह्वल सु नहिं देह मानी॥
मगन जित-तित चलत छिन सु डगमग मिलत पंथ बन देत अतिहेत जानी
रसिक हित परम आनन्द अवलोकि तन सरस विस्तरत हरिवंश बानी॥
(सेवक वाणी ४-१० ॥२॥

श्रीश्यामाश्याम को सम्पूर्ण रात्रि जागकर प्रातःकाल हुआ है और उनके चंचल बनें हुए नेत्र विहार सुख का सूचन कर रहे हैं। ॥३॥

उनके नेत्र इस समय आलस्य युक्त हैं, अरुण हैं, अत्यन्त व्याकुल हैं और उनकी पुतलिओं में कुछ गति उत्पन्न हो रही है।

(उनीदे होने के कारण वे आलस्य युक्त हैं, प्रेम रसासव पान के कारण अरुण हैं, अपनी सामान्य स्थिति (परस्पर चन्द्र-चकोर की स्थिति) को प्राप्त न कर सकने के कारण व्याकुल हैं और सावधानता

CC-0. Shri Vipin Kumar Col. Deoband. In Public Domain.

Digitized by Madhuban Trust, Delhi

प्राप्त करने की चेष्टा में उनके नेत्रों की पुतलियाँ गतिशील हो रही हैं।) ॥४॥

(अब श्रीराधा के श्रीअंग में नवीन भाव तरंग का उदय होता है) उनके मृदुल वदन कमल पर भृकुटियाँ नृत्य करने लगती हैं और वे अपने प्रियतम के साथ रसपूर्ण हास्य से युक्त अमृतमय वार्तालाप में प्रवृत्त हो जाती हैं ॥५॥

इनके द्वारा वे अपने अत्यन्त आसक्त एवं रस-लम्पट भ्रमर प्रियतम को बिना मोल के सर्वथा अपने अधीन बना लेती हैं।

('बिन मोलन' से यहाँ तात्पर्य बिना किसी शर्त के आत्म-समर्पण से है) ॥६॥

(अब सुरत-तरंग का उद्भव दिखलाते हुए कहते हैं कि) श्रीप्रिया के सुन्दर कपोलों पर चंचल एवं अस्तव्यस्त श्याम वर्ण की छूटी हुई लटें शोभायमान हैं ॥७॥

(अपने प्रियतम के निर्व्याज आत्म समर्पण पर रीझकर) श्रीराधा विपरीत रति में प्रवृत्त होती हैं। (अर्थात् स्वयं प्रेम पात्र होते हुए भी वे प्रेमी की भाँति उनका दुलार करने लगती हैं) और अपने प्रियतम का आलिगन चुम्बन करती हुई अत्यन्त प्यार से उनके सुन्दर चिबुक का स्पर्श करती हैं ॥८॥

श्रीश्यामाश्याम की इस अद्भुत शृङ्गार-केलि में कभी यह होता है कि) श्रीप्रिया सुरत श्रमित होकर किसलय शैया पर शयन करती हैं और उनके प्रियतम श्रमापनोदन के लिए अपने पीताम्बर के अंचल से उनके मुख पर पवन करते हैं ॥९॥

श्रीहितहरिवंशचन्द्र कहते हैं कि इस प्रकार केलि-समुद्र की विविध तरंगों के द्वारा श्रीश्यामाश्याम अपनी दासीजनों के हृदय का सदैव सिंचन करते रहते हैं ॥१०॥

CC-0. Shri Vipin Kumar Col. Deoband. In Public Domain.

Digitized by Madhuban Trust, Delhi

[३५]

झूलत दोऊ नवल किसोर ।।१।।
रजनी-जनित रंग सुख सूचत अङ्ग-अङ्ग उठि भोर ।।२।।
अति अनुराग भरे मिलि गावत सुर मंदर-कल-घोर ।।३।।
बीच-बीच प्रीतम चित चोरत प्रिया नैन की कोर ।।४।।
अबला अति सुकुमार डरत मन वर हिंडोर झकोर ।
पुलकि-पुलकि प्रीतम उर लागत दै नव उरज अँकोर ।।५।।
अरुझी विमल माल कंकन सों कुण्डल सों कचडोर ।
वेपथ जुत क्यों बनैं विवेचत आनँद बढ़चौ न थोर ।।६।।
निरखि-निरखि फूलत ललितादिक विविमुख चन्द्र-चकोर ।
दै असीस हरिवंश प्रसंसत करि अञ्चल की छोर ।।७।।

भूमिका—यह झूले का पद है। श्रीहिताचार्य एवं अन्य सभी रसिक महानुभावों को झूलन उत्सव अत्यन्त प्रिय है। इसके कारण दो बतलाये जा सकते हैं, पहला यह कि लौकिक रीति के अनुसार श्रीराधा एवं उनकी सहचरियों को झूलना सहज रूप से प्रिय है। दूसरा यह कि भाव प्रवृद्ध होकर सहज रूप से दोलायमान हो जाता है, उसमें सहज रूप से एक झूलन उत्पन्न हो जाती है जिसमें झूलकर भावुक का चित्त परम सुख का अनुभव करता है। इसलिये रसिक-जनों ने झूलन को पावस ऋतु तक ही सीमित नहीं रखा। होली खेल की भी अंतिम परिणति उन्होंने 'डोल' में ही रखी है। होली के बाद ग्रीष्म विहार में भी वे श्यामाश्याम को गुलाब-डोल में झुलाकर अपने भाव का पोषण करते हैं। प्रस्तुत झूला पावस ऋतु का है।

श्रीहित सखी अपनी कृपापात्र सखी से श्रीश्यामाश्याम के झूलने का वर्णन करती हुई कहती हैं—

CC-0. Shri Vipin Kumar Col. Deoband. In Public Domain.

Digitized by Madhuban Trust, Delhi

व्याख्या:—दोनों नवलकिशोर (श्रीश्यामाश्याम) झूल रहे हैं ॥१॥

अपने अंगों द्वारा रात्रि में उत्पन्न सुरत-रंग के सुख का सूचन करते हुए वे प्रातःकाल उठे हैं। (उनके अंग-अंग सुरत चिन्हों से मंडित हैं।)

(इस झूला के पद में एवं आगे आने वाले होली के पद में श्रीहिताचार्य ने सुरत-सुख से भीगे हुये एवं उसकी खुमारी में मत्त बने हुए श्यामाश्याम का प्रवेश उक्त दोनों लीलाओं में कराया है। लीला वर्णन के आरम्भ में उनकी उक्त स्थिति की ओर संकेत कर देने से रसिकजनों को इन लीलाओं से निष्पन्न होने वाले लोकातीत अद्भुत शृङ्गार रस का अनुभव करने में सहायता मिल जाती है) ॥२॥

परस्पर अत्यन्त अनुराग से भरे हुए श्रीश्यामाश्याम मन्द्र, कल और घोर तीनों स्वर ग्रामों का आश्रय लेते हुए मिलकर गान कर रहे हैं ॥३॥

गान के बीच-बीच में श्रीप्रिया अपने प्रियतम की ओर तिरछी दृष्टि से देखकर उनके चित्त को चुरा रहीं हैं।

(गान में जब श्रीश्यामघन कोई सुन्दर स्वर लगाते हैं तो श्रीप्रिया अपनी रीझन व्यक्त करने के लिए उनकी ओर नेत्रों की कोर से देखती हैं, यह तात्पर्य है।) ॥४॥

(अब इस लीला का सर्वाधिक सुन्दर दृश्य उपस्थित करते हुए कहते हैं कि) श्रीराधा अत्यन्त सुकुमार अवला होने के कारण श्रेष्ठ हिंडोले के झकोरों से अपने मन में डरती हैं और पुलकित हो-होकर अपने नवीन उरोजों की भेंट देती हुई प्रियतम के वक्षस्थल से लग जाती हैं ॥५॥

CC-0. Shri Vipin Kumar Col. Deoband. In Public Domain.

Digitized by Madhuban Trust, Delhi

(इस भय जनित विवश आलिगन से श्रीराधा के आभूषण उनके प्रियतम के आभूषणों से उलझ जाते हैं जिसके कारण एक नवीन छबि छटा की सृष्टि हो जाती है। इसके साथ अपने प्रियतम के अंगों से अपने अंगों के अनायास उलझ जाने से श्रीराधा के शरीर में कंप उत्पन्न हो जाता है जिससे उनके आनंद में वृद्धि होती है। इस स्थिति का चित्रात्मक वर्णन करते हुये कहते हैं।) **श्रीश्यामसुन्दर की निर्मल माला श्रीराधा के कंकण से उलझ जाती है और श्रीराधा के केशों में गुँथी हुई डोरी श्रीश्यामघन के कुण्डल से उलझ जाती है। स्वभावतः श्रीराधा उनको सुलझाने की चेष्टा करती हैं किन्तु उनके हृदय में अपार आनंद की वृद्धि हो जाने से उनके शरीर में कंप उत्पन्न हो गया है और वे अपनी चेष्टा में सफल नहीं होतीं ॥६॥**

श्रीश्यामाश्याम के मुख चन्द्र की चकोर ललितादिक सहचरीगण इस मनोहारी अद्‌भुत दृश्य को देखकर आनंद से फूल रही हैं। उधर हित सजनी के रूप में श्रीहित हरिवंश अपने अंचल का छोर फैलाकर श्रीश्यामाश्याम को आशिष देते हुए उनका यश गान कर रहे हैं ॥७॥

[३६]

आज बन नीकौ रास बनायौ ॥१॥
पुलिन पवित्र सुभग यमुना-तट मोहन बेनु बजायौ ॥२॥
कल कंकन किंकिनि नूपुर धुनि सुनि खग-मृग सचु पायौ ॥३॥
जुवतिन मंडल मध्य श्यामघन सारँग राग जमायौ ॥४॥
ताल मृदंग उपंग मुरज डफ मिलि रस-सिंधु बढ़ायौ ॥५॥
विविध विसद वृषभानु नन्दिनी अङ्ग सुधंग दिखायौ ॥६॥
अभिनय निपुन लटकि लट लोचन भृकुटि अनंग नचायौ ॥७॥
तत्ताथेई धरत नूतन गति, पति ब्रजराज रिझायौ ॥८॥

CC-0. Shri Vipin Kumar Col. Deoband. In Public Domain.

Digitized by Madhuban Trust, Delhi

सकल उदार नृपति चूड़ामणि सुखवारिद बरसायौ।
परिरंभन चुम्बन आलिंगन उचित जुवति जन पायौ ।।९।।
बरसत कुसुम मुदित नभनायक इन्द्र निसान बजायौ।
(जैश्री) हितहरिवंश रसिकराधापति जस-बितान जग छायौ ।।१०

भूमिका:—यह भी रास का पद है। सेवकजी ने अपनी वाणी के चतुर्थ प्रकरण के ग्यारहवें छंद में द्वापरांत के रास का प्रयोजन ब्रज गोपिकाओं को शृङ्गार-केलि की शिक्षा देना बतलाया है:—

बाहु परिरम्भ नीवी उरज परसि हँसि,
उमँगि रतिपति रमित रीति जानी।।

वंशी नाद के द्वारा मोहित सम्पूर्ण ब्रज सुन्दरियाँ कुल मर्यादा को छोड़कर भगवान नंदनन्दन के समीप-पहुँचीं। उन्होंने अपनी भुजाओं से उनका आलिंगन करके एवं उरोजों का स्पर्श करके उनको 'रतिपति रमित' (शृङ्गार-केलि) की शिक्षा दी। इस शिक्षा से रसिक भक्तों को उक्त शृङ्गार-केलि के माध्यम से भगवान की उपासना करने का एक नया मार्ग मिल गया। हित चौरासी के प्रस्तुत पद में 'परिरम्भन आलिगन चुम्बन उचित जुवति जन पायौ' पंक्ति में 'उचित' से तात्पर्य यह है कि गोपीजनों में जो शिक्षार्थी जिस व्यवहार के 'उचित' थीं भगवान ने उनके साथ वही किया। जो गोपीजन चुम्बन के योग्य थीं उनका चुम्बन किया और जो परिरम्भन के योग्य थीं उनका परिरम्भन किया।

द्वापरांत के रास के प्रति श्रीहिताचार्य के दृष्टिकोण से सम्बन्धित जो अन्य बातें हैं वे 'खेलत-रास रसिक ब्रज मंडन' वाले पद की भूमिका में स्पष्ट की जा चुकी हैं।

व्याख्या:—**आज श्रीवृन्दावन में सुन्दर रास की रचना हुई है ।।१।।**

CC-0. Shri Vipin Kumar Col. Deoband. In Public Domain.

Digitized by Madhuban Trust, Delhi

परम पवित्र पुलिन वाले सुन्दर यमुना तट पर मोहन श्रीश्यामघन ने वेणुनाद किया है ।।२।।

रास में उत्पन्न सुन्दर कंकण, किंकिणी और नूपुर ध्वनि को सुनकर खग और मृग ने भी सुख का अनुभव किया।

(इससे रास में उत्पन्न नाद-सौन्दर्य की अद्‌भुतता सूचित की गई है ।) ।।३।।

ब्रज युवतियों के मंडल के मध्य में श्रीश्यामघन ने सारँग राग को जमाया है ।।४।।

मृदंग, उपंग, मुरज और डफ की ताल ने गान के साथ मिल-कर रस-सिन्धु की वृद्धि की है ।।५।।

(इस परम उल्लासमय संगीत से उल्लसित होकर) श्रीवृष-भानु नन्दिनी ने सुधंग नृत्य के विविध अंगों का विशद प्रदर्शन किया ।।६।।

भाव प्रदर्शन में निपुण श्रीराधा ने उन नेत्रों की भृकुटियों से जिन पर बालों की पतली लटें लटक कर आ गई हैं अनंग को मन चाहा नाच नचाया ।।७।।

उन्होंने तत्ताथेई बोलते हुए सुधंग नृत्य की नवीन गतियों का अवलम्ब लेकर अपने पति श्रीब्रजराज को रिझाया ।।८।।

सम्पूर्ण उदार नृपतियों के चूड़ामणि श्रीश्यामसुन्दर ने इस रास में सुख रूपी मेघ का वर्षण करके उपस्थित युवतीजनों को यथा उचित परिरम्भन-चुम्बन प्रदान किया ।।९।।

इस अद्‌भुत प्रेम क्रीड़ा से मुदित होकर नभ-नायक इन्द्र ने पुष्प वर्षा करते हुए दुन्दुभि नाद किया । श्रीहित हरिवंश कहते हैं

CC-0. Shri Vipin Kumar Col. Deoband. In Public Domain.

Digitized by Madhuban Trust, Delhi

कि इस रास क्रीड़ा से रसिक राधापति का यश-वितान जगत में छा गया ॥१०॥

[३७]

चलहि किन मानिनि कुंज कुटीर ॥१॥
तो बिनु कुंवर कोटि बनिता जुत मथत मदन की पीर ॥२॥
गदगद सुर, विरहाकुल पुलकित, स्रवत बिलोचन नीर ॥३॥
क्वासि-क्वासि वृषभानु नन्दिनी, बिलपत विपिन अधीर ॥४॥
बंशी बिसिख, व्याल मालावलि, पंचानन पिक कीर ॥५॥
मलयज गरल, हुतासन मारुत साखामृग रिपु चीर ॥६॥
(जैश्री) हितहरिवंश परम कोमलचित चपल चली पिय तीर ॥७॥
सुनि भयभीत वज्र कौ पंजर सुरत-सूर रणधीर ॥८॥

भूमिकाः—यह मान का पद है। शृङ्गार रस के वर्णनों में साहित्यिकों ने नायक और नायिका दोनों के विरह का वर्णन किया है। किन्तु श्रीमद्भागवत में श्रीकृष्ण कथा के अनुरोध से केवल गोपीजनों के विरह का वर्णन किया गया है। इसके विपरीत श्रीहिताचार्य ने अपनी ब्रजभाषा रचनाओं में सर्वत्र श्रीकृष्ण के विरह का वर्णन किया है जो उनकी रस रीति में श्रीराधा की प्रधानता के अनुकूल है।

इस पद में मानवती श्रीराधा के मान मोचन की चेष्टा करती हुई उनकी अन्तरंगा सहचरी श्रीश्यामसुन्दर की विषम विरहाकुलता का वर्णन उनके समक्ष करती हैं और उनके कोमल चित्त में उनके प्रियतम के प्रति करुणा उत्पन्न करने की चेष्टा करती हैं। पद में सहचरी का प्रेमपूर्ण आग्रह एवं उसकी उतनी ही प्रेमपूर्ण प्रतिक्रिया दर्शनीय है।

व्याख्याः—(सहचरी कहती हैं कि) **हे मानवती प्रिया, आप कुञ्ज कुटीर में क्यों नहीं चलतीं ॥१॥**

CC-0. Shri Vipin Kumar Col. Deoband. In Public Domain.

Digitized by Madhuban Trust, Delhi

तुम्हारे बिना कुंवर श्रीश्यामघन कोटि बनिताओं से युक्त होते हुए भी प्रेम-पीड़ा से मथित हैं।

(इसमें श्रीश्यामसुन्दर का श्रीराधा के प्रति अनन्य प्रेम सूचित किया गया है।) ।।२।।

तुम्हारे प्रियतम तुम्हारे विरह में आकुल होकर गदगद स्वर और रोमांचित हो रहे हैं एवं उनके नेत्रों से जल श्रवित हो रहा है ।।३।।

'वृषभानुनन्दिनी तुम कहाँ हो-कहाँ हो' कहकर वे श्रीवृन्दा-विपिन में अधीरता पूर्वक विलाप कर रहे हैं ।।४।।

तुम्हारे विरह में उनको बंशी बाण के समान, मालावलि सर्प के समान एवं कोयल और तोतों का शब्द सिंह की गर्जना के समान प्रतीत हो रहा है ।।५।।

उनको चन्दन विष के समान, पवन अग्नि के समान एवं शरीर के वस्त्र अपामार्ग की मंजरी (कोंच की फली) के समान दुःखदायक हो रहे हैं ।।६।।

श्रीहित हरिवंश कहते हैं कि परम कोमल चित्त वाली श्रीराधा सहचरी के मुख से अपने प्रियतम की विषम विरह व्यथा का वर्णन सुनकर उनके निकट चपलता पूर्वक चलीं ।।७।।

(श्रीराधा के अपने प्रियतम की ओर प्रस्थान करते ही एक सखी ने दौड़कर इसकी सूचना श्रीश्यामसुन्दर को दी । प्रेम और सौन्दर्य की अगाध सागर श्रीराधा इस समय अप्रत्याशित रूप से उमड़ कर उनकी ओर आ रही हैं,) यह सुनकर प्रेम युद्ध के धीर सूरमा एवं बज्र के समान सुदृढ़ देह वाले श्रीश्यामसुन्दर सहसा भयभीत हो गये।

CC-0. Shri Vipin Kumar Col. Deoband. In Public Domain.

Digitized by Madhuban Trust, Delhi

(श्रीश्यामसुन्दर को बज्र का पंजर इसलिये कहा गया है कि वे श्रीराधा के अगाध एवं अनिर्वचनीय रूप-सौंदर्य के असह्य आघात को सहन करने में पूर्ण रूप से समर्थ हैं । किन्तु इस समय विरहाकुलता से उनका तन-मन अत्यन्त क्षीण हो रहा है और इस दुर्बलता में अचानक श्रीराधा के चपलता पूर्वक आगमन का समाचार सुनकर वे उस अनुपम प्रेम-सौदर्य को सँभालने में स्वयं को असमर्थ पा रहे हैं और भयभीत हो उठे हैं ।) ॥८॥

[३८]

बेगि चलहि उठि गहर करत कत निकुंज बुलावत लाल ॥१॥
हा राधा-राधिका पुकारत निरखि मदन गज ढाल ॥२॥
करत सहाय सरद ससि मारुत, फूटि मिली उर माल ॥३॥
दुर्गम तकत समर अति कातर, करहि न पिय प्रतिपाल ॥४॥
(जैश्री)हितहरिवंश चली अति आतुर स्रवन सुनत तेहि काल ।
लै राखे गिरि-कुच बिच सुन्दर सुरत-सूर ब्रज बाल ॥५॥

भूमिका:—इस पद में श्रीश्यामसुन्दर के विरह का वर्णन युद्ध के रूपक से किया गया है । यह रूपक सांग है एवं उसके अंगों का निर्वाह बड़ी सुन्दरता एवं स्पष्टता के साथ हुआ है ।

श्रीश्यामसुन्दर ने मानवती श्रीराधा के मान-मोचन के लिए उनकी हितरूपा सहचरी को उनके पास भेजा है । सहचरी श्रीराधा के पास आकर श्रीश्यामसुन्दर की विरह स्थिति का मार्मिक वर्णन करती हैं और उनसे उनके प्रियतम से मिलने का आग्रह करती हुई कहती हैं:—

व्याख्या:– **है प्रिया, आपके प्रियतम आपको निकुञ्ज में बुला रहे हैं । आप देर क्यों कर रही हैं ? उठकर शीघ्र उनके पास चलिए ॥१॥**

CC-0. Shri Vipin Kumar Col. Deoband. In Public Domain.

Digitized by Madhuban Trust, Delhi

वे मदन रूपी गज का झुकाव अपनी ओर देखकर उनसे त्राण पाने के लिए 'हा राधा-राधिका' कहकर आपको पुकार रहे हैं ।।२।।

शरद ऋतु का चन्द्रमा, त्रिविध पवन एवं उर पर धारण की हुई माला श्रीश्यामसुन्दर की ओर से फूटकर (उनका साथ छोड़-कर) इस समय मदन-गज की सहायता कर रहे हैं।

(तात्पर्य यह है कि शरद शशि आदि सामान्यतया ताप-शामक होते हुये भी इस समय विरहावस्था में श्यामसुन्दर के लिये ताप-वर्धक हो रहे हैं।) ।।३।।

वे मदन गज से युद्ध करते हुए अत्यन्त कातर हो गये हैं और उससे बचने के लिए किसी दुर्गम स्थान की तलाश में हैं अतः (हे स्वामिनी) इस समय आप अपने प्रियतम का प्रतिपालन करिये (रक्षा करिये) ।।४।।

सखी भावापन्न श्रीहित हरिवंश कहते हैं कि अपने प्रियतम की विषय अवस्था सुनकर श्रीराधा उसी समय अत्यन्त आतुर होकर उनके निकट चलीं। प्रेम-युद्ध की सूरमा श्रीराधा नें अपनें सुन्दर प्रियतम को खींचकर अपनें गिरि के समान उत्तुंग युगल-कुचों के मध्य में रख लिया। (उनको हृदय से लगा लिया) ।।५।।

[३९]

खेल्यौ लाल चाहत रवन ।।१।।
रचि-रचि अपने हाथ सँवार्‌यौ निकुञ्ज भवन ।।२।।
रजनी सरद मंद सौरभ सौं सीतल पवन ।।३।।
तो बिनु कुंवरि काम की वेदन मेटव कवन ।।४।।

CC-0. Shri Vipin Kumar Col. Deoband. In Public D

Digitized by Madhuban Trust, Delhi

चलहि न चपल बाल मृग नैंनी तजिव मवन ।।५।।
(जैश्री) हित हरिवंश मिलव प्यारे की आरति-दवन ।।६।।

भूमिकाः—यह भी मान का पद है। इसमें श्रीश्यामसुन्दर की विरह वेदना का अधिक वर्णन न करके सहचरी श्रीराधा के भाव-जड़-मन में अन्य प्रकार से भावोद्दीपन करने की चेष्टा करती हुई कहती हैं:—

व्याख्याः—हे स्वामिनी, आपके साथ आपके प्रियतम रमण (प्रेम-केलि) करना चाहते हैं ।।१।।

(इस उद्देश्य से) उन्होंनें निकुंज भवन को अपनें हाथों से मनोयोग पूर्वक सँवारा है ।।२।।

शरद ऋतु की रात्रि है और सौरभ से लदा हुआ शीतल पवन मंद गति से बह रहा है ।।३।।

हे कुंवरि, उनकी काम वेदना को तुम्हारे सिवा और कौन दूर कर सकता है ।।४।।

हे बालमृगनैंनी, (मृग-शावक जैसे विशाल, कजरारे एवं भोले नेत्रों वाली) तुम मौन छोड़कर अपनें प्रियतम के पास चपलता पूर्वक चलो न ।।५।।

सहचरी भावापन्न श्रीहित हरिवंश कहते हैं कि हे प्रियतम की आर्ति (कष्ट) का दमन करनें वाली, उनसे शीघ्र मिलो ।।६।।

[४०]

बैठे लाल निकुञ्ज मवन ।।१।।
रजनी रुचिर मल्लिका मुकुलित, त्रिविध पवन ।।२।।

CC-0. Shri Vipin Kumar Col. Deoband. In Public Domain.

Digitized by Madhuban Trust, Delhi

तू सखी काम-केलि, मन मोहन मदन - दवन ॥३॥
वृथा गहर कत करत कृसोदरि कारन कवन ॥४॥
चपल चली तन की सुध बिसरी सुनत श्रवन ॥५॥
(जैश्री) हित हरिवंश मिले रस-लम्पट राधिका रवन ॥६॥

भूमिकाः—यह भी मान का पद है । इसमें अन्य बातों के साथ सहचरी श्रीराधा को उनके स्वरूप का स्मरण कराकर उनके प्रियतम से मिलने के लिए प्रेरित करती हुई कहती हैं:—

व्याख्या:—हे स्वामिनी, लाल निकुंज भवन में बैठे हुये तुम्हारी प्रतीक्षा कर रहे हैं ॥१॥

आज की रात्रि सुन्दर है, मल्ली खिल रही है और शीतल-मंद-सुगन्ध पवन बह रहा है ॥२॥

हे सखी, तुम काम-केलि स्वरूपा हो और मन मोहन काम का दमन करने वाले हैं ।

(इस प्रकार तुम दोनों एक दूसरे के पूरक हो । अतः तुम्हारे परस्पर मिले बिना कोई क्रीड़ा सम्भव नहीं है ।) ॥३॥

हे कृशोदरि, (पतली कटि वाली) आप वृथा देर क्यों कर रही हैं इसका कुछ कारण तो बताइये ॥४॥

(सहचरी के मार्मिक वचनों को सुनकर श्रीराधा का मन अपने प्रियतम की ओर इस प्रकार आकृष्ट हो गया कि) वे अपने तन की सुध भूल गईं और चपलता पूर्वक अपने प्रियतम की ओर चल दीं ॥५॥

सखी भावापन्न श्रीहित हरिवंश कहते हैं कि इस प्रकार रस लोभी श्रीराधिकारमण एक दूसरे से मिल गये हैं ॥६॥

CC-0. Shri Vipin Kumar Col. Deoband. In Public Domain.

Digitized by Madhuban Trust, Delhi

[४१]

प्रीति की रीति रँगीलौई जानै ॥१॥
जद्यपि सकल लोक चूड़ामणि दीन अपनपौ मानै ॥२॥
यमुना पुलिन निकुंज भवन में मान मानिनी ठानै ।
निकट नवीन कोटि कामिनी कुल, धीरज [illegible]हि न आनै ॥३॥
नस्वर नेह चपल मधुकर ज्यों अ[illegible]आनि सों बानै ॥४॥
(जैश्री)हितहरिवंश चतुर सोई लालहिं, छाँड़ि मेड़ पहिचानै ॥५॥

भूमिकाः—हित चौरासी के कतिपय सिद्धांत के पदों में से यह एक है। इसमें श्रीहिताचार्य ने दैन्य को प्रीति की प्रधान रीति के रूप में स्थापित किया है और दैन्य का अर्थ प्रेम-पात्र के प्रति अनन्य एवं अविचल आत्म-समर्पण बतलाया है। इस प्रसंग में उन्होंने नित्य विहारलीला में गृहीत श्रीश्यामसुन्दर के स्वरूप को भी स्पष्ट कर दिया है।

व्याख्याः—प्रीति की रीति को रँगीले (उसके रंग में रँगे हुये) श्रीश्यामसुन्दर ही जानते हैं ॥१॥

(वह रीति यह है कि) श्रीश्यामसुन्दर सम्पूर्ण लोकों के चूड़ामणि होते हुए भी स्वयं को दीन मानते हैं ॥२॥

(श्रीश्यामसुन्दर के दैन्य का उदाहरण देते हुए कहते हैं कि) जब यमुना-पुलिन-वर्ती निकुंज भवन में मानवती श्रीराधा मान ठानती हैं तो कोटि-कोटि नवीन कामिनि-कुल के निकट होते हुए भी श्रीश्यामसुन्दर के मन में धैर्य नहीं [illegible]ता ॥३॥

जो नेह अनेकों के प्रति होता है वह उस चंचल मधुकर के नेह के समान नश्वर होता है जो अनेक पुष्पों का रस ग्रहण करता रहता है ॥४॥

CC-0. Shri Vipin Kumar Col. Deoband. In Public Domain.

Digitized by Madhuban Trust, Delhi

श्रीहित हरिवंश कहते हैं कि चतुर वही है जो मधुकर के नश्वर नेह की 'मैंड़' (सीमाओं) को छोड़कर श्रीश्यामसुन्दर के अनन्य प्रेमी स्वरूप को पहचानता है। (नित्य विहार में श्रीश्यामसुन्दर का यही अनन्य प्रेमी रूप ही गृहीत है) ॥५॥

[४२]

प्रीति न काहु की कानि विचारै ॥१॥
मारग-अपमारग विथकित मन को अनुसरत निवारै ॥२॥
ज्यौं सरिता सावन जल उमगत सनमुख सिन्धु सिधारै।
ज्यौं नादहि मन दिये कुरंगन प्रगट पारधी मारै ॥३॥
(जैश्री)हितहरिबंश हिलग सारँग ज्यौं सलभ सरीरहि जारै ॥४॥
नाइक निपुन नवल मोहन बिनु कौन अपनपौ हारै ॥५॥

भूमिका:—पिछले पद में प्रेम की प्रधान अंतरंगा वृत्ति का परिचय देने के बाद प्रस्तुत पद में प्रीति के सहज स्वभाव का स्पष्टीकरण दृष्टांत देकर करते हैं। प्रीति के स्वभाव से संबंधित निम्नलिखित बातों का उल्लेख इस पद में किया गया है:—

१:—प्रीति किसी की मर्यादा, लज्जा अथवा लिहाज नहीं करती।

२:—आसक्त मन की गति अप्रतिहत होती है और उसमें मार्ग-अमार्ग का विचार नहीं रहता।

३:—प्रेमी के मन में एकमात्र मूल्य प्रेम का होता है और उसकी रक्षा के लिये वह अपने जीवन को भी हँसते-हँसते न्यौछावर कर देता है।

CC-0. Shri Vipin Kumar Col. Deoband. In Public Domain.

Digitized by Madhuban Trust, Delhi

४:—प्रेम में सम्पूर्ण आत्म-समर्पण ही सर्वाधिक महत्वपूर्ण वस्तु होती है।

प्रीति के उक्त स्वभाव का परिचय देते हुये हितरूपा सहचरी अपनी कृपापात्र सखी से कहती हैं:—

व्याख्या:—प्रीति किसी की लज्जा या मर्यादा नहीं रखती ॥१॥

मार्ग हो या अमार्ग हो आसक्त मन को उसका अनुसरण करने से कोई नहीं रोक सकता ॥२॥

वर्षा के जल से उमगती सरिता (परिणाम का विचार किये बिना) समुद्र की ओर धावित हो जाती है और नाद (वीणा के स्वरों) से मोहित मन वाले कुरंगों को प्रकट (सामने खड़ा हुआ) शिकारी मार डालता है ॥३॥

श्रीहितहरिवंश कहते हैं कि दीपक की आसक्ति में पतंग अपने शरीर को जला डालता है ॥४॥

(प्रीति के स्वभाव को स्पष्ट करने के लिये ऊपर जो उदाहरण दिये गये हैं वे या तो जड़ सरिता के हैं या अपना भला बुरा न समझने वाले अनिपुण मृग और पतंग के हैं। उधर नवल मोहन निपुण और प्रेम-मार्ग के अनुभवी नायक हैं और) निपुण नायकों में उनके बिना कौन ऐसा है जो प्रेम के ऊपर अपनपे को न्यौछावर कर सके? ॥५॥

[४३]

अति नागरि वृषभानु किसोरी ॥१॥
सुन दूतिका चपल मृगनैंनी,
आकर्सत चितवत चित गोरी ॥२॥

CC-0. Shri Vipin Kumar Col. Deoband. In Public Domain.

श्रीफल उरज कंचन-सी देही,
कटि केहरि, गुण-सिंधु-झकोरी ॥३॥
बेंनी भुजंग, चन्द्रसत बदनी,
कदलि जंघ, जलचर गति चोरी ॥४॥
सुन हरिवंश आज रजनी मुख,
बन मिलाइ मेरी निज जोरी।
यद्यपि मान समेत भामिनी,
सुनि कत रहत भली जिय भोरी ॥५॥

भूमिका:—इस पद में श्रीश्यामघन श्रीहित सहचरी को दूती बनाकर मानवती श्रीराधा के निकट उनको बुलाने के लिए भेजते हैं। दूती को श्रीराधा के अनुपम रूप-सौंदर्य एवं उनके सहज सरल स्वभाव का परिचय देते हुए वे सहचरी से कहते हैं:—

व्याख्या:—वृषभानुकिशोरी, अत्यन्त नागरी (चतुर) हैं। (श्रीराधा को यहाँ नागरी कहकर श्रीश्यामघन यह कहना चाहते हैं कि वे समय को पहिचानने वाली हैं और उनके विरह से उत्पन्न मेरी इस समय की स्थिति को वे अविलम्ब समझ जायेंगी।) ॥१॥

(अब श्रीश्यामसुन्दर के नेत्रों में श्रीराधा का अनुपम रूप-सौंदर्य घूम जाता है और वे उसका वर्णन करते हुए कहते हैं कि) हे दूतिका, सुन। (वृषभानु नन्दिनी) मृग जैसे चपल नेत्रों वाली हैं और एक बार उन पर दृष्टि पड़ते ही वे चित्त का आकर्षण कर लेती हैं ॥२॥

उनके उरोज श्रीफल के समान हैं, उनकी देह कंचन के समान पीत वर्ण है, उनकी कटि सिंह के समान सूक्ष्म है और वे नृत्य, संगीत, अभिनय आदि गुणों के सिन्धु में मानों झकोर कर निकाली गई हैं ॥३॥

Digitized by Madhuban Trust, Delhi

उनकी वेणी भुजंग के समान (सुढार एवं बल खाती हुई) है, उनका मुख शत-शत चन्द्रमाओं के समान है, उनकी जंघा कदली के समान है और उन्होंने अपनी गति में हंस की गति को चुराकर रख लिया है। (उनकी गति हंस की गति के समान है।) ॥४॥

हे हरिवंशी सखी, तुम आज रजनी मुख (संध्या काल) में श्रीवृन्दावन में मेरी सहज जोड़ी मुझसे मिलादो । मैं जानता हूँ कि भामिनी (श्रीराधा) इस समय मानवती हैं किन्तु वे इतनी भली और चित्त की भोली हैं कि मेरे बुलानें की बात सुनकर आये बिना क्यों रहेंगी ? ॥५॥

[४४]

चलि सुन्दरि, बोली वृन्दावन ॥१॥
कामिनी, कण्ठ लागि किन राजहि,
तू दामिनि मोहन नूतन घन ॥२॥
कंचुकी सुरंग विविध रंग सारी,
नख - जुग - ऊन बने तेरे तन ॥३॥
ये सब उचित नवल - मोहन कौं,
श्रीफल कुच, जोवन आगम - धन ॥४॥
अतिसय प्रीति हुती अन्तर गति,
(जैश्री) हित हरिवंश चली मुकुलित मन ॥५॥
निविड़ निकुञ्ज मिले रस सागर,
जीते सत रतिराज सुरत रन ॥६॥

भूमिकाः—श्रीश्यामसुन्दर की विरह कातरता से द्रवित होकर हित सजनी श्रीराधा के पास पहुँचती हैं और उनसे वृन्दावन में

CC-0. Shri Vipin Kumar Col. Deoband. In Public Domain.

Digitized by Madhuban Trust, Delhi

चलकर अपने प्रियतम के साथ मिलने का अनुरोध करती हैं । हित चौरासी के टीकाकारों ने यहाँ प्रश्न उठाया है कि जब श्रीराधा सदैव वृन्दावन में ही रहती हैं तो उनसे यह कहना कि 'तुम्हारे प्रियतम तुमको वृन्दावन में बुला रहे हैं' क्या अर्थ रखता है ? इसके लिये यह समझना चाहिए कि वृन्दावन से तात्पर्य वहाँ की एकांत कुञ्ज से है। पद के अंत में कहा भी गया है कि दोनों रस सागर निविड़ (सघन-एकांत) निकुंज में मिले । अत: इस बात को लेकर अधिक ऊहापोह का अवकाश मालुम नहीं देता।

व्याख्या:—**हे सुन्दरि, तुमको तुम्हारे प्रियतम ने वृन्दावन में बुलाया है सो तुम मेरे साथ चलो ।।१।।**

हे कामिनी, तुम अपनें प्रियतम के कंठ से लगकर क्यों नहीं सुशोभित होतीं क्योंकि तुम दामिनी के समान हो और मोहनलाल नूतन घन के समान हैं।

(घन और दामिनी का साहचर्य सहज है । पिछले पद में श्रीश्यामसुन्दर ने उनकी 'निज जोरी' अर्थात् सहज जोड़ी उनसे मिलाने का ही सहचरी से आग्रह किया।) ।।२।।

(अब सहचरी श्रीश्यामसुन्दर से मिलने की श्रीराधा की सहज पात्रता की ओर संकेत करती हुई उनसे कहती हैं कि **तुमनें लाल रंग की कंचुकी और अनेक रंग वाली साड़ी पहिन रखी है और तुम्हारा अंग सोलह शृङ्गार से मंडित है ।।३।।**

तुम्हारे कुच श्रीफल के समान हैं और तुम्हारा यौवन आगम-धन है। यह सब नवल मोहन के योग्य ही हैं।

(संभ्रांत व्यक्ति से श्रीफल के साथ कुछ धन रखकर मिलने की प्रथा है। 'आगम-धन' से यहाँ तात्पर्य भेंट करने योग्य धन से है।) ।।४।।

CC-0. Shri Vipin Kumar Col. Deoband. In Public Domain.

Digitized by Madhuban Trust, Delhi

श्रीराधा के हृदय में अपनें प्रियतम के प्रति प्रीति तो अतिशय थी किन्तु वह अन्तर्गति थी (उसकी गति अंदर की ओर थी और इसी से वे अनमनी सी दिखलाई दे रही थीं।) (सखी भावापन्न) श्रीहित हरिवंश कहते हैं कि (इन विदग्धता पूर्ण वचनों को सुनकर) श्रीराधा खिले हुए मन से (अपने प्रियतम से मिलने के लिये) चलीं ।।५।।

श्रीवृन्दावन की सघन निकुञ्ज में दो रस सागर (श्रीश्यामा-श्याम) का मिलन हुआ और उन्होंने अपनें प्रेम युद्ध के द्वारा शत-शत रतिराजों को पराजित कर दिया ।।६।।

[४५]

आवत श्रीवृषभानु दुलारी ।।१।।
रूप रासि अति चतुर सिरोमनि अंग-अंग सुकुमारी ।।२।।
प्रथम उबटि, मज्जन करि, सज्जित नील बरन तन सारी ।।३।।
गूंथित अलक, तिलक कृत सुन्दर, सैंदुर माँग सँवारी ।।४।।
मृगज समान नैंन अञ्जन जुत, रुचिर रेख अनुसारी ।।५।।
जटित लवंग ललित नासा पर, दसनावलि कृतकारी ।।६।।
श्रीफल उरज, कसूँभी कंचुकि कसि, ऊपर हार छबि न्यारी ।।७।।
कृस कटि, उदर गंभीर नाभिपुट, जघन नितम्बन भारी ।।८।।
मनौं मृनाल भूषन-भूषित भुज, श्याम अंस पर डारी ।।९।।
(जैश्री) हितहरिवंश जुगल करनी गज बिहरत बन पिय-प्यारी।१०

भूमिकाः—यह वन विहार का पद है। युगल श्रीश्यामाश्याम वन विहार के लिये पधार रहे हैं किन्तु पद यह कहकर आरम्भ किया गया है कि श्रीवृषभानु दुलारी आ रही हैं और पद की अंतिम पंक्तियों

CC-0. Shri Vipin Kumar Col. Deoband. In Public Domain.

Digitized by Madhuban Trust, Delhi

में ही यह मालुम होता है कि श्यामसुन्दर भी उनके साथ हैं। श्रीहिताचार्य की प्रधान रति श्रीराधा के चरणों में है और उनका मन सदैव श्रीराधा के रूप-रस के आस्वाद एवं वर्णन में सहज रूप से प्रवृत्त रहता है, यह पद इस तथ्य का अन्यतम उदाहरण है।

नख-शिख शृङ्गार से मंडित श्रीश्यामाश्याम को वन विहार के लिये पधारते देखकर श्रीहितरूपा सहचरी अपनी स्वामिनी की उस समय की अद्भुत शोभा का वर्णन अपनी कृपापात्र सखी से करती हुई कहती हैं: —

व्याख्या: —हे सखी देखो, वृषभानु की दुलारी श्रीराधा आ रही हैं।

(यहाँ श्रीराधा को 'वृषभानु दुलारी' कहकर उनके अद्भुत सौंदर्य में लाड़-दुलार के योगदान को रेखांकित किया गया है।) ॥१॥

(अब श्रीवृषभानुनन्दिनी के रूप का वर्णन करते हुये कहते हैं कि) वे रूप की राशि हैं, अत्यन्त चतुर नायिकाओं की शिरोमणि हैं और अंग-अंग से सुकुमारी हैं ॥२॥

उन्होंने प्रथम उबटन लगाकर स्नान किया है और फिर नील-वर्ण की साड़ी से तन को सज्जित किया है ॥३॥

उनके केश गूँथे हुए हैं, उनके मस्तक पर सुन्दर तिलक शोभायमान है और उनकी माँग सिन्दूर से सँवारी हुई है ॥४॥

मृगछौना के नेत्रों के समान उनके भोले नेत्र अंजन युक्त हैं और उसी के अनुरूप सुन्दर रेखा के द्वारा नेत्रों में अनी बनाई गई है ॥५॥

उनकी सुन्दर नासिका में इन्द्र नीलमणि की कनी जड़ी हुई कंचन की लवंग है और उनकी दंतपंक्ति मिस्सी लगाने से श्याम बनी हुई है ॥६॥

CC-0. Shri Vipin Kumar Col. Deoband. In Public Domain.

Digitized by Madhuban Trust, Delhi

उनके श्रीफल के समान उरोजों पर कसूँभी रंग की कंचुकी कसी हुई है और उसके ऊपर हारावली अनूठी छबि दे रही है ॥७॥

उनकी कटि और उदर कृश हैं, नाभिपुट गम्भीर है और उनकी जंघा एवं नितम्ब भारी हैं ॥८॥

उन्होंने अपनी भूषणों से सज्जित मृणाल (कमल नाल) के समान भुजा श्यामसुन्दर के कंधों पर डाल रखी है ॥९॥

सखी भावापन्न श्रीहित हरिवंश कहते हैं कि प्रिया-प्रियतम युगल करिणी और गज के समान श्रीवृन्दावन में विहार करते रहते हैं ॥१०॥

[४६]

विपिन घन कुंज रतिकेलि भुज मेलि रुचि,
श्याम-श्यामा मिले सरद की जामिनी ॥१॥
ह्वै अति फूल समतूल पिय नागरी,
करिनि-करि मत्त-मनौं विविध गुन रामिनी ॥२॥
सरस गति हास परिहास आवेश बस,
दलित दल मदन-बल कोक रस कामिनी ॥३॥
(जैश्री) हित हरिवंश सुनि, लाल लावन्य भिदे,
प्रिया अति सूर सुख सुरत संग्रामिनी ॥४॥

भूमिकाः—यह शैया विहार का पद है। इसमें बतलाया गया है कि श्यामाश्याम के हृदय में प्रीति का समान उल्लास होते हुए भी प्रेम - विहार में श्रीराधा अपने प्रियतम से कहीं अधिक निपुण एवं 'शूर' हैं।

CC-0. Shri Vipin Kumar Col. Deoband. In Public Domain.

श्रीहित सहचरी श्रीयुगल के विहार का वर्णन अपनी कृपापात्र सखी से करती हुई कहती हैं:—

व्याख्या:—श्रीवृन्दावन की सघन कुञ्ज में परस्पर अंसों पर रुचि-पूर्वक भुजा रखकर श्रीश्यामाश्याम प्रेम-केलि के निमित्त शरद की रात्रि में मिले हैं ।।१।।

प्रियतम श्रीश्यामघन एवं नागरी श्रीराधा के हृदयों में प्रीति की अत्यन्त फूलन (उल्लास) समान है । (उनको देखकर ऐसा मालुम होता है कि) वे विविध गुणों से रमणीय बने हुए मानो मत्त करिणी-गज हैं ।।२।।

सरस गति वाले हास-परिहास के सहित आवेश युक्त श्रृङ्गार रस के द्वारा कामिनी श्रीराधा ने मदन के दल के बल को दलित कर दिया ।

(अर्थात् काम की सेना को छिन्न-भिन्न करके उस पर विजय प्राप्त कर ली ।) ।।३।।

सखी भावापन्न श्रीहित हरिवंश कहते हैं कि हे सखी सुन, सुखमय सुरत-संग्राम में अत्यन्त शूर श्रीप्रिया ने (उधर तो मदन के दल को दलित कर दिया और इधर) अपने प्रियतम को अपने अंग-लावण्य से विद्ध कर दिया है ।।४।।

[४७]

बन की लीला लालहि भावै ।।१।।
पत्र प्रसून बीच प्रतिबिंबहिं नख सिख प्रिया जनावै ।।२।।
सकुच न सकत प्रगट परिरम्भन अलि लम्पट दुरि धावै ।।३।।
संभ्रम देत कुलक कल कामिनी रति-रण कलह मचावै ।।४।।

Digitized by Madhuban Trust, Delhi

उलटी सबै समुझि नैंनन में अञ्जन रेख बनावै ॥५॥
(जैश्री) हित हरिवंश पिरीत रीति बस सजनी श्याम कहावै ॥६॥

भूमिका:—राधावल्लभीय सिद्धांत में हित किंवा प्रेम ही परात्पर तत्व है । वह भोक्ता, भोग्य और प्रेरक के त्रिविध रूपों में नित्य प्रकट रहकर नित्य क्रीड़ा परायण रहता है । भोक्ता श्रीश्यामसुन्दर हैं, भोग्य श्रीराधा हैं और प्रेरक सहचरी तत्व है । प्रेरक-प्रेम दो रूपों में प्रकट है—एक सहचरी गण और दूसरा श्रीवृन्दावन । जिस प्रकार सहचरियाँ लीला की प्रेरक हैं उसी प्रकार वृन्दावन भी लीला का प्रयोजक होता है ।

प्रस्तुत पद में जिस लीला का वर्णन किया गया है उसका आयोजन श्रीवृन्दावन ने किया है और श्रीश्यामसुंदर सहचरी रूप धारण करके ही इस लीला के भँवर से निकल पाये हैं ।

व्याख्या:—**श्रीवृन्दावन की लीलायें श्रीश्यामसुन्दर को प्रिय हैं ॥१॥**

(वहाँ कोई एक अद्‌भुत कुंज है जिसके) **पत्र और पुष्पों में पड़ा हुआ** (श्रीश्यामसुन्दर का) **प्रतिविम्ब नख-शिख से** (सम्पूर्ण रूप से) **श्रीप्रिया का प्रतिविम्ब दिखलाई देता है ॥२॥**

(श्रीश्यामसुन्दर अपने और श्रीप्रिया के प्रतिविम्बों को एक बनता देखकर) **संकोच वश उनका प्रकट रूप से परिरम्भन नहीं कर सकते** । (उनको संकोच यह है कि प्रिया के परिरम्भन को चेष्टा करने पर कहीं वे अपने प्रतिविम्ब का ही आलिंगन न करलें । अतः वे भ्रमर-वृत्ति का आश्रय लेते हैं । भ्रमर गंध-वेत्ता होता है, जिधर से सुगंध आती है उस मार्ग का अनुसरण करके वह पुष्प तक पहुँच जाता है । प्रतिदिम्बों के भ्रम से बचने के लिये) **वे छिपकर लोभी भ्रमर की भाँति अपनी प्रिया के सहज अंग-सौरभ के सहारे उन तक पहुँचने की चेष्टा करते हैं ।**

CC-0. Shri Vipin Kumar Col. Deoband. In Public Domain.

Digitized by Madhuban Trust, Delhi

(छिपने का तात्पर्य यह है कि वे यथासम्भव पत्र-प्रसूनों में अपना प्रतिविम्ब नहीं पड़ने देते ।) ॥३॥

(श्रीश्यामसुन्दर को भ्रमर की भाँति सुगंध का आश्रय लेकर अपने पास आता देखकर) **कामिनी श्रीराधा प्रसन्नता से किलक कर उनको संभ्रम देती हैं अर्थात् घूमकर दूसरी ओर खड़ी हो जाती हैं** (इस प्रकार अनेक बार स्थान परिवर्तन से सारे वन में उनकी अंग-गंध फैल जाती है और श्रीश्यामसुन्दर उन तक पहुँचने में असमर्थ बन जाते हैं ।) **और नायक की भाँति उनके साथ रति रण कलह मचाती हैं ॥४॥**

(अपनी प्रिया का परिरम्भन करने की प्रत्येक चेष्टा विफल होती देखकर और) **यह समझ कर कि इस समय सारी बातें उलटी हो रही हैं वे अपनें हाथ से अपनें नेत्रों में अंजन की रेखा बनाते हैं ॥५॥**

सखी भावापन्न श्रीहित हरिवंश कहते हैं कि प्रीति की रीति के वश में होकर श्यामसुन्दर सहचरी कहलाते हैं । (तात्पर्य यह है कि अपने हाथ से अपने नेत्रों में अंजन की रेखा बनाकर वे अपनी प्रिया की सखी बन जाते हैं और इस प्रकार उनको प्राप्त कर लेते हैं । श्रीवृन्दावन की इस अद्‌भुत कुंज के पत्र-प्रसूनों में सखियों का प्रतिविम्ब प्रिया रूप में नहीं पड़ता और सखी स्वरूप में स्थित होकर श्रीश्यामसुन्दर अपने और अपनी प्रिया के प्रतिविम्बों की एकता को समाप्त करने में समर्थ हो जाते हैं ।

किसी भी प्रकार प्रियतम को प्राप्त कर लेना प्रीति की सहज रीति है और इस रीति के वश में होकर ही श्रीश्यामसुन्दर अपनी प्रियतमा को प्राप्त करने के लिये निःसंकोच भाव से सखी वेश धारण करते हैं ।) ॥६॥

CC-0. Shri Vipin Kumar Col. Deoband. In Public Domain.

Digitized by Madhuban Trust, Delhi

[४८]

बनी वृषभानुनन्दिनी आज ॥१॥
भूषन - बसन विविध पहिरे तन पिय मोहन हित साज ॥२॥
हाव भाव लावन्य भृकुटि लट हरत जुवति जन पाज ॥३॥
ताल-भेद औघर सुर सूचत नूपुर किंकिनि बाज ॥४॥
नव निकुञ्ज अभिराम श्याम सँग नीकौ बन्यौ समाज ॥५॥
(जैश्री) हितहरिवंश विलास-रास जुत जोरी अविचल राज ॥६॥

भूमिका:—इस सुन्दर पद का सम्बंध एक ऐतिहासिक घटना के साथ है। श्रीराधावल्लभजी के पुराने मंदिर (जिसे औरंगजेब ने तोड़ा था) का निर्माण कराने वाले श्रीसुन्दरदास कायस्थ के सामने श्रीहित हरिवंश के ज्येष्ठ पुत्र श्रीवनचंद्र गोस्वामी ने मंदिर निर्माण की आज्ञा देते समय यह शर्त रखी थी कि जिस दिन श्रीजी तुम्हारे द्वारा निर्मित मंदिर में विराजेंगी उससे ठीक एक वर्ष बाद तुम्हारी मृत्यु हो जायगी। श्रीबनचंद्रजी ने यही शर्त गोपाल सिंह यादव और अम्बर (जयपुर) के राजा मानसिंह के सामने भी रखी थी किन्तु वे उसको स्वीकार न कर सके और अन्यत्र जाकर उन्होंने मंदिर बनवाये। सुन्दरदासजी ने इस शर्त को सहर्ष स्वीकार कर लिया और एक वर्ष के श्रीजी के पूरे उत्सव करने के बाद जब वही कार्तिक शुक्ला त्रयोदशी का दिन आया तो उनके शरीर छूटने की बेला उपस्थित हो गई। उस समय रसिक समुदाय ने प्रस्तुत पद का गान उनके समक्ष किया और इस पद को सुनते हुए ही उन्होंने शरीर त्याग किया। तत्कालीन रसिक मंडली में इस पद का कितना समादर एवं महत्व था यह इस घटना से स्पष्ट हो जाता है।

यह पद छोटा होते हुए भी इसमें श्रीवृषभानुनंदिनी के स्वरूप का सम्पूर्ण वर्णन किया गया है। उनका श्रृङ्गार, श्रृङ्गार करने का प्रयोजन, उनका अद्भुत अंग-सौंदर्य एवं उनकी गुणशालिता का

CC-0. Shri Vipin Kumar Col. Deoband. In Public Domain.

Digitized by Madhuban Trust, Delhi

परिचय बड़े मार्मिक ढंग से एक-एक पंक्ति में दे दिया गया है। अंत में सौंदर्य धाम श्रीवृन्दावन की नव निकुंज में अभिराम श्यामसुन्दर के साथ उनके सहज संयोग को सूचित करके इस विलास-रास युक्त नित्य जोड़ी को श्रीवृन्दावन में अविचल राज करने की अशीश दी है।

श्रीहितरूपा सखी श्रीवृषभानुनंदिनी के आज के अद्भुत बानिक का वर्णन अपनी कृपापात्र सखी से करती हुई कहती हैं:—

व्याख्या:—आज श्रीवृषभानुनन्दिनी भली प्रकार सुशोभित हैं ॥१॥

उन्होंने अपने तन पर अनेक प्रकार के भूषण-बसन धारण कर रखे हैं और यह साज (सजावट) उन्होंने अपने मदनमोहन प्रियतम के हित के लिए अर्थात् उनको सुख देने के लिए की है ॥२॥

उनके हाव भाव, उनका अंग लावण्य एवं उनकी भृकुटियों पर झूलती हुई बालों की पतली लटें युवतीजनों के सौन्दर्य-गर्व का हरण करती हैं ॥३॥

उनके नूपुर और किंकिणी के बजने से विचित्र स्वरों एवं ताल-भेद का सूचन होता है ॥४॥

श्रीवृन्दावन की नव निकुञ्ज में अभिराम श्यामसुन्दर के साथ उनकी बड़ी सुन्दर जोड़ी बनी है ॥५॥

सखी भावापन्न श्रीहि[illegible]वंश युगल को आशीश देते हुये कहते हैं कि रास-विलास से युक्त यह अद्भुत जोड़ी श्रीवृन्दावन में अविचल रूप से राज करती रहे ॥६॥

CC-0. Shri Vipin Kumar Col. Deoband. In Public Domain.

Digitized by Madhuban Trust, Delhi

[४९]

देखि सखी राधा पिय केलि ।।१।।
ये दोऊ खोरि, खिरक, गिरि, गहबर,
बिहरत कुंवर कण्ठ भुज मेलि ।।२।।
ये दोऊ नवलकिसोर रूप निधि,
विटप तमाल कनक मनों बेलि ।।३।।
अधर - अदन चुम्बन परिरम्भन,
तन पुलकित आनँद रस झेलि ।।४।।
पट - बंधन कंचुकि कुच परसत,
कोप कपट निरखत कर पेलि ।।५।।
(जैश्री) हित हरिवंश लाल रस-लम्पट,
धाइ धरत उर बीच सकेलि ।।६।।

भूमिका:—इस पद के साथ भी एक ऐतिहासिक घटना जुड़ी हुई है। सम्प्रदाय के आरम्भ काल से ही राधावल्लभीय रसिकों का आग्रह श्रीवृन्दावन के अखण्ड वास के लिये रहा है। नेही नागरीदासजी का नाम आरम्भ के रसिक महानुभावों एवं वाणीकारों में प्रसिद्ध है। वे भी स्वभावतः श्रीवृन्दावन वास के पक्षपाती थे किन्तु सैद्धांतिक मतभेदों के कारण यहाँ कुछ ऐसी परिस्थितियाँ पैदा हो गई जिनसे उनका निर्विघ्न भजन करना कठिन हो गया। धर्म संकट में पड़कर उन्होंने श्रीहिताचार्य की वाणी में ही अपना मार्ग ढूँढ़ने की चेष्टा की और वह उनको प्रस्तुत पद में मिल गया। इस पद के आरम्भ में ही कहा गया है कि श्री श्यामाश्याम 'खोरि खिरक गिरि गहवर' में विहार करते हैं। इस बात से संकेत ग्रहण करके उन्होंने बरसाने को अपना स्थाई निवास स्थल बना लिया और जीवन पर्यन्त वहीं रहे।

CC-0. Shri Vipin Kumar Col. Deoband. In Public Domain.

Digitized by Madhuban Trust, Delhi

इस पद में हित चौरासी के अन्य पदों की भाँति श्रीश्यामाश्याम की निकुंज-केलि का विशद वर्णन है। किन्तु इस केलि को श्रीवृन्दावन में सीमित न रखकर सम्पूर्ण ब्रज प्रदेश में फैला दिया गया है। इससे जहाँ एक ओर श्यामाश्याम की केलि को विस्तृत भूमिका मिल जाती है वहाँ दूसरी ओर ब्रजलीला और निकुंज लीला का पुराना द्वन्द्व खड़ा हो जाता है और इसको लेकर हित चौरासी के सब टीकाकार परेशान हैं।

हमारी राय में, ब्रजलीला और निकुंज लीला का भेद स्थान को लेकर नहीं है, भाव को लेकर है। ब्रजलीला में कांता भाव है, निकुंज लीला में सखी भाव है, ब्रजलीलाओं में सख्य, वात्सल्य आदि कई भावों की लीलायें हैं और निकुंज लीला एकमात्र मधुर भाव से सम्बंधित है। ब्रजलीलाओं में भी मधुर भाव है किन्तु वह बहु-नायिकात्व से संकुलित है जबकि निकुंज लीला में एकमात्र नायक श्रीश्यामसुन्दर और एकमात्र नायिका श्रीराधा हैं। इनके अतिरिक्त अन्य भी छोटे-छोटे भाव भेद हैं और ब्रज एवं निकुंज लीला की भिन्नता इन भेदों को लेकर ही है। यदि भाव सम्पूर्णतः निकुंज लीला का है तो उक्त लीला का स्थ[illegible] 'खोरि, खिरक, गिरि, गहवर' होने से उसमें कोई अंतर नहीं पड़ता। वृन्दावन बिहारी श्रीश्यामाश्याम यदि 'खोरि-खिरक गिरि गहवर' में विहार करेंगे तो वहाँ, भाव के बल से, श्रीवृन्दावन ही उपस्थित रहेगा। स्वयं नागरीदासजी ने अपने परिचयात्मक सवैये में कहा है कि मेरा निवास बरसाने में है किन्तु मैं (भाव की दृष्टि से) वास वृन्दावन में ही करता हूँ,

'सुन्दर श्री बरसानो निवास
और वास बसों श्रीवृन्दावन धाम है

इस दृष्टि से श्रीश्यामाश्याम के विहार-क्षेत्र को विस्तृत कर देने से निकुंज-भाव में कोई विप्रतिपत्ति उपस्थित नहीं होती।

CC-0. Shri Vipin Kumar Col. Deoband. In Public Domain.

श्रीश्यामाश्याम की केलि का विस्तृत परिवेश में वर्णन करती हुई श्रीहितरूपा सखी अपनी कृपापात्र सखी से कहती हैं:—

व्याख्या:— हे सखी, श्रीराधा एवं उनके प्रियतम श्रीश्यामसुन्दर की प्रेम-केलि को देख ॥१॥

ये दोनों कुंवर परस्पर कण्ठों में भुजा डालकर वीथियों में, गोष्ठों में, गोवर्धन गिरि पर एवं गहवर वन में निर्बाध गति से विहार करते रहते हैं ॥२॥

तमाल वृक्ष एवं कनक लता के समान ये दोनों नवलकिशोर रूप के समुद्र हैं ॥३॥

ये दोनों अधर रस पान करते हुए परस्पर चुम्बन परिरम्भन कर रहे हैं और उससे उत्पन्न होनें वाले आनन्द रस के कारण रोमांचित हो रहे हैं ॥४॥

श्रीश्यामघन वस्त्र के बन्धन रूपी कंचुकी में कसे हुए कुचों का स्पर्श करते हैं और श्रीप्रिया कपट कोप से उनके हाथ को पीछे धकेल कर उनकी ओर देखती हैं।

('पट बंधन कंचुकी' से तात्पर्य यह है कि इस समय श्रीप्रिया के कुचों पर सिली हुई कंचुकी के स्थान में छूटा हुआ वस्त्र कंचुकी के रूप में बंध रहा है।) ॥५॥

सखी भावापन्न श्रीहित हरिवंश कहते हैं कि रस लोभी श्रीश्यामघन श्रीप्रिया को गहक कर अपने हृदय के मध्य में समेट लेते हैं ॥६॥

नवलनागरि, नवल नागर किसोर मिलि,
कुञ्ज कोमल कमल दलन सिज्या रची ॥१॥

Digitized by Madhuban Trust, Delhi

गौर - सांवल अंग रुचिर तापर मिले,
सरस मनि नील मनों मृदुल कंचन खची ॥२॥
सुरत नीवी निबन्ध हेत प्रिय मानिनी,
प्रिया की भुजन में कलह मोहन मची ॥३॥
सुभग श्रीफल उरज पानि परसत रोष,
हुंकार गर्व दृग - भंगि भामिनी लची ॥४॥
कोक कोटिक रभस रहसि हरिवंश हित,
विविध कल माधुरी किमपि नाहिन बची ॥५॥
प्रणय मय रसिक ललितादि लोचन चषक,
पिवत मकरंद सुख-रासि अंतर सची ॥६॥

भूमिका:—श्रीराधाश्यामसुन्दर सौंदर्य के अपार और अगाध सागर हैं और 'सुन्दरे किन्नु सुन्दरम्'—सुन्दर की हर चेष्टा सौंदर्यमई होती है। इनके विहार-सागर में, इसीलिये, सौंदर्य की लहरें सहज रूप से उठती रहती हैं। श्रीराधाश्यामसुन्दर की विविध काम-चेष्टाओं में से प्रस्फुटित होकर यह सौंदर्य-लावण्यमई तरंगें केलि-सागर को सदैव तरंगायित रखती हैं।

प्रस्तुत पद शैया-विहार का है। इस विहार में उदवेलित होने वाले प्रचुर सौंदर्य को इस पद में सुंदरतम अभिव्यक्ति दी गई है और उसको रसिकजनों के दृष्टि पथ में लाया गया है।

श्रीहितरूपा सहचरी सहज शोभाशाली श्रीवृन्दावन के निकुंज-मंदिर में श्रीश्यामाश्याम के अदभुत शैया-विहार का वर्णन अपनी कृपापात्र सखी से करती हुई कहती हैं:—

व्याख्या:—**नवल नागरि (परम चतुरा) श्रीराधा एवं नवल नागर किशोर श्रीश्यामसुन्दर ने मिलकर कोमल कमल के दलों से श्रीवृन्दावन की कुञ्ज में शैया की रचना की है।**

CC-0. Shri Vipin Kumar Col. Deoband. In Public Domain.

(सामान्यतः सखीजन शैया की रचना करती हैं। आज स्वयं श्रीश्यामाश्याम के द्वारा शैया का निर्माण विहार के प्रति उनके असाधारण चाव एवं उन्मुखता का सूचन करता है। श्रीश्यामाश्याम दोनों के लिये 'नागरी' और 'नागर' का प्रयोग उनके विलास-कौशल के साथ रचना-चातुर्य का भी द्योतक है । श्रीराधा ने शैया के जिस भाग की रचना की है वह अरुण कमल के दलों से की है और श्रीश्यामसुंदर ने जिस भाग की रचना की है वह नीलकमल के दलों से की है।) ॥१॥

उस शैया (के नील भाग) पर गौर वर्ण श्रीराधा एवं (अरुण भाग पर) नील वर्ण श्रीश्यामघन बड़े आकर्षक ढंग से परस्पर इस प्रकार मिलित हुए हैं जैसे सरस नीलमणि कोमल कंचन में खचित हो गई हो ॥२॥

(अब विहार का वर्णन करते हुए कहते हैं कि) **सुरत रस के उपभोग के लिये श्रीश्यामसुन्दर सहज मानवती श्रीराधा के नीवी-बन्धन के मोचन की चेष्टा करते हैं । श्रीराधा उनकी इस चेष्टा का स्वीकृतिपूर्ण प्रतिरोध करती हैं जिसके कारण उनकी भुजाओं में अत्यन्त मन मोहक कलह मची हुई है ॥३॥**

(इस रसमय प्रतिरोध से निरुत्साहित न होकर) **श्रीश्यामघन के द्वारा श्रीराधा के सुन्दर उरोजों का स्पर्श करते ही वे कपट कोप पूर्वक हुंकार करती हैं । उनकी दृग भंगिमा गर्वपूर्ण बन जाती है एवं** (भाव के वेग से) **वे कुछ झुक जाती हैं ॥४॥**

(सखी भावापन्न) **श्रीहित हरिवंश कहते हैं कि श्यामाश्याम के इस एकान्त प्रेम-विहार में वेगपूर्ण कोटि-कोटि शृङ्गार कलाओं की विविध आकर्षक मधुरिमायें निःशेष रूप से उदित हुई हैं ॥५॥**

परम प्रेमवती ललितादिक सहचरीगण इस माधुरी के मकरंद (सुगंधित रस) **को अपने लोचन रूपी चषकों** (पान-पात्र) **में**

CC-0. Shri Vipin Kumar Col. Deoband. In Public Domain.

Digitized by Madhuban Trust, Delhi

भरकर पान कर रही हैं और (इस विहार में से निष्पन्न होने वाली) सुख राशि को उन्होंने अपने अन्तःकरण में सजा लिया है ।।६।।

[५१]

दान दैरी नवल किसोरी ।।१।।
माँगत लाल लाड़िलौ नागर,
प्रगट भई दिन - दिन की चोरी ।।२।।
नव नारंग कनक हीरावलि,
विद्रुम सरस जलज मनि गोरी ।।३।।
पूरित रस पीयूष जुगल घट,
कमल कदलि खंजन की जोरी ।।४।।
तोपै सकल सौंज दामन की,
कत सतरात कुटिल दृग भोरी ।।५।।
नूपुर रव किंकिनी पिसुन घर,
(जैश्री) हित हरिवंश कहत नहिं थोरी ।।६।।

भूमिकाः—दानलीला का सम्बंध ब्रज लीलाओं के साथ है। किंतु ये लीला हित चौरासी एवं श्रीस्वामी हरिदासजी कृत 'केलि-माल' दोनों में देखने को मिलती है । [illegible]कुंज लीला के साथ इसका कोई सम्बंध न होते हुये भी दोनों रसिकाचार्यों के द्वारा इसका ग्रहण किसी पुरानी परम्परा का निर्वाह प्रतीत होता है।

श्रीहिताचार्य ने बड़े कौशल से इस लीला का उपयोग सुंदरता की सीमा अपनी स्वामिनी के अद्भुत अँग-सौंदर्य के वर्णन में किया है। काव्य-कला की दृष्टि से, उपमेय को गुप्त रखकर केवल उपमानों के सहयोग से इस पद में सौंदर्य की अभिव्यक्ति की गई है।

CC-0. Shri Vipin Kumar Col. Deoband. In Public Domain.

Digitized by Madhuban Trust, Delhi

श्रीराधा के अनुपम रूप-सौंदर्य को देखकर आज श्रीश्यामघन के हृदय में उसका साधिकार उपभोग करने की प्रवृत्ति जाग्रत हुई है और वे कुंजवीथियों के चतुष्पथ पर राजकर-संग्राहक की ठसक लेकर खड़े हो गये हैं। उधर श्रीप्रिया अपनी अद्भुत सौंदर्य-सम्पत्ति को लेकर उस स्थान पर मत्त गयन्द गति से पधारती हैं। उनके दर्शन से श्रीश्यामसुंदर के हृदय में अधिकार की भावना क्षीण होने लगती है और वे श्रीहितरूपा सहचरी को अपने पास बुलाकर उनसे अपना अभिमत कहते हैं। श्रीप्रिया के सामने अविचल दैन्य भाव रखने वाले श्रीश्यामघन की बात सुनकर हित सजनी आश्चर्य चकित रह जाती हैं। किन्तु दोनों के रसोपभोग की अद्भुत रीति को ध्यान में रखकर वे श्यामघन के आग्रह को श्रीप्रिया से निवेदित करती हुई कहती हैं:—

व्याख्या:—**हे नवलकिशोरी, आप दान (राज्य-कर) दीजिये ॥१॥**

तुम्हारे नागर और लाड़िले प्रियतम आज कर-संग्रह के लिए सन्नद्ध हुए हैं और वे कहते हैं कि तुमने अनेक दिनों से जो कर की चोरी कर रखी है वह आज प्रकट हो गई है।

(तात्पर्य यह है कि कर की चोरी के कारण तुम्हारे पास जो अतुल सम्पत्ति इकट्ठी हुई है वह तुम्हारे श्रीअंग में प्रत्यक्ष दिखलाई दे रही है।) ॥२॥

हे गोरी, तुम्हारे कपोल ही नवीन नारंगी हैं, तुम्हारा तन ही कनक है, तुम्हारे दशन ही हीरों की पंक्ति हैं, तुम्हारे अधर ही विद्रुम (मूंगा) हैं, तुम्हारी उज्ज्वल हँसी ही जलज मणि (मोती) है ॥३॥

तुम्हारे युगल उरोज ही अमृत रस से भरे हुए कनक-कलश हैं, तुम्हारा मुख ही कमल है, तुम्हारी जंघा ही कदली खंभ हैं और तुम्हारे चंचल नेत्र ही खंजन की जोड़ी हैं ॥४॥

CC-0. Shri Vipin Kumar Col. Deoband. In Public Domain.

Digitized by Madhuban Trust, Delhi

हे भोली स्वामिनी, तुम्हारे प्रियतम की दृष्टि में तुम्हारे पास सब कीमती वस्तुयें हैं। (अतः उनकी माँग पर) तुम अपने नेत्रों को बंक बनाकर क्यों कुपित होती हो ? ॥५॥

श्रीहितरूपा सहचरी कहती हैं (यदि आप यह समझ रही हैं कि आपकी दासियों में से किसी ने आपके आगमन की सूचना आपके प्रियतम को दी है तो यह बात भी नहीं है।) तुम्हारे श्रीअंग में ही नूपुर और किंकिणी दो चुगलखोर बसे हुए हैं जो शब्दायमान होकर दूर से ही तुम्हारे पधारने की पूर्णरूप से सूचना दे देते हैं ॥६॥

[५२]

देखो माई, सुन्दरता की सींवाँ ॥१॥

ब्रज नवतरुनि कदम्ब नागरी,
निरखि करत अधग्रींवाँ ॥२॥

जो कोऊ कोटि कलप लगि जीवै,
रसना कोटिक पावै।

तऊ रुचिर बदनारबिंद की,
सोभा कहत न आवै ॥३॥

देव - लोक, भू - लोक, रसातल,
सुनि कवि - कुल मति डरिये।

सहज माधुरी अङ्ग - अङ्ग की,
कहि कासौं पटतरिये ॥४॥

(जै श्री) हित हरिवंश प्रताप, रूप, गुन,
वय, बल श्याम उजागर।

जाको भ्रूविलास बस पशु[illegible]व,
दिन विथकित रस सागर ॥५॥

CC-0. Shri Vipin Kumar Col. Deoband. In Public Domain.

Digitized by Madhuban Trust, Delhi

भूमिका:—इस पद में श्रीराधा के रूप-सौंदर्य का वर्णन है। इसमें नख शिख पद्धति को अंगीकार न करके सामान्य रीति से रूप वर्णन किया गया है। प्रेम-सौंदर्य धाम श्रीवृन्दावन में श्रीराधा के रूप-सौंदर्य की वर्षा सी होती रहती है, इस बात को ध्वनित करने के लिए इस पद को वर्षाकालीन मलार राग में बाँधा गया है। रूप-सौंदर्य वस्तुत: अनिर्वचनीय वस्तु है और रससिद्ध कविगण अभिव्यक्ति की नाना भंगियों से उसको केवल ध्वनित ही करते रहे हैं।

प्रस्तुत पद में श्रीराधा के अंग माधुर्य को 'सहज' कहा गया है। सहज वस्तु का बौद्धिक क्रियाओं के द्वारा आकलन सम्भव नहीं है अतः शब्दों के द्वारा इसकी व्यंजना भी असम्भव है।

सेवक वाणी में इस 'सहज माधुरी' के आधार पर श्रीराधा के स्वरूप का वर्णन इस प्रकार किया गया है,

सुभग सुन्दरी, सहज सिङ्गार।
सहज शोभा सर्वाङ्ग प्रति, सहज रूप वृषभानु नन्दिनी।
सहजानन्द कदम्बिनी, सहज विपिनवर उदित चन्दिनी॥
सहज केलि नित-नित नवल, सहज रंग सुख-चैन।
सहज माधुरी अंग प्रति सु मोपै कहत बनै न॥

श्रीहित सखी अपनी कृपापात्र सखी से श्रीराधा के अनुपम रूप-सौंदर्य का वर्णन करती हुई कहती हैं:—

व्याख्या:—**हे सखी,** (श्रीवृन्दावन निकुंज मंदिर में विराजमान इस) **सुन्दरता की सीमा को देखो ॥१॥**

(व्रज देवियों जैसा रूप-सौंदर्य किसी का नहीं है, किन्तु इन) **व्रज नव तरुणियों के समूह में जो सर्वाधिक चतुरा हैं वे भी श्रीराधा की सुन्दरता को देखकर नीची ग्रीवा कर लेती हैं।** (अपनी पराजय स्वीकार कर लेती हैं।) ॥२॥

CC-0. Shri Vipin Kumar Col. Deoband. In Public Domain.

यदि कोई कोटि कल्पों की आयु पावै और उसके साथ रूप वर्णन के लिये कोटि रसना भी मिल जाँय तो भी इस सुन्दर मुखारविन्द की शोभा का कथन करने में वह अपने को असमर्थ पायेगा ॥३॥

(यदि कोई यह कहे कि कविगण प्रत्येक वस्तु का वर्णन उपमा आदिक अलंकारों की सहायता से कर देते हैं तो श्रीराधा के सौंदर्य का वर्णन भी उसी रीति से कर देंगे । किन्तु यहाँ स्थिति यह है कि इस अद्भुत सौंदर्य की चर्चा मात्र सुनकर) तीनों लोकों के कविगणों की बुद्धि भयभीत बन गई है । वे यह नहीं समझ पा रहे हैं कि श्रीराधा के अंगों की सहज माधुरी का कथन उसको किसके समान बतलाकर करें ।

(यह सौंदर्य अद्वितीय होने के कारण ही अनिर्वचनीय बना हुआ है ।) ॥४॥

सखी भावापन्न श्रीहित हरिवंश कहते हैं कि समानता देने के लिये एकमात्र श्रीश्यामसुन्दर हैं जो अपने प्रताप, रूप, गुण, बल और वय के लिए प्रसिद्ध हैं । किन्तु उनकी यह स्थिति है कि वे स्वयं रस-सागर होते हुए भी श्रीराधा के भृकुटि-विलास के वशीभूत होकर मृग के समान थकित बने रहते हैं ॥५॥

[५३]

देखो माई अवला कै बल-रासि ।
अति गज मत्त निरंकुस मोहन निरखि बँधे लट-पासि ॥१॥
अब ही पंगु भई मन की गति बिनु उद्दिम अनियास ।
तब की कहा कहौं जब प्रिय प्रति चाहत भृकुटि विलास ॥२॥

CC-0. Shri Vipin Kumar Col. Deoband. In Public Domain.

कच संजमन ब्याज भुज दरसत मुसकन बदन विकास।
हा हरिवंश अनीत रीत हित कत डारत तन त्रास ॥३॥

भूमिका:—इस पद में अपन्हुति अलंकार का आश्रय लेकर श्रीराधा के रूप-सौंदर्य का वर्णन किया गया है। साथ ही इस पद की 'अबही पंगु भई मन की गति बिनु उद्दिम अनियास' पंक्ति में सौंदर्य की परिभाषा दी गई है-- सौंदर्य वह है जिसके दर्शन से अनायास मन की गति पंगु बन जाय और वह उसमें डूब जाय। आचार्य रामचन्द्र शुक्ल ने सौंदर्य की अनेक परिभाषाओं की तुलना करने के बाद इसी व्याख्या को स्वीकार किया है। उनके शब्दों में 'जिस वस्तु के प्रत्यक्ष ज्ञान या भावना से तदाकार परिणति जितनी ही अधिक होगी उतनी ही वह वस्तु हमारे लिये सुन्दर कही जायेगी। सुंदर वस्तु को देखकर अन्त:सत्ता की तदाकार परिणति सौंदर्य की अनुभूति है।' पद की अंतिम पंक्ति में प्रेम की सहज-स्वाभाविक अनीतिमय रीति का भी उल्लेख किया गया है जिसका विस्तार रसिकोत्तसजी के संस्कृत ग्रन्थ 'प्रेम-पत्तनम्' में देखा जा सकता है।

वर्षा काल है। श्रीवृन्दावन की सघन कुंज में श्रीराधा मोहन सिंहासन पर विराजमान हैं। अनायास श्रीश्यामघन की दृष्टि श्रीराधा के अद्भुत आनन पर टिक कर निर्निमेष बन जाती है एवं उनका मन उस अनुपम सौंदर्य से अभिभूत होकर व्याकुल बन जाता है। उनकी यह स्थिति देखकर श्रीहित सजनी अपनी स्वामिनी के अतुलनीय बल की ओर संकेत करती हुई अपनी कृपापात्र सखी से कहती हैं:—

व्याख्या:—**हे सखी, देखो इन अपनी स्वामिनी को अबला मानें या बल की राशि मानें। क्योंकि अत्यन्त मद मत्त गज के समान निरंकुश मदनमोहन इनके सुन्दर मुख पर लटकी हुई घुंघराले बालों की एक लट के दर्शन मात्र से उसके फंदे में बंध गये।**

Digitized by Madhuban Trust, Delhi

(हे सखी देख तो सही) श्रीप्रिया के दर्शन मात्र से आरम्भ में ही मोहनलाल के मन की गति बिना किसी उद्यम अथवा प्रयास के पंगु बन गई है । मैं यह सोचती हूँ कि उस समय जब श्रीप्रिया अपने प्रियतम की ओर भृकुटि-विलास युक्त दृष्टि से देखती होंगी तब क्या होता होगा ॥२॥

(इतने में श्रीराधा मुसकराती हुई अपने बालों की छूटी हुई लटों को संभालने की चेष्टा आरम्भ करती है, जिसको देखकर) सखी भावापन्न श्रीहित हरिवंश अत्यन्त कष्टातुर होकर कहते हैं कि हा-हा, इनका मुसकराकर केशों का सँवारना तो बहाना मात्र है, लक्ष्य तो अपने प्रियतम को अपनी भुजाओं की गौरता का प्रदर्शन करना है। किन्तु यह समझ में नहीं आता कि उनकी इस क्रिया के द्वारा प्रियतम के तन पर जो कष्ट पड़ रहा है उसका ध्यान श्रीप्रिया (उनके प्रति अगाध प्रेम रखते हुए भी) क्यों नहीं रख रही हैं ? इससे यह सिद्ध होता है कि प्रीति की रीति अनीति मय होती है ॥३॥

[५४]

नयौ नेह, नव रंग, नयौ रस,
नवल श्याम वृषभानु किशोरी ॥१॥
नव पीताम्बर, नवल चूनरी,
नई - नई बूंदन भीजत गोरी ॥२॥
नव वृन्दावन हरित मनोहर,
नव चातक बोलत मोर मोरी ॥३॥
नव मुरली जु मलार नई गति,
स्त्रवन सुनत आये घन घोरी ॥४॥

CC-0. Shri Vipin Kumar Col. Deoband. In Public Domain.

Digitized by Madhuban Trust, Delhi

नव भूषन नव मुकुट विराजत,
नई - नई उरप लेत थोरी - थोरी ।।५।।

(जैश्री) हित हरिवंश असीस देत मुख,
चिरजीवौ भूलत यह जोरी ।।६।।

भूमिका:—सौंदर्य स्वरूपत: नित्य नवीन बनने वाला तत्व है— क्षणे-क्षणे यन्नवतामुपैति तदेव रूपं रमणीयताया: । इसी भाँति प्रेम भी सदैव नवीन बनकर ही स्थायी होता है। श्रीश्यामाश्याम का प्रेम और रूप नित्य स्थित रहने वाले हैं और उनकी नित्य स्थिति उनके नित्य नवीन बनने के कारण ही है। श्रीश्यामाश्याम से संबंधित सभी वस्तुयें उन्हीं की भाँति प्रेम-सौंदर्य की ही विभिन्न परिणतियाँ मानी जाती हैं अत: वे भी सदैव नवीन बनती रहती हैं।

वर्षा काल की नवीन सुषमा ने श्रीश्यामाश्याम के हृदय में रास-विलास की नवीन रुचि का उद्दीपन किया है और वे नवीन वस्त्राभूषण धारण करके नवीन बने हुए श्रीवृन्दावन में नृत्य की नवीन गतियों का प्रकाश कर रहे हैं। इन दोनों के अद्भुत सौंदर्य एवं प्रेम का दर्शन करके हितरूपा सहचरी आनन्द विभोर बन जाती हैं और उनकी आज की नवीन छटा का गद्गद् चित्त से वर्णन करती हुई अपनी कृपापात्र सखी से कहती हैं:—

व्याख्या:—**हे सखी, देख आज श्रीयुगल का परस्पर नेह नया है, उनका रंग ढंग नया है, उनका रसानुभाव नया है एवं श्रीश्याम-सुन्दर और वृषभानुकिशोरी का रूप-सौंदर्य भी नया है ।।१।।**

श्रीश्यामघन का पीताम्बर नवीन है, श्रीराधा की चूनरी नवीन है एवं नई-नई बूँदों से गोरी श्रीवृषभानु नन्दिनी भीग रही हैं।

CC-0. Shri Vipin Kumar Col. Deoband. In Public Domain.

Digitized by Madhuban Trust, Delhi

(अर्थात् उनके चित्त में प्रेम-विलास की नई-नई तरंगें उठ रही हैं।) ॥२॥

नवीन वृन्दावन अपनी हरियाली से मनोहर बना हुआ है एवं नवीन चातक और नवीन मोर-मोरी बोल रहे हैं ॥३॥

नवीन मुरली में मलार राग नई गति से बज रहा है जिसको श्रवण करके सघन मेघ घिर आये हैं ॥४॥

श्रीश्यामाश्याम के आभूषण नवीन हैं और नवीन मुकुट उनकी शोभा वृद्धि कर रहा है एवं वे दोनों ठहर-ठहर कर नृत्य की नवीन गतियाँ ले रहे हैं ॥५॥

सखी भावापन्न श्रीहित हरिवंश इन दोनों नित्य नवीनों को मुंह भरकर अशीष देते हुये कहते हैं कि यह जोड़ी भूतल पर चिर-काल तक अविचल रहे ॥६॥

[५५]

आजु दोऊ दामिनी मिलि बहसी ॥१॥
बिच लै श्याम घटा अति नूतन ताके रंग रसी ॥२॥
एक चमकि चहुँ ओर सखीरी अपने सुभाय लसी।
आई एक सरस गहनी में दुहुँ भुज बीच बसी ॥३॥
अम्बुज नील उभय विधु राजत तिनकी चलन खसी।
(जैश्री) हित हरिवंश लोभ भेटन मन पूरन सरद ससी ॥४॥

भूमिकाः—यह पद तुल्ययोगिता अलंकार का सुन्दर उदाहरण है। प्रस्तुत या अप्रस्तुत पदार्थों का जहाँ एक धर्म के द्वारा सम्बन्ध दिखलाया जाता है वहाँ तुल्ययोगिता अलंकार होता है। यह एक-

CC-0. Shri Vipin Kumar Col. Deoband. In Public Domain.

Digitized by Madhuban Trust, Delhi

धर्मता या तो गुण में होती है या क्रिया में होती है। प्रस्तुत पद में दामिनि और श्रीराधा की एक धर्मता गुण और क्रिया दोनों में दिखलाई गई है। अत्यन्त नूतन श्याम घटा के रंग में रँगना यह दामिनि का गुण है और उसमें चमक कर चारों ओर छा जाना ये उसकी क्रिया है।

इस पद में वर्षा कालीन विहार का वर्णन है और उसको प्राकृतिक घन दामिनी की प्रतियोगिता में रखकर किया गया है। श्रीवृन्दावन भूतल पर श्रीश्यामाश्याम का मिलन घन दामिनी के समान ही होता है और उसमें जो उज्ज्वलता और सरसता है वह प्राकृतिक घन दामिनी के मिलन में सम्भव नहीं है। प्राकृतिक दामिनी की चंचलता देखकर श्रीराधा में चांचल्य का उद्दीपन होता है और दोनों दामिनियों के बीच में बहस जैसी छिड़ जाती है। श्रीहित-रूपा सहचरी इसका वर्णन अपनी कृपापात्र सखी से करती हुई कहती हैं:—

व्याख्या:—**हे सखी आज दोनों** (प्राकृतिक दामिनी एवं श्रीराधा) **मिलकर बहस कर रही हैं ॥१॥**

दोनों अत्यन्त नूतन श्याम घटा को बीच में लेकर उनके रंग में रँग रही हैं ॥२॥

हे सखी, (प्राकृतिक दामिनी) **चारों ओर चमककर अपने स्वाभाविक रूप में शोभायमान हुई और दूसरी** (श्रीराधा) **अपने प्रियतम श्यामघन की सरस पकड़ में आ गई और उनकी दोनों भुजाओं के बीच में स्थित हो गई ॥३॥**

(जब श्रीराधा अनायास अपने प्रियतम की दोनों भुजाओं के बीच में स्थित हो गईं तब प्रियतम ने उनके मुखचन्द्र को अपने दोनों हाथों में लेकर उसका चुम्बन करना चाहा। उसका वर्णन करते हुए कहते हैं कि) **श्रीश्यामसुन्दर के नीलकमल के समान करों में**

CC-0. Shri Vipin Kumar Col. Deoband. In Public Domain.

Digitized by Madhuban Trust, Delhi

श्रीराधा का मुखचन्द्र शोभायमान है किन्तु चन्द्र दर्शन से कमल का विकास अवरुद्ध हो जाता है अतः श्रीश्यामघन के कर कमलों की गति भी च्युत हो गई है । सखी भावापन्न श्रीहित हरिवंश कहते हैं कि फिर भी उनके मन में पूर्ण शरद चन्द्र को भेटने का लोभ ज्यों का त्यों बना हुआ है ।

('अम्बुज नील' का कर कमल अर्थ श्रीलोकनाथ की टीका में दिया हुआ है ।) ॥४॥

[५६]

हौं बलिजाऊँ नागरी श्याम ॥१॥

ऐसे ही रंग करौ निसि बासर,
वृन्दाविपिन कुटी अभिराम ॥२॥

हास बिलास सुरत रस सींचन,
पशुपति - दग्ध जिवावत काम ॥३॥

(जैश्री) हित हरिवंश लोल लोचन अलि,
करहु न सफल सकल सुखधाम ॥४॥

भूमिकाः—श्रीवृन्दावन की हरी भरी कुंजों में श्रीश्यामा-श्याम को पावस ऋतु का पूर्ण उपभोग करते देखकर उनकी दासियों का मन आनन्द पूरित हो गया है । उनके प्रेम-विहार के दर्शन से छककर हितरूपा सहचरी उन पर बलिहार होती हुई साग्रह निवेदन करती हैं:—

व्याख्याः—हे परम चतुर श्रीराधाश्यामसुन्दर, मैं तुम पर बलिहार होती हूँ ॥१॥

CC-0. Shri Vipin Kumar Col. Deoband. In Public Domain.

Digitized by Madhuban Trust, Delhi

(हम दासीजनों की एकमात्र यही आकाँक्षा है कि) तुम दोनों श्रीवृन्दावन की अभिराम कुंज-कुटीर में सदैव इसी प्रकार रस-वर्षण करते रहो ।।२।।

तुम दोनों ने हास-विलास युक्त शृङ्गार रस के सिंचन से शिवजी द्वारा दग्ध कामदेव को पुनः जीवन प्रदान किया है ।।३।।

सखी भावापन्न श्रीहित हरिवंश कहते हैं कि हे सम्पूर्ण सुखों के धाम, (तुम दोनों के अद्भुत रूप सौंदर्य का एक साथ दर्शन करने की चेष्टा में स्वभावतः) चंचल बने हुये तुम्हारी सहचरियों के नेत्रों को तुम दोनों इसी प्रकार सफल बनाते रहो ।।४।।

[५७]

प्रथम यथामति प्रनऊँ श्रीवृन्दावन अतिरम्य ।
श्रीराधिका कृपा बिनु सब के मनन अगम्य ।।१।।
वर यमुनाजल सींचन दिनहीं सरद - बसंत ।
विविध भाँति सुमनस के सौरभ अलिकुल मंत ।।२।।
अरुन नूत पल्लव पर कूजत कोकिल कीर ।
निर्तन करत सिखीकुल अति आनन्द अधीर ।।३।।
बहत पवन रुचि दायक सीतल - मंद - सुगन्धु ।
अरुन, नील, सित मुकुलित जहाँ तहाँ पूषन - बन्धु ।।४।।
अति कमनीय विराजत मन्दिर नवल निकुञ्ज ।
सेवत सगन प्रीतिजुत दिन मीनध्वज - पुञ्ज ।।५।।
रसिक रासि जहाँ खेलत श्यामाश्याम किसोर ।
उभय बाहु परिरंजित उठे उनीदे भोर ।।६।।

CC-0. Shri Vipin Kumar Col. Deoband. In Public Domain.

Digitized by Madhuban Trust, Delhi

कनक कपिस पट सोभित सुभग साँवरे अङ्ग।
नील बसन कामिनी उर कंचुकी कसूंभी सुरङ्ग ॥७॥
ताल रबाब मुरज डफ बाजत मधुर मृदंग।
सरस उकति-गति सूचत वर बँसुरी मुख चंग ॥८॥
दोऊ मिलि चाँचर गावत गौरी राग अलाप।
मानस-मृग बल बेधत भृकुटि धनुष दृग चाँप ॥९॥
दोऊ कर तारिनु पटकत लटकत इत उत जात।
हो-हो-होरी बोलत अति आनन्द कुलकात ॥१०॥
रसिक लाल पर मेलत कामिनि बंदन धूरि।
पिय पिचकारिनु छिरकत तकि-तकि कुमकुम पूरि ॥११॥
कबहुँ-कबहुँ चन्दन तरु निर्मित तरल हिंडोल।
चढ़ि दोऊ जन झूलत फूलत करत कलोल ॥१२॥
वर हिंडोल झकोरन कामिनी अधिक डरात।
पुलकि-पुलकि वेपथ अँग प्रीतम उर लपटात ॥१३॥
हितचिंतक निज चेरिनु उर आनन्द न समात।
निरखि निपट नैंनन सुख तृण तोरत बलि जात ॥१४॥
अति उदार विवि सुन्दर सुरत सूर सुकुमार।
(जैश्री) हित हरिवंश करौ दिन दोऊ अचल बिहार ॥१५॥

भूमिकाः—हित चौरासी में फाग विहार का वर्णन करने वाला यह एकमात्र पद है। इसकी एक विशेषता यह है कि फाग के बाद प्रतिपदा को होने वाले डोल का भी इस पद में समावेश कर लिया गया है—अन्य रसिक महात्माओं ने डोल के स्वतंत्र पद गाये हैं।

CC-0. Shri Vipin Kumar Col. Deoband. In Public Domain.

Digitized by Madhuban Trust, Delhi

यह पद श्रीवृन्दावन के विस्तृत वर्णन से आरंभ होता है। इसकी प्रथम पंक्ति –'प्रथम यथामति प्रनऊँ वृन्दावन अतिरम्य' में 'प्रथम' एवं 'यथामति' शब्द श्रीहिताचार्य द्वारा स्वीकृत श्रीवृन्दावन के स्वरूप पर प्रकाश डालते हैं। हित-सिद्धांत में हित किंवा तत्सुख-मय प्रेम ही परात्पर तत्व है और श्रीश्यामाश्याम, वृन्दावन एवं सहचरी गण उसी की विभिन्न परिणतियाँ हैं। नेही नागरीदासजी ने बतलाया है कि प्रेम का सहज रूप-सौंदर्य श्रीराधा के स्वरूप में, उसका लावण्य श्रीश्यामसुन्दर के रूप में, उसका अंगभूत स्नेह सह-चरीगण के रूप में एवं उसका स्थायी भाव रति किंवा आसक्ति श्रीवृन्दावन के रूप में मूर्त्तिमान हैं। प्रेम रस की निष्पत्ति में जितना महत्वपूर्ण स्थान स्थायी भाव का है उतना ही प्रेम लीला में वृन्दावन का है। स्थायी भाव 'रति' को रसिकाचार्यों ने आद्य भाव भी कहा है। वस्तुतः इसी के ऊपर रस का सम्पूर्ण भवन खड़ा होता है। रसिक संतों के द्वारा उपास्य रस का स्थायी भाव श्रीराधा-रति किंवा श्रीराधा चरणों में आसक्ति है। यह राधा-रति श्रीश्यामसुन्दर, सह-चरीगण, श्रीवृन्दावन एवं सखी भावापन्न उपासक सभी के हृदयों में विराजमान है। इस रति का सघन मूर्त स्वरूप श्रीवृन्दावन है। इसलिये श्रीश्यामसुन्दर, सहचरी गण एवं स्वयं श्रीराधा इससे समान रूप से आसक्त हैं।

अपने संस्कृत ग्रन्थ श्रीराधा रस सुधानिधि के एक श्लोक (क्र. सं. ७६) में श्रीराधा के स्वरूप का वर्णन करते हुये श्रीहिता-चार्य ने कहा है कि मेरे नेत्र जिस श्रीराधा रूप के दर्शन के लिये सदैव चंचल बने रहते हैं वह 'वृन्दावन मात्र गोचर है' अर्थात् एक-मात्र श्रीवृन्दावन में ही नेत्रों का विषय बनता है। इसी ग्रन्थ में एक अन्य श्लोक में वे कहते हैं कि मेरे जैसे महा अधम के मन में जो अत्यन्त दुर्लभ श्रीराधा नाम स्फुरित होता है वह श्रीवृन्दावन की ही महिमा है। ([illegible]) निष्कर्षतः घनीभूत राधा रति में ही श्रीराधा के दर्शन [illegible]। इसीलिये प्रस्तुत पद में श्रीहित प्रभु ने श्रीवृन्दावन को अपना प्रथम प्रणाम निवेदन किया है।

CC-0. Shri Vipin Kumar Col. Deoband. In Public Domain.

Digitized by Madhuban Trust, Delhi

अब 'यथामति' शब्द पर विचार करना चाहिये। यथामति का अर्थ है यथाबुद्धि। श्रीहिताचार्य कहते हैं कि मेरी जितनी बुद्धि है मैं उसके अनुसार वृन्दावन को प्रणाम करता हूँ। व्यंजना यह है कि वृन्दावन का वास्तविक स्वरूप बुद्धि के क्षेत्र से बाहर है और कोई भी व्यक्ति अपनी बुद्धि की सीमाओं के अंदर रहकर ही उसको अपनी वाणी का विषय बना सकता है। श्रीहिताचार्य से प्रेरणा ग्रहण करके उनके सहयोगी श्रीप्रबोधानंद सरस्वती ने अपने 'श्रीवृन्दावन महिमामृत' नामक शतकों में श्रीवृन्दावन की महिमा का विस्तार से गान किया है।

अपने सप्तम शतक में श्रीवृन्दावन रूप ज्योति की अन्य ज्योतियों के साथ तुलना करते हुए उन्होंने कहा कि 'त्रिगुण से परे कोई सान्द्रानंद मयी ज्योति स्फुरित हो रही है, उसकी अंतिम सीमा पर वैभवमयी कृष्णवर्ण ज्योति प्रतिभात है उसकी भी सीमा पर मधुर से भी मधुर श्रीवृन्दावनीय ज्योति विद्यमान है। उसमें विराजमान रस की खान गौर-नील श्रीयुगलकिशोर का भजन कर।

निस्त्रैगुण्यं स्फुरति किमपि ज्योतिरानन्दसान्द्रं
तस्यात्यन्तः प्रणयविभवं ज्योतिराभाति कार्ष्णम्।
तस्याप्यन्तर्मधुर मधुरं ज्योतिरस्त्यत्र वृन्दा-
रण्यं तस्मिन् भज रसखनी गौर नीलौ किशोरौ॥

रूप-रस के अपार-अपरमित सागर श्रीश्यामाश्याम सहचरियों को संग लिये हुए परस्पर होली खेल रहे हैं। श्रीहित सजनी उस समय की श्रीवृन्दावन की तथा श्रीराधाश्यामसुंदर की अद्भुत छवि का वर्णन अपनी कृपापात्र सखी से करती हुई कहती हैं:—

व्याख्या:— **मैं सर्वप्रथम उस अत्यन्त [illegible]णीय वृन्दावन को यथा बुद्धि प्रणाम करता हूँ जो श्रीराधिका [illegible] कृपा के बिना सबके मनों के लिए अगम्य है॥१॥**

CC-0. Shri Vipin Kumar Col. Deoband. In Public Domain.

इस वृन्दावन का सिंचन श्रेष्ठ यमुना जल से होता रहता है और वहाँ शरद ऋतु और वसंत ऋतु सदा विद्यमान रहती हैं। (शरद की नित्य विद्यमानता के कारण श्रीवृन्दावन सदैव निर्मल बना रहता है और वसंत की नित्य उपस्थिति के कारण सदैव फूला रहता है।) श्रीवृन्दावन में नाना प्रकार के पुष्पों के सौरभ से भ्रमर कुल मत्त बना रहता है ॥२॥

वहाँ लाल वर्ण के नूतन पल्लवों पर कोकिल और कीर कूजन कर रहे हैं और मयूरों का कुल अतिशय आनन्द से अधीर बनकर नृत्य कर रहा है ॥३॥

वहाँ रुचिदायक शीतल-मंद-सुगन्ध पवन बहता रहता है और जहाँ-तहाँ लाल, नीले और सफेद रंग के कमल खिले हुये हैं ॥४॥

वहाँ अत्यन्त कमनीय नवीन निकुंज-मन्दिर विराजमान है जिसको कामदेवों के समूह प्रेम पूर्वक अपने अनुचर वसंत के सहित सदैव संवारते रहते हैं ॥५॥

(मीनध्वज सेवित इस अत्यन्त कमनीय निकुंज मंदिर में) रसिकता की राशि नित्य किशोर वय वाले श्रीश्यामाश्याम क्रीड़ा कर रहे हैं। यह दोनों भोर में एक दूसरे की बाहु से सुशोभित उनीदे उठे हैं।

(तात्पर्य यह है कि गौर भुजा श्याम अंग की श्रीवृद्धि कर रही है और श्याम भुजा गौर अंग की।) ॥६॥

सुन्दर श्याम अंग पर स्वर्ण के समान पीला वस्त्र शोभायमान है। कामिनी श्रीराधा नीले रंग की साड़ी धारण किये हुए हैं और उन्होंने वक्षस्थल पर गहरे लाल रंग की कंचुकी पहन रखी है ॥७॥

रबाब, [illegible] डफ और मधुर मृदंग से ताल बज रही है और श्रेष्ठ आँ[illegible] एवं मुखचंग सरस उक्ति की गति का सूचन कर रहे हैं।

CC-0. Shri Vipin Kumar Col. Deoband. In Public Domain.

Digitized by Madhuban Trust, Delhi

(जो राग श्रीश्यामाश्याम गाने वाले हैं उसी को सहचरी गण बाँसुरी और मुखचंग में निकाल रही हैं।) ॥८॥

दोनों श्रीश्यामाश्याम मिलित स्वरों में गौरी राग का आलाप लेकर चाँचर गा रहे हैं और भृकुटि रूपी धनुष पर दृग रूपी बाणों को चाँपकर (दबाकर) मन रूपी मृग का बल पूर्वक वेधन कर रहे हैं।

(आलाप लेते समय गायक के नेत्र स्वभावतः ऊपर की ओर उठ जाते हैं और गायक में अगर थोड़ा सा भी सौंदर्य हो तो उसकी वह सहज क्रिया दर्शनीय होती है। यहाँ सौंदर्य-लावण्य के सागरों में यह क्रिया हो रही है और उसके द्वारा मानस-मृगों का वेधन स्वाभाविक है।) ॥९॥

श्रीश्यामाश्याम हाथों से ताली बजाते हुए और झूमते हुए इधर-उधर घूम रहे हैं और हो-हो-होरी बोलते हुए अत्यन्त आनन्द से हँस रहे हैं ॥१०॥

कामिनी श्रीराधा अपने रसिक प्रियतम पर गुलाल डालती हैं और उनके प्रियतम पिचकारी में कुमकुम का रंग भरकर अपनी प्रिया पर ताक-ताक कर छिड़कते हैं ॥११॥

कभी-कभी चंदन के वृक्ष पर तरल (चंचल) हिंडोला डाला जाता है जिस पर चढ़कर दोनों श्रीश्यामाश्याम झूलते हैं, फूलते हैं और कलोल करते हैं ॥१२

उस श्रेष्ठ हिंडोले के झोकों से कामिनी श्रीराधा अत्यन्त डरती हैं और पुलकित हो-होकर सकंप शरीर से प्रियतम के हृदय से लिपट जाती हैं ॥१३॥

श्रीराधा को इस प्रकार अपने प्रियतम के हृदय से अनायास लिपटते देखकर, सदैव उनके हित का चिंतन करने वाली, उनकी

CC-0. Shri Vipin Kumar Col. Deoband. In Public Domain.

Digitized by Madhuban Trust, Delhi

दासियों के हृदय में आनन्द समाता नहीं है और वे अपने नेत्रों के नितान्त (पूर्ण) सुख को देखकर तृण तोड़ती हुई उन पर बलिहार होती हैं ॥१४॥

(सखी भावापन्न श्रीहित हरिवंश का हृदय इस लीला के दर्शन करके आनंद विभोर बन जाता है और वे श्रीश्यामाश्याम को अशीष देते हुये कहते हैं कि) तुम दोनों उदार हो अर्थात् एक दूसरे के मनोरथों को पूर्ण करने वाले हो, सुन्दर हो और प्रेम-खेत के सुकुमार सूरमा हो। तुम दोनों इसी प्रकार सदैव अविचल विहार करते रहो ॥१५॥

[५८]

तेरे हित लैन आई, बन तैं श्याम पठाई,
हरत कामिनी घन कदन काम कौ ॥१॥
काहे कौं करत बाधा, सुनिरी चतुर राधा,
भेटि कैं मेटिरी माई प्रगट जगत भौ ॥२॥
देखिरी रजनी नीकी, रचना रुचिर पी की,
पुलिन नलिन नभ उदित रोहनी धौं ॥३॥
तू तौऽव सखी सयानी, तैं मेरी एकौ न मानी,
हौं तोसौं कहत हारी जुवति जुगति सौं ॥४॥
मोहन लाल छबीलौ, अपने रंग रँगीलौ,
मोहत विहंग पशु मधुर मुरली रौ ॥५॥
वे तौव गनत तन जीवन जोवन तव,
जैश्री हित हरिवंश हरि भजहि भामिनी जौ ॥६॥

भूमिकाः—आज श्रीराधा के मान से श्रीश्यामसुंदर के प्राणों पर आबनी है। किन्तु वे किसी तरह सावधान होकर श्रीराधा की

CC-0. Shri Vipin Kumar Col. Deoband. In Public Domain.

Digitized by Madhuban Trust, Delhi

विशेष कृपापात्र हित सजनी को मान मोचन के लिये उनके पास भेजते हैं। श्रीहित सजनी अत्यन्त विदग्धता पूर्वक श्रीश्यामसुंदर की स्थिति एवं उनके अद्भुत रूप-गुणों के उल्लेख के साथ श्रीवृन्दावन की सहज उद्दीपन सामग्री का वर्णन करके अपनी स्वामिनी की अंतर्गत प्रीति को बाहर लाने की चेष्टा करती हुई उनसे प्रार्थना करती हैं:—

व्याख्या:—(हे स्वामिनी) **श्रीश्यामसुन्दर ने मुझको निकुंज वन से भेजा है और मैं इसमें तुम्हारा हित देखकर तुमको लेने आई हूँ। हे कामिनी, तुम काम की सघन पीड़ा को हरने वाली हो।**

(हित सजनी ने यहाँ बड़ी चतुरता से बात को आरम्भ किया है। 'तेरे हित लैन आई' कहकर वे उनको उपकृत-सा कर रही हैं जिससे श्रीराधा उसके बदले में सरलता से अपने मान का त्याग कर सकें।) ।।१।।

हे चतुर राधा, तुम मेरी बात सुनो, और यह बताओ कि तुम अपने प्रियतम को क्यों कष्ट दे रही हो ? (इस समय तो तुम्हारा कर्तव्य यह है कि) **तुम उनसे मिलकर उनके प्रकट जगत-भय को मिटा दो अर्थात् तुम्हारे प्रियतम के लिए विरह की दसमी अवस्था (मरण) को प्राप्त होने का जो भय उत्पन्न हो गया है उसको मिटा दो ।।२।।**

(हे सखी) **तुम देखो तो सही कि आज की रात्रि कितनी सुन्दर है और उसमें तुम्हारे प्रियतम ने कितनी सुन्दर शैया की रचना की है। यमुना पुलिन में कुमुदनी खिल रही है और आकाश में रोहिणी का पति चन्द्रमा उदित हो रहा है।**

(यहाँ पुलिन शब्द के द्वारा लक्षणा वृत्ति से यमुना का जल ग्रहण होता है।) ।।३।।

CC-0. Shri Vipin Kumar Col. Deoband. In Public Domain.

Digitized by Madhuban Trust, Delhi

हे सखी, तुम तो बहुत समझदार हो फिर भी तुम मेरी एक भी बात नहीं मान रही हो। हे युवती, मैं तुमको अनेक युक्तियों से समझाते-समझाते थक गई हूँ ॥४॥

(हे स्वामिनी कम से कम इस बात का तो ध्यान रखो कि) तुम्हारे प्रियतम मोहनलाल छबीले हैं, अपने रंग में रंगीले हैं (अर्थात् प्रेम-रंग में रँगे हुए हैं) और अपनी मुरली के मधुर रव से विहंग और पशुओं को मोहित करने वाले हैं ॥५॥

(तुम्हारे ऐसे प्रियतम) अपने जीवन और यौवन को तुमको समर्पित मानते हैं। (उनका जीवन और यौवन तुम्हारी अनुकूलता पर अवलंबित है) सखी भावापन्न श्रीहित हरिवंश कहते हैं कि हे भामिनी, इसलिए, तुमको भी श्रीहरि को भजना चाहिये अर्थात् उनसे शीघ्र मिलना चाहिए ॥६॥

[५६]

यह जु एक मन बहुत ठौर करि कहि कौने सचु पायौ ॥१॥
जहाँ-तहाँ बिपति जार जुवती लौं प्रगट पिंगला गायौ ॥२॥
द्वै तुरंग पर जोर चढ़त हठ परत कौन पै धायौ ॥३॥
कहि धौं कौन अंक पर राखै जो गनिका सुत जायौ ॥४॥
(जैश्री) हित हरिवंश प्रपंच बंच सब काल व्याल कौ खायौ।
यह जिय जानि श्यामश्यामा पद-कमल-संगी सिर नायौ ॥५॥

भूमिकाः—यह वह पद है जो श्रीहिताचार्य ने श्रीहरिराम-व्यास को उनके वृन्दावन आने पर सुनाया था। इसमें श्रीहित प्रभु ने श्रीश्यामाश्याम के चरण-कमल-संगी रसिक-भक्तों का भजन करने का आदेश दिया है। भगवान से भी पूर्व भक्त की उपासना करने का

CC-0. Shri Vipin Kumar Col. Deoband. In Public Domain.

Digitized by Madhuban Trust, Delhi

सिद्धांत मध्ययुगीन वैष्णव धर्म के उदय के साथ ही स्थापित हो गया था। सोलहवीं शती में उत्तर-भारत में जितने धर्मसम्प्रदाय स्थापित हुए उन सबमें इस सिद्धांत पर भार दिया गया—कहीं कम कहीं अधिक। राधावल्लभ सम्प्रदाय के प्रथम सिद्धांत-ग्रन्थ सेवक वाणी में 'भक्त भजन' नाम का एक स्वतंत्र प्रकरण ही लगा हुआ है और स्थान-स्थान पर धर्मी (भक्त) और धर्म (भगवान) का अभेद सिद्ध किया गया है।

श्रीहरिराम व्यास के ऊपर श्रीहिताचार्य के इस परामर्श का इतना अधिक प्रभाव पड़ा कि वे जीवन भर भक्तों को ही अपना इष्ट मानते रहे। श्रीनाभाजी ने व्यासजी से संबंधित अपने छप्पय में इस बात को लक्षित किया है।

नोट:—चौरासीजी के प्राचीन टीकाकारों ने इस पद को सिद्धांत और रस दोनों में लगाया है किन्तु यह पद स्पष्टतः सिद्धांत का ही है और यहाँ उसी दृष्टि से इसकी व्याख्या की जाती है।

श्रीव्यासजी को संबोधन करके श्रीहिताचार्य कहते हैं:—

व्याख्या:—(हे व्यासजी) **इस एक मन को अनेक स्थानों में लगाकर, आप ही बतलाओ, किसनें सुख पाया है ? ॥१॥**

(अब मन को अनेक स्थानों में लगाने के दुष्परिणाम का उदाहरण देते हुए कहते हैं कि) **जैसे कोई युवती यदि जार से अपना मन लगावे तो उसको सर्वत्र विपत्ति का ही सामना करना पड़ता है। इस बात का पिंगला वेश्या नें, श्रीमद्भागवत में, स्पष्ट रूप से कथन किया है ॥२॥**

(अब दूसरा उदाहरण देते हुये कहते हैं कि) **दो घोड़ों पर जबरदस्ती सवारी करके किसी से हठ पूर्वक दौड़ा जा सकता है क्या ? ॥३॥**

CC-0. Shri Vipin Kumar Col. Deoband. In Public Domain.

Digitized by Madhuban Trust, Delhi

(अब तीसरा उदाहरण देते हुये कहते हैं कि) वेश्या के पुत्र को कौन अपनी गोदी में बैठा सकता है ?

(वेश्या के अनेक प्रेमी होने के कारण कौन उसके पुत्र को अपना बतला सकता है ?) ॥४॥

(अब मन लगाने के एकमात्र निर्विघ्न स्थान की ओर संकेत करते हुए श्रीहित हरिवंश कहते हैं कि) यह दृश्यमान प्रपंच तो वंचक अर्थात् जीव को धोखा देने वाला है और काल रूपी सर्प का भोजन है अर्थात् नश्वर है। इस बात को अपने मन में समझकर मैंने तो श्यामाश्याम के चरण कमलों का (अहर्निश) संग करने वालों के (अर्थात् रसिक भक्तों के) आगे अपने मस्तक को झुकाया है ॥५॥

[६०]

कहा कहौं इन नैंनन की बात ॥१॥

ये अलि प्रिया बदन - अम्बुज - रस,
अटके अनत न जात ॥२॥

जब - जब रुकत पलक सम्पुट लट,
अति आतुर अकुलात ॥३॥

लम्पट लव निमेष अन्तर तैं,
अलप कलप सत - सात ॥४॥

श्रुति पर कंज, दृगंजन, कुच बिच,
मृग मद ह्वै न समात ॥५॥

(जै श्री) हित हरिवंश नाभि सर-
जलचर जाँचत साँवल गात ॥६॥

CC-0. Shri Vipin Kumar Col. Deoband. In Public Domain.

Digitized by Madhuban Trust, Delhi

भूमिका:—नित्य विहार की रस-पद्धति में श्रीश्यामसुन्दर प्रेमी हैं और श्रीराधा प्रेम-पात्र हैं। श्रीहिताचार्य की संस्कृत एवं ब्रज भाषा रचनाओं में उनका चित्रण प्रेमी रूप में ही किया गया है। प्रेमी के नेत्रों में उसकी प्रीति प्रतिविम्बित होती रहती है और इन्हीं के द्वारा प्रेम के गांभीर्य का भी सूचन होता है। श्रीश्यामसुन्दर अप्रतिम प्रेमी हैं अत: उनके नेत्र भी सदैव अनन्य साधारण स्थिति में रहते हैं।

श्रीवृन्दावन निकुंज-भवन में श्रीश्यामाश्याम परस्पर गलबाँहीं दिये पुष्प-शैया पर विराजमान हैं। श्रीश्यामसुंदर सहज निर्निमेष दृष्टि से श्रीराधा के मुख चन्द्र की ओर देख रहे हैं किन्तु उनके नेत्रों को शांति नहीं मिल रही है और वे अत्यन्त व्याकुल बने हुए हैं।

रसिक शिरोमणि श्रीश्यामघन के इन अद्भुत प्रेम पूर्ण नेत्रों की इस सहज स्थिति का मर्म अपनी कृपापात्र सखी को बतलाती हुई श्रीहित सहचरी कहती हैं:—

व्याख्या:—हे सखी (श्रीश्यामघन के) इन नेत्रों की बात मैं क्या कहूँ ॥१॥

ये नेत्र श्रीप्रिया के मुख-कमल के रस में भ्रमर की भाँति अटके हुये हैं और अन्यत्र कहीं नहीं जाते ॥२॥

पलकों के गिरनें से अथवा उन पर बालों की लटें आ जानें से जब-जब इन नेत्रों की दृष्टि में व्यवधान पड़ता है तब ये अत्यन्त आतुर होकर अकुलानें लगते हैं ॥३॥

ये नेत्र इतने लोभी हैं कि (श्रीराधा के दर्शनों में) लव-निमेष का अन्तर होते ही इनको उसकी तुलना में सात-सौ कल्पों का अन्तर भी थोड़ा प्रतीत होनें लगता है ॥४॥

CC-0. Shri Vipin Kumar Col. Deoband. In Public Domain.

Digitized by Madhuban Trust, Delhi

ये नेत्र श्रीप्रिया के कर्णों पर धारण होने वाले कमल बनकर, उनके नेत्रों में अंजन बनकर एवं उनके उरोजों के बीच में कस्तूरी का अंगराग बनकर भी सन्तुष्ट नहीं होते ।।५।।

सखी भावापन्न श्रीहित हरिवंश कहते हैं कि साँवल गात श्रीश्यामसुन्दर के ये नेत्र तो अपनी प्रिया के नाभि सरोवर के मीन बनकर रहना चाहते हैं ।

(श्रीदामोदरवर गोस्वामी (सं० १६३५–१७१५) ने अपने अप्रकाशित ग्रन्थ 'हस्तामलक' में इस पद की अंतिम पंक्ति 'नाभि सर जलचर जाँचत साँवल गात' का भावार्थ यह बतलाया है कि श्रीश्यामसुन्दर अपनी प्रिया के नाभि सरोवर के मीन बनकर अपनी और उनकी देहों को एक बना देना चाहते हैं । दोनों के मन तो एक हैं हीं श्रीश्यामसुन्दर की अभिलाषा दोनों की देहों को भी एक बना देने की है ।) ।।६।।

[६१]

आजु सखी बन में जु बने प्रभु,
नाचत हैं ब्रज मंडन ।।१।।
बैस किसोर जुवति अंसन पर,
दिये विमल भुज दंडन ।।२।।
कोमल कुटिल अलक सुठि सोभित,
अवलम्बित युग गंडन ।
मानहुँ मधुप थकित रस - लम्पट,
नील कमल के खंडन ।।३।।

CC-0. Shri Vipin Kumar Col. Deoband. In Public Domain.

हास-विलास हरत सब कौ मन,
काम समूह विहंडन ।
(जै श्री) हित हरिवंश करत अपनो-
जस प्रगट अखिल ब्रह्मण्डन ।।४।।

भूमिकाः—इस पद में रास क्रीड़ा रत श्रीश्यामघन के रूप-सौंदर्य का बड़ा आकर्षक वर्णन किया गया है । साथ ही इसमें उनकी इस मधुरातिमधुर लीला का प्रयोजन भी संकेतित हुआ है । इस लीला से श्रीश्यामसुन्दर के प्रेम-सौंदर्य का जो यश पृथ्वी पर छाया उसके कथन-श्रवण की तुलना में भावुकजनों के लिये मुक्ति-सुख भी अत्यन्त तुच्छ बन गया ।

इस हास-विलासमयी लीला का वर्णन अपनी कृपापात्र सखी से करती हुई श्रीहित सजनी कहती हैं:—

व्याख्याः—हे सखी, आज श्रीवृन्दावन में सम्पूर्ण ब्रज की शोभा प्रभु श्रीश्यामसुन्दर सजधज कर नृत्य कर रहे हैं ।।१।।

उनकी किशोर अवस्था है और उन्होंने युवती श्रीराधा के अंसों पर अपने विमल भुजदंड रख रखे हैं ।।२।।

श्रीश्यामसुन्दर के युगल कपोलों पर आश्रित कोमल एवं घुंघराली अलकें इस प्रकार शोभित हैं मानो नीलकमल के समूहों पर रस-लोभी मधुप थकित हो रहे हों ।।३।।

वे अपने हास-विलास के द्वारा सबके मन का हरण कर रहे हैं और काम समूह को विनष्ट कर रहे हैं । सखी भावापन्न श्रीहित हरिवंश कहते हैं कि इस प्रकार वे सम्पूर्ण ब्रह्माण्डों में अपने यश को प्रकट कर रहे हैं ।।४।।

Digitized by Madhuban Trust, Delhi

[६२]

खेलत रास दुलहनी दूलहु ॥१॥
सुनहु न सखी सहित ललितादिक,
निरखि - निरखि नैनन किन फूलहु ॥२॥
अति कल मधुर महा मोहन धुनि,
उपजत हंस सुता के कूलहु ॥३॥
थेई - थेई बचन मिथुन मुख निसरत,
सुनि - सुनि देह दसा किन भूलहु ॥४॥
मृदु पदन्यास उठत कुंकुम रज,
अद्भुत बहत समीर दुकूलहु ॥५॥
कबहुँ श्याम श्यामा - दसनांचल,
कच - कुच - हार छुवत भुजमूलहु ॥६॥
अति लावन्य, रूप, अभिनय गुन,
नाहिन कोटि काम समतूलहु ॥७॥
भृकुटि विलास, हास - रस बरसत,
(जैश्री) हित हरिवंश प्रेम रस झूलहु ॥८॥

भूमिका:—इस पद में दुलहिनी दूलह के रास का विशद वर्णन है। इसकी रचना में एक विशिष्ट ढंग देखने को मिलता है। यह सम्पूर्ण पद ललितादिक सहचरी गण को सम्बोधित करके कहा गया है और उनको दूलह-दुलहिन के इस रस को देखकर उल्लसित होने का, देह दशा भूलने का एवं प्रेम-रस में झूलने का परामर्श दिया गया है।

CC-0. Shri Vipin Kumar Col. Deoband. In Public Domain.

Digitized by Madhuban Trust, Delhi

दूलह-दुलहिन प्रेम की नवीनता के प्रतीक होते हैं। नित्य प्रेम की नित्य नवीनता को द्योतित करने के लिये श्रीश्यामाश्याम को, नित्य विहार की रस-पद्धति में, नित्य दूलह-दुलहिन माना जाता है। श्रीहित चौरासी इस रस-पद्धति की प्रथम रचना है, इस बात को हम 'वेणु प्रकाशन' से प्रकाशित हित चौरासी (सूल) की भूमिका में सिद्ध कर चुके हैं। पुराणों में श्रीराधा-कृष्ण का परस्पर संबंध विवाद का विषय बना हुआ है। कुछ पुराणों में श्रीराधा श्रीकृष्ण की विवाहित पत्नी हैं, अन्य में प्रेमिका। नित्य-विहार की पद्धति में एक विशिष्ट भाव-स्वरूप की स्थापना हुई है और श्रीश्यामाश्याम के पौराणिक रूप को उतने ही अंश में अंगीकार किया गया है जितने में वह उक्त भाव के अनुकूल रहता है।

श्रीश्यामाश्याम का नित्य दूलह-दुलहिनी रूप पुराणों के अनुकूल नहीं पड़ता किन्तु नित्य-विहार की पद्धति के लिये इसकी स्वीकृति अनिवार्य है। प्रस्तुत पद के रचना-प्रकार को देखने से मालुम होता है कि श्रीहिताचार्य ने प्रथम बार इसी पद में श्रीश्यामाश्याम का नित्य दुलहिनी-दूलह रूप प्रतिष्ठित किया है। तभी वे ललितादिक अन्य सहचरियों को इस रूप का दर्शन करने की तथा इनके रास-विलास को देखकर प्रेम रस में झूलने की प्रेरणा दे रहे हैं।

व्याख्या:—(श्रीयमुना तट पर) **नित्य दूलह-दुलहिनी श्रीश्यामाश्याम रास-क्रीड़ा में रत हैं ॥१॥**

(श्रीहित सजनी ललितादिक सहचरी गण को श्रीश्यामाश्याम के इस रूप का दर्शन करने का आग्रह करती हुई कहती हैं कि) **हे ललितादिक सब सहचरी गण, तुम मेरी बात सुनो। यह जो दुलहिनी-दूलह रास खेल रहे हैं इनको देखकर तुम सबके नेत्र क्यों नहीं फूलते ?**

(अर्थात् श्रीश्यामाश्याम का यही रूप ऐसा है जिसे देखकर हम सबके नेत्र फूलने चाहिए।) ॥२॥

CC-0. Shri Vipin Kumar Col. Deoband. In Public Domain.

Digitized by Madhuban Trust, Delhi

यमुनाजी के तट पर अत्यन्त सुन्दर, मधुर एवं महा मोहन ध्वनि उत्पन्न हो रही है ॥३॥

(इस परम मोहक ध्वनि के बीच में) श्रीयुगल थेई-थेई शब्द बोल रहे हैं जिनको सुनकर तुम सब अपनी देह दशा क्यों नहीं भूल जाती हो ?

(अर्थात् हम सबको इन शब्दों का श्रवण करके देह-दशा भूल जानी चाहिये ।) ॥४॥

नृत्य काल में श्रीश्यामाश्याम के सुकोमल पदन्यास से केसर के लाल वर्ण वाली रज उठ रही है । (लोक में जहाँ तहाँ दूलह-दुलहिन को रोली पर खड़ा करके उनके पद चिन्ह लेने की प्रथा है । यहाँ सखियों ने भी आज दूलह-दुलहिन के नृत्य की तैयारी में रास मंडल पर केसर की रज बिछाई है और वही उनके पदन्यास से उठ रही है ।) उधर (श्रीवृन्दावन के चारों ओर कंकण की भाँति स्थित) यमुनाजी के दोनों तटों से अद्भुत प्रकार का पवन एक ही ओर प्रवाहित हो रहा है ।

(जिसके परिणाम स्वरूप श्रीश्यामाश्याम के चरणों से उठी हुई केसर रज उनके चारों ओर घुमड़ कर रह गई है और उस लाल घुमड़न में नृत्य करते हुए सौन्दर्य के ये दोनों सागर अमित शोभा युक्त बन गये हैं ।) ॥५॥

नृत्य करते हुये श्रीश्यामसुन्दर श्रीश्यामा के अधर, केश, उरोज, हार एवं अंसों का स्पर्श करते हैं ॥६॥

अत्यन्त लावण्य, रूप एवं भाव-प्रदर्शन से सम्बन्धित गुणों में इन दोनों की समता कोटि काम भी नहीं करते ॥७॥

ये दोनों भृकुटि-विलास एवं हास-रास की वर्षा कर रहे हैं । सखी भावापन्न श्रीहित हरिवंश कहते हैं कि (हे ललितादिक सह-

CC-0. Shri Vipin Kumar Col. Deoband. In Public Domain.

Digitized by Madhuban Trust, Delhi

चरीगण) इस प्रेममयी लीला को देखकर तुम सब प्रेम रस में अपने मन को झुलाओ ।।८।।

(इस अंतिम पंक्ति में श्रीश्यामाश्याम की प्रेम-सौंदर्य मयी लीला को ही प्रेम-रस कहा गया है क्योंकि लीला में ही प्रेम-सौंदर्य आस्वाद्य किंवा रस बनता है। नित्य विहार रस के रसिकजनों द्वारा प्रेम-रस की यही व्याख्या स्वीकृत है और इसीलिये ध्रुवदासजी ने श्रीहिताचार्य के संबंध में कहा है कि सम्पूर्ण सुख का सार श्रीश्यामाश्याम का विहार है और श्रीहित हरिवंश ने अपनी वाणी में उसी का दुलार किया है,)

'सबै सुख को सुख सार विहार है,
श्री हरिवंशजू केलि लड़ाई'

[६३]

मोहन मदन त्रिभंगी । मोहन मुनि - मन रंगी ।।१।।
मोहन मुनि सघन प्रगट परमानन्द गुन गम्भीर गुपाला ।।२।।
सीस किरीट श्रवण मणि कुंडल उर मंडित बनमाला ।।३।।
पीताम्बर तन-धातु विचित्रित कल किंकिनि कटि चंगी ।।४।।
नख-मनि तरनि चरन सरसीरुह मोहन मदन त्रिभंगी ।।५।।
मोहन बेनु बजावै । इहि रव नारि बुलावै ।।६।।
आईं ब्रज-नारि सुनत बंशी-रव गृह-पति-बन्धु विसारे ।
दरसन मदन गुपाल मनोहर मनसिज ताप निवारे ।।७।।
हरसित बदन, बंक अवलोकन, सरस मधुर धुनि गावै ।
मधुमय श्याम समान अधर धरि मोहन बेनु बजावै ।।८।।

CC-0. Shri Vipin Kumar Col. Deoband. In Public Domain.

Digitized by Madhuban Trust, Delhi

रास रच्यौ बन माहीं। विमल कलप तरु छाहीं ॥९॥
विमल कलपतरु तीर सुपेसल सरद रैन बर चन्दा।
सीतल-मन्द-सुगन्ध पवन बहै तहाँ खेलत नन्दनन्दा ॥१०॥
अद्भुत ताल मृदङ्ग मनोहर किंकिनि शब्द कराहीं।
यमुना पुलिन रसिक रस-सागर रास रच्यौ बन माहीं ॥११॥
देखत मधुकर - केली। मोहे खग - मृग - बेली ॥१२॥
मोहे मृग-धेनु सहित सुर-सुन्दरि प्रेम मगन पट छूटे।
उडुगन चकित, थकित ससि मंडल, कोटि मदन मन लूटे ॥१३॥
अधर पान परिरम्भन अतिरस, आनँद मगन सहेली।
(जैश्री) हितहरिवंश रसिक सचु पावत देखत मधुकर केली ॥१४॥

भूमिकाः—रास के इस पद की रचना श्रीमद्भागवत में वर्णित रासपंचाध्यायी का अनुसरण करके की गई है। श्रीमदनमोहन के अद्भुत सौंदर्य के आकर्षक वर्णन से आरम्भ होकर वेणुनाद के द्वारा गोपीजनों का आगमन एवं मदनगोपाल के दर्शन से उत्पन्न उनका परम संतोष इस पद के प्रथम दो छंदों में वर्णित हुआ है। तीसरे छंद में रास का वर्णन है और अंतर्धान एवं तज्जनित गोपियों की व्यथा का वर्णन छोड़ दिया गया है। अंतिम छंद में जड़-चेतन एवं देवांगनाओं के ऊपर इस क्रीड़ा का प्रभाव वर्णित हुआ है। इस छंद की अंतिम पंक्ति में रास क्रीड़ा को रसिकजनों को सुख देने वाली मधुकर-केलि बतलाया गया है। तात्पर्य यह है कि रास-क्रीड़ा में श्रीश्यामसुन्दर ने अनंत गोपियों के प्रेम-रस का पान मधुकर की भाँति किया था और ये लीला स्थूल शारीरिकता से मुक्त सर्वथा अप्राकृत थी।

इस पद से प्रेरणा ग्रहण करके श्रीहरिराम व्यास ने अपनी ब्रज भाषा रास पंचाध्यायी में श्यामसुन्दर के अंतर्धान एवं उसके

CC-0. Shri Vipin Kumar Col. Deoband. In Public Domain.

Digitized by Madhuban Trust, Delhi

वाद की कथा को छोड़ दिया है और अन्तर्धान को रस में विरस माना है—'रस में विरस जु अन्तर्धान।'

नित्य विहार की रसोपासना के विकास में श्रीमद्भागवत में वर्णित रासलीला के महत्व के संबंध में उन्नीसवें पद की भूमिका में विस्तृत विचार किया जा चुका है।

शरद की पूर्णिमा को रसिक रस-सागर ने यमुना पुलिन पर कल्पवृक्ष की छाया में रास की रचना की है। इस रास का वर्णन अपनी कृपापात्र सखी से करती हुई श्रीहित सजनी कहती हैं:—

व्याख्या:—**मदन को मोहित करने वाले श्रीश्यामघन त्रिभंगी हैं।** (अर्थात् वंशीवादन की मुद्रा में स्थित हैं) **मदनमोहन मुनियों के मन को रँगने वाले हैं।**

(मुनियों के मन में प्रेम-रंग उत्पन्न करने वाले हैं।) ॥१॥

मुनियों को मोहित करने वाले मदनगोपाल मूर्त्तिमान परमानन्द हैं और नृत्य-संगीत आदि अनेक गुणों से गम्भीर बने हुये हैं। (अर्थात् गुणों के सागर हैं।) ॥२॥

उनके मस्तक पर किरीट, श्रवणों में मणि-जटित कुण्डल एवं वक्षस्थल पर बनमाला सुशोभित है ॥३॥

उनके श्रीअंग पर पीताम्बर धारण है एवं उनका शरीर बन धातुओं (खनिज रंगों) **से चित्रित है और उनकी कटि में सुन्दर किंकिणी धारण की हुई है ॥४॥**

इन मदन को मोहित करने वाले त्रिभंगी श्यामघन के दोनों चरण कमल के समान हैं एवं उनकी नख-मणियाँ सूर्य के समान प्रकाशवान हैं ॥५॥

CC-0. Shri Vipin Kumar Col. Deoband. In Public Domain.

Digitized by Madhuban Trust, Delhi

श्रीमदनमोहन वेणु बजाते हैं और उसके शब्द से नारियों को बुलाते हैं ॥६॥

वंशी रव को सुनते ही अपने स्वामियों एवं बन्धुओं को बिसारकर ब्रज नारियाँ श्रीमदनमोहन के निकट आ गईं और मनोहर मदनगोपाल का दर्शन करके उन्होंने काम के ताप का निवारण किया।

(श्रीमदनगोपाल का दर्शन करते ही उनकी काम पीड़ा दूर हो गई) ॥७॥

(अब श्रीमदनगोपाल की विलास-भंगियों का वर्णन करते हुए कहते हैं कि) उनका मुख हर्षित है, उनकी चितवन बाँकी है और वे सरस एवं मधुर ध्वनि से गान कर रहे हैं। ऐसे अमृतमय श्यामसुन्दर वैसे ही अमृतमय अपने अधरों पर सबको मोहित करने वाले वेणु को रखकर बजाते हैं ॥८॥

श्रीश्यामघन ने श्रीवृन्दावन में निर्मल कल्पतरु की छाया में रास की रचना की है।

(स्वर्गस्थित कल्पतरु जागतिक कामनाओं की पूर्ति के लिए प्रसिद्ध है। श्रीयमुना तट पर स्थित यह कल्पतरु प्रेमीजनों की रस-अभिलाषाओं को पूर्ण करता है। अतः यह प्रसिद्ध कल्पतरु की तुलना में 'विमल' है।) ॥९॥

जहाँ निर्मल कल्पतरु का सुकोमल तीर है, शरद ऋतु की रात्रि है, पूर्णचन्द्र उदित है और शीतल-मंद-सुगन्ध पवन बह रहा है वहाँ नन्दनन्दन क्रीड़ा कर रहे हैं ॥१०॥

मृदंग में अद्‌भुत ताल बज रही है और (श्रीश्यामसुन्दर एवं ब्रज युवतियों की कटियों में धारण की हुई) किंकिणियाँ मनोहर

CC-0. Shri Vipin Kumar Col. Deoband. In Public Domain.

Digitized by Madhuban Trust, Delhi

शब्द कह रही हैं । रसिक-रस के सागर ने यमुना पुलिन पर (आज) रास की रचना की है ॥११॥

इस मधुर केलि को देखकर खग-मृग और लता गुल्म मोहित हो गये हैं ॥१२॥

मृग और धेनुओं सहित सुर-सुन्दरियाँ मोहित हो गई हैं और प्रेम-मग्नता के कारण उनके अंग वस्त्र छूट गये हैं । तारागण चकित हैं, शशि मंडल थकित है और कोटि-कोटि कामदेवों के मन लुट गये हैं ॥१३॥

(इस क्रीड़ा में किये गये) अधर पान एवं परिरम्भन जनित अत्यन्त गम्भीर रस का अनुभव करके सहेलीगण आनन्द में मग्न हो रही हैं । (एक ही श्यामसुन्दर से आसक्त होते हुए भी ब्रज गोपिकाओं का परस्पर निर्विरोध साहचर्य ध्वनित करने के लिये यहाँ उनको 'सहेली' कहा गया है ।) श्रीहित हरिवंश कहते हैं कि इस अद्भुत मधुकर-केलि को देखकर रसिकजन सुख पाते हैं ॥१४॥

[६४]

बेनु माई बाजै वंशीबट ॥१॥

सदा बसंत रहत वृन्दावन,
पुलिन पवित्र सुभग यमुना तट ॥२॥

जटित क्रीट, मकराकृत कुण्डल,
मुख अरबिन्द भँवर मानों लट ॥३॥

दसनन कुंद कली छबि लज्जित,
सज्जित कनक समान पीत पट ॥४॥

CC-0. Shri Vipin Kumar Col. Deoband. In Public Domain.

मुनि मन ध्यान धरत नहिं पावत,
करत विनोद संग बालक भट ॥५॥
दास अनन्य भजन रस कारन,
(जैश्री) हित हरिवंश प्रगट लीला नट ॥६॥

भूमिका:—इस पद में वेणु-वादन तत्पर श्रीश्यामघन के अद्भुत रूप-सौंदर्य का मोहक वर्णन किया गया है । पद के अंत में मुनिगण के ध्यान में भी न आने वाले परात्पर ब्रह्म का 'लीला नट' के रूप में भूतल पर अवतरण अनन्य भक्तों के भजन रस की सिद्धि के हेतु बतलाया गया है ।

श्रीमद्भगवद्गीता एवं पुराणों में श्रीकृष्ण के अवतरण का प्रयोजन धर्म संस्थापन एवं दुष्टों का विनाश बताया गया है । यहाँ श्रीहिताचार्य ने उसे केवल भजन रस का पोषण माना है । वस्तुत: भजन रस के पोषण से उज्वलतम धर्म का संस्थापन हो जाता है और साथ ही इससे दुष्टों का विनाश न सही दुष्टता का विनाश तो अवश्य हो जाता है ।

परम पावन पुलिन वाले सुन्दर यमुना तट पर वेणु वादन करते हुये श्रीश्यामघन की अद्भुत रूप-गरिमा एवं अपने अनन्य दासों के प्रति उनकी अद्भुत करुणा का वर्णन करती हुई श्रीहित सजनी अपनी कृपापात्र सखी से कहती हैं:—

व्याख्या:—**हे सखी बंशीवट पर वेणु बज रही है ॥१॥**

(अब वेणु-वादन के स्थान श्रीवृन्दावन की शोभा का वर्णन करते हुये कहते हैं कि) **श्रीवृन्दावन में सदैव बसन्त ऋतु विराजमान रहती है और वहाँ का सुन्दर यमुना तट पवित्र पुलिन वाला है ।२॥**

(अब वेणु-वादन तत्पर श्रीश्यामसुन्दर की शोभा का वर्णन करते हुए कहते हैं कि) **वे मुकुट धारण किये हुए हैं एवं उनके**

Digitized by Madhuban Trust, Delhi

कुण्डल मीन की आकृति वाले हैं। उनका मुख कमल के समान है जिस पर बालों की लटें भ्रमरों के समान झूम रही हैं ।।३।।

उनके दशन कुन्दकली की छबि को लज्जित कर रहे हैं और उनके श्रीअंग में कनक के समान पीत वस्त्र सज रहा है ।।४।।

जिस परात्पर तत्व का मुनिगण अपने मन में ध्यान करते रहते हैं किन्तु उसे प्राप्त नहीं कर पाते वही ब्रज के बालकों के साथ मल्ल-क्रीड़ा करता है ।।५।।

श्रीहित हरिवंश कहते हैं कि अपने अनन्य दासों के भजन-रस की सिद्धि के हेतु यह लीला नट प्रकट हुये हैं ।।६।।

[६५]

मदन - मथत घन निकुञ्ज खेलत हरि,
राका रुचिर सरद रजनी ।।१।।
यमुना पुलिन तट, सुर तरु के निकट,
रचित रास चलि मिलि सजनी ।।२।।
बाजत मृदु मृदङ्ग, नाचत सबै सुधङ्ग,
तैं न श्रबन सुन्यौ बेनु - बजनी ।।३।।
(जैश्री)हितहरिवंश प्रभु राधिका रवन मोकौं,
भावै माई जगत भगत - भजनी ।।४।।

भूमिका:—श्रीश्यामसुन्दर ने श्रीराधा की प्रसन्नता के लिए यमुना तट पर रास की रचना की है और हित सहचरी को उनको बुलाने के लिए भेजा है । श्रीहित सहचरी रास एवं रास-स्थल का आकर्षक वर्णन करके श्रीराधा के हृदय में भावोद्दीपन करने की

CC-0. Shri Vipin Kumar Col. Deoband. In Public Domain.

Digitized by Madhuban Trust, Delhi

चेष्टा करती हैं। अन्य बातों के साथ वे श्रीराधा से यह भी कहती हैं कि श्रीश्यामसुन्दर वेणु नाद कर रहे हैं किन्तु तुम उसको भी नहीं सुन रही हो।

पद की अंतिम पंक्ति में श्रीश्यामसुंदर को 'भगत भजनी' कह-कर भक्त-भजन के सिद्धांत को भगवान से सम्बंधित कर दिया गया गया है। पुराणों में भगवान ने अनेक स्थलों पर कहा भी है कि मैं अपने भक्तों का भजन करता हूँ।

श्रीहित सजनी श्रीराधा को सम्बोधित करके कहती हैं:—

व्याख्या:—(हे प्रिया) आज शरद पूर्णिमा की सुन्दर रात्रि में मदन के मन का मन्थन करने वाली सघन निकुञ्ज में श्रीहरि क्रीड़ा कर रहे हैं ॥१॥

यमुना पुलिन पर कल्पवृक्ष के निकट रास की रचना हुई है। हे सजनी, तुम चलकर उस रास में सम्मिलित हो जाओ ॥२॥

मृदंग मधुरता से बज रहा है और सब सहचरीगण सुधंग नृत्य कर रही हैं (मुझे आश्चर्य तो यह है कि) तुमनें वेणु का बजना नहीं सुना ॥३॥

सखी भावापन्न श्रीहित हरिवंश कहते हैं कि हे सखी, मेरे प्रभु राधिका रमण मुझको इसलिये अच्छे लगते हैं कि वे अपनें भक्तों का भजन करने वाले हैं अर्थात् वे अपने भक्तों के भक्त हैं।

(सहचरी श्रीश्यामसुन्दर के उक्त गुणों पर भार देकर श्रीराधा से यह कहना चाहती है कि तुमको भी उनकी भाँति 'भगत भजनी' होना चाहिए अर्थात् अपने अनन्य भक्त श्रीश्यामसुंदर का भजन करना चाहिए और उनके संतोष के लिए इस समय चलकर उनसे मिलना चाहिए।) ॥४॥

CC-0. Shri Vipin Kumar Col. Deoband. In Public Domain.

Digitized by Madhuban Trust, Delhi

[६६]

विहरत दोऊ प्रीतम कुञ्ज ।
अनुपम गौर श्याम तन शोभा बन बरसत सुख पुञ्ज ॥१॥
अद्‌भुत खेत महा मनमथ कौ दुंदुभि भूषन - राव ।
जूझत सुभट परस्पर अँग - अँग उपजत कोटिक भाव ॥२॥
भर संग्राम स्रमित अति अवला निद्रायत कल नैन ।
पिय के अंक निसंक तड्ड तन आलस जुत कृत सैन ॥३॥
लालन मिस आतुर पिय परसत उरू नाभि उरजात ।
अद्‌भुत छटा विलोकि अवनि पर विथकित वेपथ गात ॥४॥
नागरि निरख मदन-विष व्यापत दियो सुधाधर धीर ।
सत्वर उठे महामधु पीवत मिलत मीन मिव नीर ॥५॥
'अब ही मैं मुख मध्य बिलोके त्रिबाधर सु रसाल' ।
जाग्रत ज्यों भ्रम भयो पर्‌यो मन सत नसिज कुल जाल ॥६॥
'सकृदपि मयि अधरामृत मुपनय सुन्दरि सहज सनेह ।
तव पद-पंकज कौ निज मंदिर पालय सखि ! मम देह' ॥७॥
प्रिया कहत, 'कछु कहाँ हुते पिय नव-निकुंज-बर-राज ।
सुन्दर वचन रचन कत बितरत रति-लंपट बिनु काज' ॥८॥
इतनो श्रवन सुनत मानिनि मुख अन्तर रह्यौ न धीर ।
मति कातर विरहज दुख व्यापत, बहुतर स्वांस समीर ॥९॥
(जैश्री) हित हरिवंश भुजन आकर्षे लै राखे उर माँझ ।
मिथुन मिलत जु कछुक सुख उपज्यौ त्रुटि लवमिव भई साँझ ॥१०

CC-0. Shri Vipin Kumar Col. Deoband. In Public Domain.

Digitized by Madhuban Trust, Delhi

भूमिका:—रसिकजनों की परमाराध्या श्रीराधा अपने केलि-चातुर्य के लिये प्रसिद्ध हैं। रसिक-साहित्य में उनकी विदग्धता का वर्णन करने वाले अनेक पद मिलते हैं। देखा यह जाता है कि जिस पद में श्रीश्यामसुंदर के प्रेम का स्तर जिस कोटि का होता है उसी के अनुरूप उक्त चातुर्य का स्वरूप बनता है। यदि प्रेम सामान्य प्रकार का है तो चातुर्य का स्तर भी सामान्य रहता है।

हित चौरासी में श्रीश्यामाश्याम के प्रेम का स्वरूप अत्यन्त गहन एवं अत्यन्त नागरता पूर्ण है अतः यहाँ श्रीराधा के चातुर्य का प्रकाश भी बड़े सुललित एवं गम्भीर प्रकारों में हुआ है।

प्रस्तुत पद में गहनतम प्रेम के मनोविज्ञान पर भी प्रचुर प्रकाश पड़ता है एवं प्रेमावेश की असामान्य प्रक्रियायें सामने आती हैं।

श्रीयुगल के प्रेम-विहार का वर्णन अपनी कृपापात्र सखी से करती हुई श्रीहित सजनी कहती हैं:—

व्याख्या:—**दोनों परस्पर प्रियतम कुंज में विहार कर रहे हैं ॥१॥**

गौर और श्याम शरीरों की शोभा अनुपम है जिसके कारण श्रीवृन्दावन में सुख के समूह बरस रहे हैं ॥२॥

(अब श्रीश्यामाश्याम के प्रेम-विहार का युद्ध के रूपक से वर्णन करते हुये कहते हैं) **निकुंज मन्दिर में शैया रूपी महा मन्मथ का अद्भुत रण क्षेत्र है** (प्राकृत मन्मथ से उनकी भिन्नता दिखाने के लिये निकुंज गत मन्मथ को महा मन्मथ कहा गया है) **और भूषणों की ध्वनि रूपी दुंदुभि बज रही है। श्रीश्यामाश्याम के अंग रूपी सुभट (योद्धा) परस्पर जूझ रहे हैं और इस युद्ध के कारण उनके अंगों में कोटि-कोटि अनुभाव प्रकट हो रहे हैं।**

CC-0. Shri Vipin Kumar Col. Deoband. In Public Domain.

Digitized by Madhuban Trust, Delhi

(अनुभाव के अंतर्गत हृदय गत भाव को प्रकट करने वाली सम्पूर्ण अंग चेष्टायें आती हैं ।) ।।२।।

प्रेम संग्राम के भर (आधिक्य) से अबला श्रीराधा अत्यन्त श्रमित हो गई हैं, उनके सुन्दर नेत्र निद्रा युक्त बन गये हैं एवं वे आलस्य युक्त होकर निःशंक भाव से प्रियतम के अंक में सीधी (उत्तान) लेट गई हैं ।

(श्रीहित चौरासी के टीकाकारों ने 'तंक' शब्द का अर्थ 'भय' दिया है जो इसको संस्कृत शब्द मानकर ठीक है । किन्तु इस अर्थ में कठिनाई यह है कि पद में 'तंक' शब्द के पूर्व 'निशंक' शब्द लगा हुआ है जो इसका अर्थ 'भय' नहीं बनने देता । साथ ही, आगे की पंक्ति में कहा गया है कि प्रियतम श्रीराधा की जंघा, नाभि एवं उरोजों का स्पर्श करते हैं । यह भी सीधे लेटने पर ही सम्भव हो सकता है ।) ।।३।।

दुलार करने के बहानें प्रेमातुर प्रियतम श्रीप्रिया की जंघा, नाभि एवं उरोजों का स्पर्श करते हैं और पृथ्वी पर इस अद्‌भुत छटा (श्रीराधा के अंगों की) को देखकर उनका शरीर थकित एवं कंप युक्त बन जाता है ।।४।।

परम विदग्धा श्रीराधा नें अपने प्रियतम के शरीर में मदन-विष व्याप्त होता देखकर उनको 'धीर' (सुस्थिर) अधरामृत पान कराया और मीन को नीर मिलनें की भाँति वे इस महामधु का पान करते ही शीघ्र चैतन्य बन गये ।।५।।

किन्तु सैकड़ों मनसिज समूह के जाल में फंसकर उनका मन, आँखें खुली रहनें पर भी, भ्रम में पड़ गया और वे बोले कि हे प्रिया, मैंनें तुम्हारे मुख में ये बिंबफल के समान अरुण और सरस अधर प्रथम बार ही देखे हैं ।।६।।

CC-0. Shri Vipin Kumar Col. Deoband. In Public Domain.

Digitized by Madhuban Trust, Delhi

अतः हे सहज स्नेहवती सुन्दरी, मुझे आप एक बार तो इन अधरों के अमृत रस का पान कराईये। हे सखी आपके चरण कमलों के सहज मन्दिर मेरे इस शरीर का प्रतिपालन कीजिये ॥७॥

(इस अद्‌भुत प्रेम-केलि में, लौकिक रीति के प्रतिकूल, अधर पान से सावधानता प्राप्त होती है । श्रीराधा ने अपने प्रियतम को मदन-विष से व्याप्त देखकर उसी के द्वारा उनको सावधान बनाने की चेष्टा की थी। किन्तु जैसा कि 'धीर' शब्द के प्रयोग से मालुम होता है (दियो सुधाधर धीर) उसकी मात्रा कुछ अधिक हो जाने से सावधानता के स्थान में श्रीश्यामसुन्दर के मन में एक अद्‌भुत भ्रम दशा उत्पन्न हो गई। सदैव सफल होने वाली औषध को विफल होते देखकर श्रीराधा को किसी ऐसे उपाय की आवश्यकता प्रतीत हुई जो श्रीश्यामसुन्दर को झकझोर कर उनके भ्रम को दूर कर दे। अत: उन्होंने उनके हित के लिये मान का अवलम्ब लिया और बोलीं) हे नव निकुंज के अधीश्वर प्रियतम, आप यह बताईये कि अभी आप थे कहाँ ? हे रति लम्पट (लोभी), आप अकारण सुन्दर वचनों का वितरण क्यों कर रहे हैं ? ॥८॥

मानिनी श्रीराधा के मुख से इतनी बात सुनते ही श्रीश्याम-सुन्दर के हृदय में धैर्य न रहा । विरह-जनित दुःख के शरीर में व्याप्त होते ही उनकी बुद्धि कातर बन गई एवं उनकी श्वास की गति अत्यन्त बढ़ गई ॥९॥

सखी भावापन्न श्रीहित हरिवंश कहते हैं कि अपने प्रियतम को प्रकृतिस्थ देखकर श्रीराधा ने उनको भुजायें बढ़ाकर अपनी ओर खींच लिया और अपने हृदय से लगा लिया। श्रीयुगल के इस प्रकार मिलने से कुछ ऐसा अनिर्वचनीय सुख उत्पन्न हुआ कि (उस दिन का) संध्या काल चुटकी बजाते व्यतीत हो गया ॥१०॥

CC-0. Shri Vipin Kumar Col. Deoband. In Public Domain.

Digitized by Madhuban Trust, Delhi

[६७]

रुचिर राजत बधू कानन किसोरी ॥१॥

सरस सोडस किये, तिलक मृगमद दिये,
मृगज लोचन, उबटि अङ्ग, सिर खोरी ॥२॥

गंड पंडीर मंडित, चिकुर चन्द्रिका,
मेदिनी कवरि गूँथित सुरंग डोरी ॥३॥

श्रवन ताटंक कैं, चिबुक पर बिंदु दैं,
कँसुभि कंचुकि दुरे उरज फल कोरी ॥४॥

बलय कंकन दोत, नखन जावक जोत,
उदर गुन रेख, पट नील, कटि थोरी ॥५॥

सुभग जघनस्थली, कुनित किंकिनि भली,
कोक संगीत रस - सिन्धु झकझोरी ॥६॥

विविध लीला रचित, रहसि हरिवंश हित,
रसिक सिरमौर राधारवन जोरी ॥७॥

भृकुटि निर्जित मदन, मंद सस्मित वदन,
किये रस बिवस घनश्याम पिय गोरी ॥८॥

भूमिकाः—इस पद में श्रीराधा के शृङ्गार का विस्तृत वर्णन है किन्तु इसमें षोडश शृङ्गार अथवा द्वादश आभरण का क्रम दृष्टि-गोचर नहीं होता।

श्रीहित सहचरी अपनी कृपापात्र सखी से श्रीराधा के शृङ्गार का वर्णन करती हुई कहती हैं:—

CC-0. Shri Vipin Kumar Col. Deoband. In Public Domain.

व्याख्या:—श्रीवृन्दावन में किशोरी वधू (दुलहनी) श्रीराधा सुन्दर रीति से शोभायमान हैं ॥१॥

उन्होंने षोड़श शृङ्गार धारण कर रखे हैं और कस्तूरी का तिलक लगा रखा है। उनके नेत्र मृगछौना के नेत्रों के समान हैं और उन्होंने शरीर पर उबटन लगाकर स्नान किया है (यह कहकर शरीर की बढ़ी हुई काँति द्योतित की गई है) तथा उनके शीश पर खोरी (माँग) शोभायमान है।

(खोरी का प्रसिद्ध अर्थ गली है और सिर पर बालों के बीच में गली माँग ही होती है।) ॥२॥

उनके कपोल महुआ के पुष्पों से मंडित हैं, उनके केशों की सज्जा चन्द्रिका के आकार में की हुई है एवं उनकी बेणी में लाल डोरी से मेदिनी के पुष्प गुँथे हुए हैं ॥३॥

उनके श्रवणों में ताटंक (कुण्डल) धारण हैं और उनकी ठोड़ी पर श्याम बिन्दु शोभित है। लाल रंग की कंचुकी में उनके श्रीफल के समान उरोज छिप रहे हैं और (कंचुकी अधिक कसी होने के कारण) उनके कुचों की कोर उसमें से छिटक रही है ॥४॥

(उनकी कलाई में धारण किए हुए) बलय (चूड़ियाँ) और कंकण की द्युति फैल रही है और उनके नखों में जावक की ज्योति (झलमला रही) है। उनके उदर पर तीन रेखायें (त्रिवली) हैं, उन्होंने नीलाम्बर धारण कर रखा है और उनका कटि-भाग सूक्ष्म है ॥५॥

उनकी सुन्दर जघनस्थली पर किंकिणी आकर्षक ढंग से बज रही हैं और वे नृत्य-संगीत के रस-समुद्र में झकोरी हुई हैं ॥६॥

CC-0. Shri Vipin Kumar Col. Deoband. In Public Domain.

Digitized by Madhuban Trust, Delhi

सखी भावापन्न श्रीहित हरिवंश कहते हैं कि रसिक शिरोमणि श्रीराधारमण की समान जोड़ी ये किशोरी श्रीराधा उनके साथ मिलकर एकान्त में विविध लीलाओं की रचना करती रहती हैं ।।७।।

इनका वदन मन्द मुसकान से मंडित है और इन्होंने भृकुटि विलास से मदन को पराजित कर दिया है । इसके साथ ही इन गोरी ने अपने प्रियतम घनश्याम को रस-विवश बना रखा है ।।८।।

[६८]

रास में रसिक मोहन बने भामिनी ।।१।।
सुभग पावन पुलिन, सरस सौरभ नलिन,
मत्त मधुकर निकर, सरद को जामिनी ।।२।।
त्रिविध रोचक पवन, ताप दिनमनि दवन,
तहाँ ठाड़े रवन संग सत कामिनी ।।३।।
ताल बीना मृदंग, सरस नाचत सुधंग,
एक तें एक संगीत की स्वामिनी ।।४।।
राग-रागिनि जमी, विपिन बरसत अमी,
अधर बिंबनि रमी मुरलि अभिरामिनी ।।५।।
लाग कट्टर उरप, सप्त सुर सौं सुलप,
लेत सुन्दर सुघर राधिका नामिनी ।।६।।
तत्त - थेई - थेई करत, गतिव नूतन धरत,
पलटि डगमग ढरत मत्त-गज-गामिनी ।।७।।
धाइ नवरँग धरी, उरसि राजत खरी,
(जैश्री)उभै कल हंस हरिवंश घन-दामिनी ।।८।।

CC-0. Shri Vipin Kumar Col. Deoband. In Public Domain.

भूमिका:—यह रास का पद है। इसमें रास का वातावरण बड़ी कुशलता से खड़ा करने के बाद नृत्य की गतियों का चित्रात्मक वर्णन किया गया है। पद की अंतिम पंक्तियों में श्रीश्यामाश्याम का मिलन इतने नाटकीय ढंग से हुआ है कि एक बड़ा रमणीय दृश्य सामने खड़ा हो जाता है।

श्रीहित सहचरी अपनी कृपापात्र सखी से श्रीश्यामाश्याम के रास-विलास का वर्णन करती हुई कहती हैं:—

व्याख्या:—रास में रसिक मोहन और भामिनी श्रीराधा सुशोभित हैं ॥१॥

सुन्दर एवं पवित्र यमुना पुलिन है जहाँ कुमुदनियाँ सरस सौरभ का विस्तार कर रही हैं जिससे मधुकर समूह मत्त बना हुआ है और शरद की रात्रि है ॥२॥

सूर्य के ताप को दमन करने वाला रोचक शीतल-मन्द-सुगन्ध पवन बह रहा है। वहाँ शत-शत कामिनियों के साथ रमण (श्रीश्यामसुन्दर) खड़े हैं।

(यहाँ श्रीश्यामसुन्दर के लिए 'रवन' शब्द का प्रयोग उनकी क्रीड़ा-परायणता व्यंजित करने के लिए किया गया है।) ॥३॥

बीणा के साथ मृदंग में ताल बज रही है और संगीत में एक से एक अधिक कुशल कामिनियाँ सरस सुधंग रीति से नाच रही हैं ॥४॥

राग रागिनी की जमावट से श्रीवृन्दावन में अमृत रस की वर्षा हो रही है। (इस पृष्ठ भूमि में) श्रीश्यामसुन्दर के बिंबफल के समान अरुण अधरों पर मुरली ने स्वर-विस्तार करना आरम्भ किया ॥५॥

Digitized by Madhuban Trust, Delhi

श्रीराधिका नाम वाली चतुर सुन्दरी विषम लययुक्त वक्र गति वाले सप्त स्वरों में मधुर आलाप ले रही हैं ॥६॥

मत्त गज जैसी गति वाली श्रीराधा तत्तथेई-तत्तथेई बोलती हुई नृत्य की नवीन गति का अवलम्ब लेकर डगमगाती हुई पीछे की ओर लौटती है ॥७॥

(जब श्रीराधा डगमगाती हुई पीछे की ओर लौटने लगीं तब शोभा का अनुपम सिन्धु उमड़ पड़ा और उससे अभिभूत होकर) नवरंग (खिलते हुए सौंदर्य वाले श्रीश्यामसुन्दर) ने दौड़ कर पकड़ लिया और श्रीराधा उनके (श्रीश्यामसुन्दर के) हृदय से लगकर इस प्रकार सुशोभित हुईं जैसे दो कल हंस हों अथवा घन और दामिनी हों ॥८॥

[६६]

मोहनी मोहन रंगे प्रेम सुरंगे,
मत्त मुदित कल नाचत सुधंगे ॥१॥

सकल कला प्रवीन, कल्यान रागिनी लीन,
कहत न बनै माधुरी अंग अंगे ॥२॥

तरनि-तनया तीर, त्रिविध सखी समीर,
मनौं मुनि-व्रत धर्‌यौ कपोती कोकिला कीर ॥३॥

नागरि - नवकिशोर मिथुन मनसि चोर,
सरस गावत दोऊ मंजुल-मंदर-घोर ॥४॥

कंकन किंकिनि धुनि, मुखर नूपुरन सुनि,
(जैश्री)हितहरिवंश रस बरसै नव तरुनि ॥५॥

CC-0. Shri Vipin Kumar Col. Deoband. In Public Domain.

Digitized by Madhuban Trust, Delhi

भूमिका:—यह भी रास का पद है । इसमें केवल श्रीश्यामाश्याम के रास का वर्णन है, साथ में सहचरियों का उल्लेख नहीं है। वे केवल संगीत में उनका साथ दे रही हैं।

श्रीहित सजनी श्रीश्यामाश्याम के रास-विलास का वर्णन अपनी कृपापात्र सखी से करती हुई कहती हैं:—

व्याख्या:— प्रेम के सुरंग (लाल) रंग में रँगे हुये मोहनी-मोहन मोद-मत्त स्थिति में सुधंग रीति से नृत्य कर रहे हैं ॥१॥

सकल कलाओं में कुशल श्रीश्यामाश्याम कल्याण रागिनी में तन्मय होकर उसका गान कर रहे हैं और उनकी अंग-अंग की माधुरी कहते नहीं बनती ॥२॥

हे सखी, यमुनाजी का तट है, शीतल-मन्द-सुगन्ध पवन बह रहा है और श्रीश्यामाश्याम के इस अद्भुत नृत्य को देखकर श्रीवृन्दावन के कपोती कोकिला और कीर ने मौन व्रत धारण कर लिया है। (वे मंत्र मुग्ध से होकर चुपचाप बैठे हुए हैं।) ॥३॥

मन को चुराने वाले नागरी और नवल किशोर मनोहर मन्द्र और घोर (तीव्र) स्वर ग्रामों का आश्रय लेकर सरस रीति से गान कर रहे हैं ॥४॥

सखी भावापन्न श्रीहित हरिवंश कहते हैं कि नव तरुणि श्रीराधा रस वर्षण कर रही हैं और उनके कंकण, किंकिणी एवं नूपुरों से मुखरित होने वाली ध्वनि सुनाई दे रही है ॥५॥

आज सम्हारत नाहिन गोरी ॥१॥
फूली फिरत मत्त करिनी ज्यौं सुरत समुद्र झकोरी ॥२॥

CC-0. Shri Vipin Kumar Col. Deoband. In Public Domain.

Digitized by Madhuban Trust, Delhi

आलस-बलित अरुन धूसर मखि प्रगट करत दृग चोरी ।।३।।
पिय पर करुन अमी रस बरसत अधर अरुनता थोरी ।।४।।
बांधत भृङ्ग उरज-अम्बुज पर अलक निबन्ध किशोरी ।।५।।
संगम किरच-किरच कंचुकी बँद सिथिल भई कटि डोरी ।।६।।
देत असीस निरखि जुवती जन जिनकै प्रीति न थोरी ।
(जैश्री)हितहरिवंश विपिन-भूतल पर संतत अविचल जोरी ।।७।।

भूमिकाः—इस पद में सुरतांत छबि का वर्णन है। इस प्रकार के कई पदों में प्रेम में छके हुये श्यामसुन्दर की असावधानता एवं विवशता का वर्णन तो हुआ है किन्तु श्रीराधा को हर स्थिति में सावधान ही दिखलाया गया है । श्रीध्रुवदासजी ने 'हित शृङ्गार लीला' में श्रीश्यामाश्याम के प्रेम की तुलना करते हुये कहा है कि यद्यपि श्रीप्रिया एवं प्रियतम को समान प्रेमावेश रहता है तथापि श्रीराधा का प्रेम इतना गम्भीर है कि उसका वर्णन वाणी नहीं कर सकती । श्रीप्रिया का निर्मल प्रेम-सागर उसमें उठने वाली भाव तरंगों को अपने अंदर ही समा लेता है और यदि कभी वह अपनी मर्यादा छोड़कर उमड़ पड़ता है तो किसी के रोके नहीं रुकता,

यद्यपि प्यारे पीय कों, रहत है प्रेम अबेस।
कुँवरि प्रेम गम्भीर तहँ, नाहिन वचन प्रबेस ।।
प्रिया प्रेम सागर अमल, लहरिन लेत समाइ।
उमड़ै जो मर्जाद तजि, कापै रोक्यौ जाइ ।।

उधर श्रीहिताचार्य ने हित चौरासी के एक पद में कहा है कि प्रेम का स्वभाव ही ऐसा है कि वह किसी की मर्यादा नहीं रखता— 'प्रीति न काहु की कानि विचारै'। अत्यन्त गम्भीर प्रेम वाली श्रीराधा भी इसका अपवाद नहीं है, इस बात की व्यंजना इस पद में की गई है।

CC-0. Shri Vipin Kumar Col. Deoband. In Public Domain.

Digitized by Madhuban Trust, Delhi

श्रीहित सजनी श्रीराधा को सुरतोत्तर बेसँभार प्रेममत्तता और उल्लास का वर्णन अपनी कृपापात्र सखी से करती हुई कहती हैं:—

व्याख्या:—आज गोरी श्रीराधा प्रेमानन्द में बेसँभार बन रही हैं ॥१॥

शृङ्गार-केलि के समुद्र में झकोरी हुई (डुबाकर निकाली हुई) श्रीराधा मत्त करिणी की भाँति निकुंज मन्दिर में फूली-फूली घूम रही हैं ॥२॥

उनके आलस्य से घिरे हुये, अरुण वर्ण एवं फैले हुए कज्जल वाले नेत्र उनकी चोरी को प्रकट कर रहे हैं।

(उनका सहचरियों से छिपकर अपने प्रियतम से मिलना प्रकट कर रहे हैं।) ॥३॥

वे अपने प्रियतम पर करुणा पूर्वक अमृत रस की वर्षा कर रही हैं। (श्रीध्रुवदास ने अपनी 'रहस्य लता लीला' में कहा है कि 'श्रीराधा के श्रीअंग में रूप छटा आदि अनेक छटायें उमड़ी रहती हैं। हे सखी, प्रियतम का बिचारा एक चातक मन इन सबको कैसे सँभाल सकता है!')

रूप छटा छवि की छटा, उमड़ी रहत अनेक।
कैसे सकै सँभारि सखि, पिय मन चातक एक ॥

अपने परम सुकुमार प्रियतम के मन की यह स्थिति समझ कर ही श्रीराधा करुणा-द्रवित हो रही हैं। उनकी इस करुणा से उनके प्रियतम के मन का सहज रूप से पोषण होता है। इसीलिये इस करुणा को यहाँ 'अमृत रस' कहा गया है।) और (रस-तृषित प्रियतम के द्वारा आकुल पान किये जाने के कारण) उनके अधर विवर्ण हो रहे हैं ॥४॥

CC-0. Shri Vipin Kumar Col. Deoband. In Public Domain.

Digitized by Madhuban Trust, Delhi

(हे सखी) आवेश युक्त रति-क्रीड़ा में श्रीराधा की वेणी (अलक निबन्ध) बिखर कर उनके कुचों पर झूलने लगी और वे उसको समेट कर बाँध रही हैं। उसको देखकर ऐसा मालुम होता है कि वे अपने कुच-कमलों पर मँडराते हुये भ्रमरों को बाँध रही हैं ॥५॥

प्रियतम के साथ क्रीड़ा-विलास में कंचुकी बन्धन के टुकड़े-टुकड़े हो गये हैं। और कटि की डोरी (लहँगे की डोरी) शिथिल हो गई है ॥६॥

सखी भावापन्न श्रीहित हरिवंश कहते हैं कि अधिक प्रीति वाली सहचरीगण (अपनी प्राणाधिका स्वामिनी श्रीराधा को इस आनन्दोल्लासमयी रस-स्थिति में देखकर) उनको एवं उनके प्रियतम को आशीष देती हुई कहती हैं कि श्रीवृन्दाविपिन भूतल पर यह जोड़ी सदैव अविचल बनी रहो ॥७॥

[७१]

श्याम संग राधिका रासमण्डल बनी ॥१॥

बीच नन्दलाल ब्रज बाल चम्पक बरन,
ज्यौंव घन तडित बिच कनक मर्कत मनी ॥२॥

लेत गति मान तत्तथेई हस्तक भेद,
स,रि,ग,म,प,ध,नि, ये सप्त सुर नादनी ॥३॥

नित्यं रस पहिर पट नील प्रकटित छबी,
बदन जनु जलद में मकर की चाँदनी ॥४॥

राग रागिनी तान मान संगीत मत,
थकित राकेस नभ सरद की जामिनी ॥५॥

CC-0. Shri Vipin Kumar Col. Deoband. In Public Domain.

Digitized by Madhuban Trust, Delhi

(जैश्री) हित हरिवंश प्रभु हंस कटि केहरी,
दूरि कृत मदन-मद मत्त गजगामिनी ॥६॥

भूमिका:—यह भी रास का पद है । जैसा हम 'खेलत रास रसिक ब्रजमंडन' की भूमिका में कह चुके हैं, इस पद में श्रीहिताचार्य ने दो मंडलों की स्थापना की है— एक बाह्य दूसरा अंतरंग । बाह्य मंडल की योजना दो गोपियों के बीच में एक श्यामसुन्दर के क्रम से हुई है और अंतरंग मंडल में श्रीश्यामाश्याम स्थित हैं ।

श्रीहित सजनी अपनी कृपापात्र सखी से अंतरंग मंडल स्थित युगलकिशोर के रास-विलास का वर्णन करती हुई कहती हैं:—

व्याख्या:—**श्रीश्यामसुन्दर के साथ श्रीराधा रास मण्डल में सुशोभित हो रही हैं ॥१॥**

मध्य में नन्दलाल और चम्पक के समान गौर वर्ण वाली ब्रजबाल श्रीराधा स्थित हैं। (उनके चारों ओर एक-एक ब्रजबाल के साथ एक-एक नन्दलाल नृत्य कर रहे हैं। उनको तथा उनके मध्य में स्थित श्रीराधानंदलाल को देखकर ऐसा मालुम होता है) **मानों घन-दामिनी के मध्य में कनक और श्याम मणि स्थित हों ॥२॥**

श्रीराधा सम दिखलाती हुई नृत्य की गति ले रही हैं और मुख से ता-ता-थेई बोल रही हैं तथा स, रे, ग, म, प, ध, नि इन सात स्वरों को लेकर गान कर रही हैं ॥३॥

इस रसमय नृत्य में श्रीराधा नें नीलाम्बर धारण कर रखा है। नील अवगुंठन में से प्रकट होने वाली उनके मुख की छबि ऐसी मालुम होती है मानो मेघों में माघ मास की चाँदनी हो।

(माघ मास में चाँदनी बहुत निर्मल होती है और उस समय आकाश में बादल चलते रहते हैं । नील अवगुण्ठन में से छनकर

CC-0. Shri Vipin Kumar Col. Deoband. In Public Domain.

Digitized by Madhuban Trust, Delhi

निकलने वाली गौर मुख की आभा के साथ जलद में से छनने वाली मकर चाँदनी का सादृश्य अत्यन्त मनोहारी है।) ॥४॥

संगीत शास्त्रसंमत राग-रागिनी, तान, आलाप एवं सम-प्रदर्शन के द्वारा शरद रात्रि का चन्द्र आकाश में थकित हो रहा है ॥५॥

सखी भावापन्न श्रीहित हरिवंश कहते हैं कि मेरे प्रभु श्रीश्यामसुन्दर हंस के समान हैं और उनकी कटि केहरी के समान क्षीण है, मेरी स्वामिनी श्रीराधा मदन के मद को दूर करने वाली हैं और उनकी चाल मत्त गज जैसी है ॥६॥

[७२]

सुन्दर पुलिन सुभग सुख दायक।

नव - नव घन अनुराग परस्पर,
खेलत कुँवर नागरी नायक ॥१॥

सीतल हंससुता रस बीचिन,
परसि पवन सीकर मृदु बरसत।

वर मन्दार कमल चम्पक कुल,
सौरभ सरस मिथुन मन हरसत ॥२॥

सकल सुधङ्ग विलास परावधि,
नाचत नवल मिले सुर गावत।

मृगज मयूर मराल भ्रमर पिक,
अद्भुत कोटि मदन सिर नावत ॥३॥

CC-0. Shri Vipin Kumar Col. Deoband. In Public Domain.

Digitized by Madhuban Trust, Delhi

निर्मित कुसुम सयन मधु पूरित,
भाजन कनक निकुंज विराजत ।
रजनी मुख सुख रासि परस्पर,
सुरत समर दोऊ दल साजत ॥४॥

विट - कुल - नृपति किसोरी कर धृत,
बुधि बल नीबी - बन्धन मोचत ।
नेति - नेति बचनामृत बोलत,
प्रणय - कोप प्रीतम नहिं सोचत ॥५॥

(जै श्री) हित हरिवंश रसिक ललितादिक,
लता - भवन रंध्रन अवलोकत ।
अनुपम सुख भर भरित विवस असु,
आनन्द वारि कण्ठ दृग रोकत ॥६॥

भूमिकाः—इस पद में श्रीश्यामाश्याम का ग्रीष्म-ऋतु कालीन प्रेम विलास वर्णित है।

श्रीयमुना पुलिन पर स्थित लता भवन में सुंदर पुष्प शैया की रचना सखीजनों ने की है । उस पर रसिक रस-सागर श्रीश्यामा-श्याम प्रेम-क्रीड़ा रत हैं । सहचरीगण लता भवन के छिद्रों में से इस अनुपम दिव्य केलि का दर्शन कर रही हैं ।

श्रीहित सजनी अपनी कृपापात्र सखी से इसका वर्णन करती हुई कहती हैं:—

व्याख्याः—सुन्दर यमुना पुलिन सुभग और सुखदायक है। जहाँ परस्पर नित्य नवीन एवं सघन अनुराग वाले नागरी श्रीराधा एवं नायक श्रीश्यामघन दोनों कुँवर क्रीड़ा कर रहे हैं ॥१॥

CC-0. Shri Vipin Kumar Col. Deoband. In Public Domain.

यमुनाजी की शीतल रस तरंगों का स्पर्श करके पवन मृदुल कणों का वर्षण कर रहा है और श्रेष्ठ मन्दार (कल्पवृक्ष), कमल एवं चम्पक समूह का सरस सौरभ श्रीयुगल के मन को हर्षित कर रहा है ।।२।।

सम्पूर्ण सुधंग (नृत्य) विलास की परावधि श्रीश्यामाश्याम नवीन प्रकार से नृत्य कर रहे हैं और परस्पर स्वर मिलाकर गान कर रहे हैं । उनको देखकर मृग शावक, मोर, हंस, भ्रमर कोयल एवं अद्भुत कोटि (परमोत्कर्ष) वाले मदन सिर झुका रहे हैं।

(उनके नेत्रों को देखकर मृगछौना, नृत्य को देखकर मयूर, गति को देखकर हंस, श्रीश्यामसुन्दर के स्वर को सुनकर भ्रमर, श्रीराधा के स्वर को सुनकर कोकिल एवं दोनों की रूप माधुरी को देखकर अद्भुत मदन पराजित हो रहे हैं ।) ।।३।।

निकुंज भवन में पुष्पों के द्वारा शैया की रचना हुई है एवं प्रेम-मदिरा से भरे हुए कनक पात्र वहाँ शोभायमान हैं । (इस शैया पर विराजमान) परस्पर सुख की राशि दोनों श्रीश्यामाश्याम संध्या काल में प्रेम संग्राम के लिए मनोरथों की सेना सजा रहे हैं ।।४।।

रस लम्पटों के कुल के नृपति श्रीश्यामघन किशोरी श्रीराधा के कर कमलों को पकड़कर बुद्धि बल से (छलबल से) उनके नीबी बन्धन (कटिबंधन) को खोलना चाहते हैं और श्रीप्रिया 'नहीं-नहीं' बचनामृत बोल रही हैं । किन्तु प्रियतम श्रीश्यामघन (उनको सर्वाधिक प्रिय होने के कारण) उनके प्रणय-कोप पर ध्यान नहीं देते ।।५।।

सखी भावापन्न श्रीहित हरिवंश कहते हैं कि रसिक ललितादिक लताभवन में रंध्रों से इस परम सुन्दर केलि का अवलोकन कर रही हैं और तज्जनित अनुपम सुख के आधिक्य से भरकर उनके

CC-0. Shri Vipin Kumar Col. Deoband. In Public Domain.

Digitized by Madhuban Trust, Delhi

प्राण विवश बन गये हैं। (दर्शन में बाधा उपस्थित होने के भय से) वे (उमड़ते हुए) आनन्द जल को अपने कण्ठ और नेत्रों में रोक रही हैं ॥६॥

[७३]

खंजन मीन मृगज मद मेटत कहा कहों नैनन की बातैं ॥१॥
सुनि सुन्दरी कहाँ लों सिखईं मोहन बसी करन की घातैं ॥२॥
बंक निसंक चपल अनियारे अरुन-श्याम-सित रचे कहाँतैं ॥३॥
डरत न हरत परायौ सर्बस मृदु मधुमिव मादिक दृग-पातैं ॥४॥
नेकु प्रसन्न दृष्टि पूरन करि नहि मोतन चितयौ प्रमदा तैं ॥५॥
(जैश्री) हित हरिवंश हंस-कल-गामिनि,
भावै सो करहु प्रेम के नातैं ॥६॥

भूमिकाः—इस पद में श्रीश्यामसुन्दर के मुख से श्रीराधा के नेत्रों का अत्यन्त आकर्षक वर्णन हुआ है। पद के अंत में नित्य दुलहिनी श्रीराधा की सहज एवं निष्प्रयोजन वामता की ओर मार्मिक संकेत किया गया है। प्रियतम के प्रति निरतिशय प्रेम ही इस वामता का कारण बनता है। रसिकजनों में इस संबंध में एक श्लोक प्रसिद्ध है कि नदियों की, बधुओं की, भुजंगों की एवं प्रेम की गति अकारण वक्र होती है,

नदीनां च वधूनां च भुजंगानां च सर्वदा।
प्रेम्णामपि गतिर्वक्रा कारणं तत्र नेष्यते॥

श्रीश्यामसुन्दर निकुंज मंदिर में पुष्प शैया पर विराजमान हैं और उनके तन-मन में श्रीराधा के अनुपम रूप-सौंदर्य से नई-नई प्रेम-तरंगें उठ रही हैं। सहसा उनकी दृष्टि श्रीप्रिया के नेत्रों के

CC-0. Shri Vipin Kumar Col. Deoband. In Public Domain.

अद्‌भुत सौंदर्य पर स्थिर हो जाती है और वे प्रेम-विह्वल बनकर श्रीराधा को सम्बोधन करके उनके नेत्रों का मर्मस्पर्शी एवं चित्रात्मक वर्णन करते हुए उनसे कहते हैं:—

व्याख्या:—हे प्रिया, मैं तुम्हारे नेत्रों की बात क्या कहूँ ? ये (अपनी चंचलता से) खंजन का, (अपनी तिरछी गति से) मीन का और (अपने रसीलेपन और भोलेपन से) मृगछौना का गर्व मिटाते हैं ॥१॥

हे सुन्दरी, मेरी बात सुनो और यह बताओ कि तुमने इन नेत्रों को (इनकी ओर देखने वाले को) मोहित करने के एवं स्ववश करने के कितने दावपेच सिखा रखे हैं ? ॥२॥

ये तुम्हारे नेत्र बाँकी चितवन वाले हैं, (चोट करने में) निशंक हैं, चपल हैं, कटीले हैं, अरुण हैं, श्याम हैं और सित हैं। इनकी रचना किस विधाता ने की है ? ॥३॥

ये दूसरे का सर्वस्व हरण करने में तनिक भी नहीं डरते और इनके दृगपात (कटाक्ष) मृदु आसव के समान मादक होते हैं ॥४॥

हे सुन्दरी, तुमने (आज तक) मेरी ओर किंचित् भी प्रसन्न एवं पूर्ण दृष्टि से नहीं देखा ॥५॥

श्रीहित हरिवंश कहते हैं कि (अपनी प्रिया के समक्ष सब प्रकार से निरुपाय बनकर श्रीश्यामसुन्दर बोले कि) हे हंस जैसी गति वाली प्रिया, प्रेम के सम्बन्ध को लेकर आपके मन को जो अच्छा लगे वही करो ॥६॥

[७४]

काहेको मान बढावत है,
बालक - मृग - लोचन ॥१॥

Digitized by Madhuban Trust, Delhi

हौंव डरन कछु कहि न सकत,
इक बात सँकोचन ॥२॥
मत्त मुरलि अन्तर तव गावत,
जागृत - सैन तवाकृति सोचन ॥३॥
(जै श्री) हित हरिवंश महा मोहन पिय,
आतुर विट बिरहज दुख मोचन ॥४॥

भूमिकाः—यह मान का पद है। मान के पदों में श्रीहिताचार्य अपने सखी स्वरूप में स्थित होकर श्रीराधा का मान विमोचन करने का प्रयास करते हैं। श्रीराधा उनकी सर्वस्व हैं और उनके साथ उनके अनंत नाते हैं। श्रीराधा से बात-चीत करते हुये उनके ये विविध सम्बन्ध प्रकट होते रहते हैं। कहीं वे अपने उपदेशों को विफल बनता देखकर 'कर धूनन' करते दिखलाई देते हैं, कहीं श्रीराधा की अनुनय-विनय करके उनको श्रीश्यामसुंदर के अनुकूल बनाते दिखलाई देते हैं, कहीं दूती कर्म करते दिखलाई देते हैं, कहीं गुरुजनों की भाँति उनको मार्ग सूचन करते दिखलाई देते हैं। उनकी ये सब बातें उनके सहचरी भाव के अनुकूल हैं और कार्य सिद्धि का प्रधान लक्ष रखकर की गई हैं। किन्तु सहचरियाँ मूलतः श्रीराधा किंकरी हैं और उनका सख्य भाव उनके दास्य पर आधारित है।

प्रस्तुत पद में श्रीराधा का मान मोचन करते समय श्रीहित हरिवंश का यह मौलिक दास्य भाव उभर आया है। इस समय मानवती श्रीराधा की मनोदशा ही कुछ ऐसी है कि उसको बदलने के लिये दास्य ही उपयोगी हो सकता है और इसीलिये उन्होंने इनका आश्रय लिया है।

मानवती श्रीराधा के मान मोचन के लिये उनको विदग्धता पूर्वक समझाती हुई श्रीहित सजनी कहती हैं।—

CC-0. Shri Vipin Kumar Col. Deoband. In Public Domain.

Digitized by Madhuban Trust, Delhi

व्याख्याः—हे मृगछौना जैसे भोले एवं रसीले नेत्र वाली (श्रीप्रिया) तुम मान का विस्तार क्यों कर रही हो ? ॥१॥

मैं इस समय भय से और संकोच से एक भी बात कहने में अपने को असमर्थ पा रही हूँ ॥२॥

मैं तो केवल इतना जानती हूँ कि श्रीश्यामघन मत्त-भाव से मुरली में तुम्हारा गान करते रहते हैं और सोते-जागते तुम्हारी आकृति का चिंतन करते रहते हैं ॥३॥

सखी भावापन्न श्रीहित हरिवंश कहते हैं कि महामोहन एवं रस-लंपट आतुर प्रियतम के विरह जनित दुख को दूर करने वाली श्रीप्रिया, उनके कष्ट को दूर करो।

(इस पद में सहचरी ने अपनी बात कहने में जिस भय एवं संकोच का उल्लेख किया है उसका निर्वाह उसने अंत तक किया है। वह श्रीश्यामघन की विरह-वेदना का तो पूरा चित्रण कर देती है किन्तु, अन्य पदों की भाँति, वह श्रीप्रिया से उनसे मिलने का आग्रय नहीं करती।) ॥४॥

[७५]

हों जु कहत इक बात,
सखी सुनि काहे कों डारत ॥१॥
प्रान रवन सों क्योंव करत,
आगस बिनु आरत ॥२॥
पिय चितवत तव चन्द्रवदन तन,
तू अधमुख निज चरन निहारत ॥३॥

CC-0. Shri Vipin Kumar Col. Deoband. In Public Domain.

Digitized by Madhuban Trust, Delhi

वे मृदु चिबुक प्रलोय प्रबोधत,
तू भामिनी कर सों कर टारत ॥४॥

विवस अधीर बिरह अति कातर,
सर - औसर कछुवै न बिचारत ॥५॥

(जै श्री) हित हरिवंश रहसि प्रीतम मिलि,
तृषित नैन काहे न प्रतिपारत ॥६॥

भूमिका:—यह पद भी मान का है। सेवक वाणी का अंतिम प्रकरण 'अबोलनो' इस पद पर सम्पूर्णतया आधारित है।

मानवती श्रीराधा की अनेक प्रकार से अनुनय विनय करने पर भी जब उन्होंने उनको अपने हठ पर दृढ़ देखा तब श्रीहित-सहचरी विफलता-जनित किंचित खीझ के साथ उनको समझाती हुई कहती हैं:—

व्याख्या:—हे सखी श्रीराधे सुनो, मैं तुमसे जो एक ही बात बार - बार कह रही हूँ उसको तुम क्यों नहीं स्वीकार कर रही हो ? ॥१॥

(हे प्रिया) तुम मुझे यह बताओ कि जो तुम्हारे प्राणों में रमे हुए हैं और जो निरपराध एवं आर्त हैं उनसे तुम इतनी कठोरता क्यों करती हो ? ॥२॥

तुम्हारे प्रियतम तुम्हारे चन्द्रमुख की ओर देख रहे हैं और तुम नीचे की ओर मुख करके अपने चरणों को देख रही हो ॥३॥

वे तुम्हारी मृदु चिबुक को सहलाकर तुमको समझानें की चेष्टा कर रहे हैं और हे भामिनी, तुम अपने कर-कमल से उनके हस्त कमल को हटा रही हो ॥४॥

CC-0. Shri Vipin Kumar Col. Deoband. In Public Domain.

Digitized by Madhuban Trust, Delhi

तुम्हारे प्रियतम विरह से अत्यन्त कातर बनकर विवश और अधीर बनें हुये हैं और तुम हो कि समय-असमय का कुछ भी विचार नहीं करतीं।

(किस समय कितना मान करना चाहिए यह नहीं विचारतीं।) ॥५॥

सखी भावापन्न श्रीहित हरिवंश कहते हैं कि तुम अपनें प्रियतम से एकान्त में मिलकर उनके तृषित नेत्रों का (अपने रूप-रस से) प्रतिपालन क्यों नहीं करतीं ? ॥६॥

[७६]

नागरी निकुंज ऐंन किसलय दल रचित सैंन,
कोक कला कुसल कुंवरि अति उदार री ॥१॥

सुरत रंग अङ्ग - अङ्ग, हाव भाव भृकुटि भङ्ग,
माधुरी तरंग मथत कोटि मार री ॥२॥

मुखर नू पुरन सुभाव, किंकनी विचित्र राव,
विरम - विरम नाथ बदत वर विहार री ॥३॥

लाड़िली किसोर राज, हंस - हंसनी समाज,
सींचत हरिवंश नयन सुरस सार री ॥४॥

भूमिका:—यह शैया विहार का पद है। श्रीश्यामाश्याम अपनी दासियों (सखियों) के नेत्रों में उत्तमोत्तम रस के सार का सिंचन करने के लिए क्रीड़ा-विहार करते हैं, इस बात का सूचन प्रस्तुत पद की अंतिम पंक्ति से होता है।

CC-0. Shri Vipin Kumar Col. Deoband. In Public Domain.

Digitized by Madhuban Trust, Delhi

श्रीवृन्दावन निकुंज गृह में किसलय दलों की शैया पर श्रीश्यामाश्याम उन्मद प्रेम-विहार में रत हैं। आज के विहार में श्रीप्रिया की सहज उदार रति अपने उज्वलतम रूप में प्रकट हो रही है और वे अपने प्रियतम का अधिकाधिक पोषण कर रही हैं।

श्रीहित सजनी धन्यता का अनुभव करती हुई हर्षित होकर इस विहार का वर्णन अपनी कृपापात्र सखी से करती हुई कहती हैं:—

व्याख्या:—हे सखी, नागरी (सुरुचि पूर्ण) निकुंज गृह में किसलय दलों से शैया रची गई है। उस पर श्रृङ्गार की विविध कलाओं में कुशल एवं रति-दान में अत्यन्त उदार कुँवरि श्रीराधा (अपने प्रियतम के साथ) विराजमान हैं ॥१॥

हे सखी, उनके (श्रीराधा के) अंग-अंग में सुरत-रंग (प्रेम रंग) पूरित है एवं तज्जनित हाव भाव तथा भृकुटि भंग से उत्पन्न होने वाली माधुरी-तरंगों ने कोटि-कोटि मन्मथों को मथित कर दिया है ॥२॥

उनके नूपुर मुखरित हो रहे हैं (बज रहे हैं) और उनकी किंकिणी में से विचित्र शब्द निकल रहा है। उनके नाथ श्रीश्याम-सुन्दर (उनको उन्मद विहार के कारण श्रमित देखकर) उनसे कहते हैं कि हे प्रिया, श्रेष्ठ विहार हो चुका अब 'विश्राम करो–विश्राम करो'। (सेवकजी ने अपनी वाणी के आठवें प्रकरण में इस पंक्ति को उठाकर कहा है कि नाथ ने जो विहार काल में 'विश्राम करो–विश्राम करो' कहा था। उसके द्वारा प्रकट होने वाली उनकी अनुपम रति कैसे भुलाई जा सकती है।)

> नाथ विरंम-विरंम कह्यौ तव,
> सो रति तैसी धौं कैसे भुलाई।

CC-0. Shri Vipin Kumar Col. Deoband. In Public Domain.

Digitized by Madhuban Trust, Delhi

(वस्तुतः पूर्ण सुखानुभव काल में अपने सुख की परवाह न करके प्रेमपात्र के सुख की ओर ध्यान रखना पूर्ण तत्सुखमय प्रीति में ही सम्भव है ।) ॥३॥

सखी भावापन्न श्रीहित हरिवंश कहते हैं कि हंस-हंसनी के समान (नित्य मिलन युक्त) लाड़िली श्रीराधा और किशोरराज (श्रेष्ठ किशोर) श्रीश्यामसुन्दर मेरे नेत्रों में सुन्दर रस के सार का सिंचन करते रहते हैं ॥४॥

[७७]

लटकत फिरत जुवति रस फूली ॥१॥

लता भवन में सरस सकल निशि,
पिय सँग सुरत - हिंडोरे झूली ॥२॥

जद्यपि अति अनुराग रसासव पान-
बिबस नाहिन गति भूली ॥३॥

आलस - बलित नैंन विगलित लट,
उर पर कछुक कंचुकी खूली ॥४॥

मरगजी माल सिथिल कटि बंधन,
चित्रित कज्जल पोक दुकूली ॥५॥

(जै श्री) हित हरिवंश मदन - सर जरजर,
विथकित श्याम सजीवन मूली ॥६॥

भूमिकाः—इस पद में श्रीराधा की सुरतांत शोभा का वर्णन है। सत्तरवें पद में उनको 'सुरत-समुद्र में झकोरी' होने के कारण

CC-0. Shri Vipin Kumar Col. Deoband. In Public Domain.

Digitized by Madhuban Trust, Delhi

प्रेमसँभार दिखलाया गया है। इस पद में 'अनुराग रसासव के अतिशय पान से विवश' स्थिति में होते हुए भी वे अपनी स्वाभाविक सावधान गति (वामता) को भूल नहीं रही हैं। पद की अंतिम पंक्ति में श्रीराधा को 'मदन-सर जरजर, विथकित श्याम सजीवन मूली' कहा गया है। यह श्रीहिताचार्य रचित राधा सुधानिधि स्तोत्र-ग्रन्थ के पाँचवे श्लोक की अंतिम दो पंक्तियों का अक्षरशः अनुवाद है। वे पंक्तियाँ हैं,

कन्दर्पकोटि शर मूर्छित नन्दसूनु-
सञ्जीवनी जयति कापि निकुञ्जदेवी ॥

श्रीहित सजनी श्रीप्रिया की प्रातःकालीन छबि का वर्णन अपनी कृपापात्र सखी से करती हुई कहती हैं:—

व्याख्या:—(हे सखी) रस में फूली हुई युवती श्रीराधा बलखाती हुई सुन्दर चाल से घूम रही हैं ॥१॥

वे अपने प्रियतम के संग लता-भवन में सम्पूर्ण रात्रि प्रेम-हिंडोले में सरस रीति से झूली हैं।

(उन्होंने सम्पूर्ण रात्रि प्रियतम के साथ सुरत विहार में व्यतीत की है।) ॥२॥

वे यद्यपि अनुराग-रस रूपी आसव (मदिरा) के अतिशय पान से विवश बनी हुई हैं किन्तु अपनी सहज वामता को भूली नहीं हैं ॥३॥

उनके नेत्र आलस्य से घिरे हुए हैं, उनकी लटें छूटी हुई हैं एवं उनके वक्षस्थल पर धारण की हुई कंचुकी कुछ खुली हुई है ॥४॥

उनके उर पर धारण की हुई पुष्पमाल मसली हुई है, कटि बन्धन शिथिल है एवं उनकी चूनरी का छोर, सुरत विहार में उनके

CC-0. Shri Vipin Kumar Col. Deoband. In Public Domain.

Digitized by Madhuban Trust, Delhi

कपोलों पर लगे हुए काजल एवं पीक की रेखाओं के पोंछने से, चित्रित हो रहा है ॥५॥

सखी भावापन्न श्रीहित हरिवंश कहते हैं कि मदन के वाणों से जर-जर बनें हुये विथकित श्यामसुन्दर की ये संजीवनी जड़ी हैं। (उनको नवीन जीवन प्रदान करने वाली हैं।) ॥६॥

[७८]

सुधङ्ग नाचत नवल किसोरी ॥१॥
थेई - थेई कहत चहत प्रीतम दिसि,
वदनचन्द्र मनों तृषित चकोरी ॥२॥
तान बंधान मान में नागरि,
देखत श्याम कहत हो - हो री ॥३॥
(जै श्री) हित हरिवंश माधुरी अँग-अँग,
बरबस लियौ मोहन चित चोरी ॥४॥

भूमिकाः—इस छोटे से पद में श्रीराधा के नृत्य का संक्षिप्त-सा वर्णन है किन्तु उनके नृत्य की चमत्कार पूर्णता एवं गरिमा की व्यंजना बड़ी कुशलता पूर्वक यह कहकर की गई है कि उसको देखकर नटवर श्रीश्यामसुंदर परमाश्चर्य से हो-हो कह उठते हैं। श्रीश्यामसुन्दर एवं नृत्य-संगीत आदिक कलाओं में पारंगत हैं किन्तु, रसिकजनों ने, इनमें श्रीराधा को उनका गुरु माना है । श्रीहरिराम व्यास ने अपने प्रसिद्ध पद में श्रीराधा द्वारा श्रीश्यामघन को संगीत की शिक्षा देने का वर्णन किया है,

पिय कों नचवन सिखवत प्यारी ।

× × × ×

CC-0. Shri Vipin Kumar Col. Deoband. In Public Domain.

Digitized by Madhuban Trust, Delhi

मान गुमान लकुट लियें ठाड़ी डरपत कुंजबिहारी ।।

स्वामी हरिदासजी ने भी यही बात कही है,

गुन की बात राधे तेरे आगें को जानैं,
जो जानैं सो कछु उनहारि।

× × × ×

श्रीहरिदास के स्वामी श्यामा कुंज विहारी-
नैंक तुम्हारी प्रकृति के अंग-अंग और गुनी परे हारि ।।

श्रीयमुना तट पर स्थित रास मंडल पर श्रीराधा अपने प्रियतम श्रीश्यामसुन्दर की सन्निधि में अत्यन्त उल्लास युक्त नृत्य कर रही हैं। श्रीहित सजनी उसका वर्णन अपनी कृपापात्र सखी से करती हुई कहती हैं:—

व्याख्या:—नवल किशोरी श्रीराधा सुधंग की रीति से नृत्य कर रही हैं ।।१।।

वे थेई-थेई कहती हुई अपनें प्रियतम के मुखचन्द्र की ओर तृषित चकोरी की भाँति देख रही हैं ।।२।।

वे तानों की बंधान (रचना) में एवं सम के साधने में अत्यन्त कुशल हैं । उनके अद्‌भुत नृत्य को देखकर श्रीश्यामसुन्दर आश्चर्य चकित होकर 'हो-हो' कह रहे हैं ।।३।।

सखी भावापन्न श्रीहित हरिवंश कहते हैं कि उनके अंग-अंग की माधुरी ने बल पूर्वक मोहन के चित्त को चुरा लिया है ।।४।।

CC-0. Shri Vipin Kumar Col. Deoband. In Public Domain.

Digitized by Madhuban Trust, Delhi

[७९]

रहसि - रहसि मोहन पिय के संग री-
लड़ैती अति रस लटकत ॥१॥

सरस सुधंग अंग में नागरि,
थेई - थेई कहत अवनि पद पटकत ॥२॥

कोक कलाकुल जानि - सिरोमनि,
अभिनय कुटिल भृकुटियन मटकत ॥३॥

बिवस भये प्रीतम अलि लम्पट,
निरख करज नासापुट चटकत ॥४॥

गुन गन रसिक राइ चूड़ामनि,
रिझवत पदिक हार पट झटकत ॥५॥

(जै श्री) हित हरिवंश निकट दासी जन,
लोचन - चषक रसासव गटकत ॥६॥

भूमिका:—यह रास का पद है और इसमें नृत्य की नई भंगिमाओं का वर्णन है।

मधुर रस के वर्णन में सामान्यतया कोमल वर्णों का उपयोग किया जाता है। इस पद में इसके विपरीत 'टकार' जैसे कठोर वर्ण का प्रयोग अन्त्यानुप्रासों में किया गया है और उसका प्रयोजन नृत्य की गति एवं उसके ओज को प्रकट करना प्रतीत होता है।

सेवकजी ने अपनी वाणी के सप्तम प्रकरण में श्रीश्यामाश्याम के नृत्य के वर्णन में प्रस्तुत पद के अनुकरण पर 'टकार' की झड़ी

CC-0. Shri Vipin Kumar Col. Deoband. In Public Domain.

Digitized by Madhuban Trust, Delhi

लगा दी है और नृत्य के उत्साह एवं उसकी वेगवती गति को सफलता पूर्वक प्रकट कर दिया है,

झटकत पट, चुटकिन चटक, लटकत लट, मृदु हास ।
पटकत पद, उघटत शबद, मटकत भृकुटि-विलास ॥

श्रीहित सखी श्रीश्यामाश्याम के रास-विलास का वर्णन करती हुई अपनी कृपापात्र सखी से कहती हैं:—

व्याख्या:—अत्यन्त एकान्त (कुंज कुटीर) में अपने मनमोहन प्रियतम के साथ लड़ैती श्रीराधा अति रस-मत्त स्थिति में लटक रही हैं। (अंग-भंगियों का प्रदर्शन कर रही हैं।) ॥१॥

रसमय सुधंग नृत्य के विविध अंगों में कुशल वे (श्रीराधा) मुख से थेई-थेई बोल रही हैं और पृथ्वी पर चरणों को पटक रही हैं ॥२॥

श्रृङ्गार के विविध कला समूहों को जानने वालों में शिरोमणि (श्रीराधा) भाव प्रदर्शन के द्वारा बंक बनी हुई भृकुटियों को नचा रही हैं ॥३॥

(उनकी इन अत्यंत रसमयी एवं परम सुंदर चेष्टाओं के द्वारा उनके) लोभी भ्रमर प्रियतम को विवश बनता देखकर वे उनको सावधान करने के लिये चुटकी बजाती हैं।

('करज नासापुट') का अर्थ है अंगुलियों द्वारा बनाया हुआ नासापुट अर्थात् नासिका के अग्रभाग जैसा आकार । यह चुटकी बजाने में बनता है।) ॥४॥

गुण समूहों को परखने वाली रसिक चूड़ामणि श्रीश्यामघन को वे (श्रीराधा) (गुण प्रदर्शन के द्वारा) रिझा रही हैं और

CC-0. Shri Vipin Kumar Col. Deoband. In Public Domain.

Digitized by Madhuban Trust, Delhi

(उनको सावधान रखने के लिये) उनके वक्षस्थल पर धारण पदक और हार को एवं उनके पीतपट को झटक रही हैं ॥५॥

सखी भावापन्न श्रीहित हरिवंश कहते हैं कि उनके सदैव निकट रहने वाली उनकी दासियाँ अपने नेत्र रूपी पान-पात्रों के द्वारा (इस लीला से निर्झरित) रसामृत का आतुरता पूर्वक पान कर रही हैं ॥६॥

[८०]

बल्लवी सु कनक - बल्लरी तमाल श्याम संग,
लागि रही अङ्ग - अङ्ग मनोभिरामिनी ॥१॥
बदन जोत मनों मयंक, अलक तिलक छवि कलंक,
छपत श्याम अंक मानौं जलद दामिनी ॥२॥
बिगत बास हेम खम्भ, मनों भुवंग बेनी दंड,
पिय के कंठ प्रेम पुञ्ज कुञ्ज कामिनी ॥३॥
(जैश्री)सोभित हरिवंश नाथ साथ सुरत आलसवंत,
उरज कनक कलस राधिका सुनामिनी ॥४॥

भूमिकाः—यह शैया विहार का पद है । शृङ्गार रस के परिपाक के लिए विविध शृङ्गारिक चेष्टाओं का एवं विहार काल में नायक-नायिका का विविध पारस्परिक स्थितियों का वर्णन आवश्यक होता है । प्रस्तुत पद में हित चौरासी के अन्य पदों की अपेक्षा उक्त बातों का वर्णन कुछ अधिक खुले रूप में किया गया है किन्तु उससे शृङ्गार रस का पोषण ही हुआ है ।

श्रीश्यामाश्याम निकुंज मंदिर की परम अद्भुत चित्रसारी में कोमल कमल दलों की शैया पर केलि रत हैं । श्रीहित सहचरी

CC-0. Shri Vipin Kumar Col. Deoband. In Public Domain.

Digitized by Madhuban Trust, Delhi

उनके अद्‌भुत क्रीड़ा-विहार का वर्णन अपनी कृपापात्र सखी से करती हुई कहती हैं:—

व्याख्या:—बल्लवी (श्रीवृषभानु गोप की पुत्री) श्रीराधा श्यामसुन्दर रूप सघन तमाल के अंग-अंग में मनोभिरामिनी (मन को सुंदर लगने वाली) कनक-लता के समान गुँथी हुई हैं ॥१॥

उनके वदन की ज्योति ही मानो चन्द्र है जिसमें उनके अलक (केश) और तिलक की छबि कलंक (चन्द्रमा में लगे हुये श्याम चिन्ह) के समान है और वे श्रीश्यामसुन्दर के अंक में इस प्रकार लीन हो रही हैं जैसे मेघ में दामिनी होती है ॥२॥

(सहज देहानुसंधान रहित सुरत केलि में) श्रीराधा के कंठ से नीचे का स्वर्ण खम्भ जैसा पृष्ट-भाग विवस्त्र हो गया है। और उस पर झूलता हुआ वेणी दंड सर्प के समान प्रतीत हो रहा है। इस स्थिति में कामिनी श्रीराधा प्रेम पुंजमयी कुंज में प्रियतम के कंठ से लिपटी हुई हैं ॥३॥

सखी भावापन्न श्रीहित्त हरिवंश कहते हैं कि मेरे नाथ श्रीश्यामसुन्दर के साथ सुरत-जनित आलस्य युक्त एवं कनक कलश के समान उरोजों वाली श्रीराधिका शोभायमान हैं ॥४॥

[८१]

वृषभानुनन्दिनी मधुर कल गावै ॥१॥

विकट औंधर तान चर्चरी ताल सौं,
नन्दनन्दन मनसि मोद उपजावै ॥२॥

प्रथम मज्जन चारु, चीर कज्जल तिलक,
स्रवन कुंडल, वदन चन्द्रन लजावै ॥३॥

CC-0. Shri Vipin Kumar Col. Deoband. In Public Domain.

Digitized by Madhuban Trust, Delhi

सुभग नक बेसरी, रतन हाटक जरी,
अधर बंधूक, दसन कुन्द चमकावै ।।४।।
वलय कंकन चारु, उरसि राजत हारु,
कटिव किंकिनि, चरन नूपुर बजावै ।।५।।
हंस कल गामिनी, मथत मद कामिनी,
नखन मदयंतिका रंग - रुचि द्यावै ।।६।।
निर्त सागर रभस, रहसि नागर नवल,
चन्द्र - चाली विविध भेदन जनावै ।।७।।
कोक विद्या विदित, भाइ अभिनय निपुन,
भ्रूबिलासन मकरकेतन नचावै ।।८।।
निविड़ कानन भवन, बाहु रञ्जित रवन,
सरस आलाप सुख पुञ्ज बरसावै ।।९।।
उभय संगम सिन्धु, सुरत पूषन - बन्धु,
द्रवत मकरन्द हरिवंश अलि पावै ।।१०।।

भूमिका:—इस पद में श्रीवृषभानुनन्दिनी के रूप वर्णन के साथ उनके अद्भुत गान एवं नृत्य का मार्मिक वर्णन है । इस गान एवं नृत्य के श्रोता एवं दर्शक रसिक शेखर श्रीश्यामघन हैं और उन्हीं को रिझाने के लिए श्रीराधा इनमें प्रवृत्त हुई हैं।

श्रीप्रिया के रूप एवं उनके नृत्य-गान का वर्णन अपनी कृपा-पात्र सखी से करती हुई श्रीहित सजनी कहती हैं:—

व्याख्या:—श्रीवृषभानुनन्दिनी मधुर और सुन्दर गा रही हैं ।।१।।

CC-0. Shri Vipin Kumar Col. Deoband. In Public Domain.

Digitized by Madhuban Trust, Delhi

वे चर्चरी ताल का आश्रय लेकर विकट अटपटी तान से नन्दनन्दन के मन में मोद उत्पन्न कर रही हैं ।।२।।

उन्होंने प्रथम स्नान करके सुन्दर वस्त्र धारण किये हैं। उनके नेत्रों में काजल, मस्तक पर तिलक, कानों में कुंडल शोभायमान हैं और उनका गौर मुख अपनी शोभा से अनेक चन्द्रमाओं को लज्जित कर रहा है ।।३।।

उन्होंने नासिका में रत्न जटित सुवर्ण बेसर पहन रखी है। उनके अधर बंधूक (दुपहरिया के पुष्प) के समान लाल हैं और वे अपनी कुन्द पुष्प के समान श्वेत दंत-पंक्ति को चमका रही हैं।

(गान के कारण मुख खुलने से उनकी दन्त-पंक्ति चमक रही है।) ।।४।।

उन्होंनें सुन्दर चूड़ी और कंकण पहन रखे हैं, उनके वक्षस्थल पर हार शोभायमान हैं, उनकी कटि में किंकिणी है और वे अपने चरणों में धारण किये हुये नूपुरों को बजा रही हैं ।।५।।

श्रीवृषभानुनन्दिनी हंस के समान सुन्दर चाल वाली हैं। उन्होंनें अपने रूप और गुणों से कामिनी मात्र के मद को मथित कर दिया है एवं उनके नखों में रची हुई मँहदी का रंग (श्रीश्यामसुन्दर के हृदय में) रुचि उत्पन्न कर रहा है ।।६।।

वेगवान नृत्य की सागर रूपा एवं एकान्त विलास में नवल नागरी (कुशला) श्रीवृषभानुनन्दिनी सुधंग नृत्य के चन्द्रचाली आदि विविध भेदों को दिखा रही हैं ।।७।।

शृङ्गार की विविध विद्याओं की ज्ञाता और भाव प्रदर्शन में निपुण श्रीवृषभानुनन्दिनी अपने भृकुटि - विलासों से मकरकेतन (कामदेव) को नचा रही हैं ।।८।।

CC-0. Shri Vipin Kumar Col. Deoband. In Public Domain.

Digitized by Madhuban Trust, Delhi

(नृत्य-गान के पश्चात्) श्रीवृन्दावन के सघन लता-भवन में अपने प्रियतम के कंठ में बाहुलता डालकर वे (वृषभानुनंदिनी) सरस वार्तालाप करती हुई सुख समूह की वर्षा कर रही हैं ॥६॥

सखी भावापन्न श्रीहित हरिवंश कहते हैं कि इन दोनों के मिलन रूपी सिन्धु में शृङ्गारिक प्रेम का जो कमल खिल रहा है उसमें से द्रवित होने वाले पराग का मैं भ्रमर की भाँति पान करता रहता हूँ ।

(इन पंक्तियों में श्रीहिताचार्य ने अपनी उपासना के लक्ष को स्पष्ट किया है । श्रीध्रुवदास सखी भाव की उपासना का प्राप्तव्य बतलाते हुये कहते हैं कि नवकिशोर श्रीश्यामाश्याम सहज रूप की सीमा हैं । सखियों का प्रेम इन दोनों के प्रेम के साथ है अतः उनके सुख की सीमा नहीं है ।

सहज प्रेम की सीव दोऊ, नव किशोर वर जोर ।
प्रेम कौ प्रेम सखीन कै, तेहि सुख कौ नहिं ओर ॥

(प्रेमावली लीला)

श्रीहिताचार्य की उक्त पंक्तियों का तात्पर्य भी यही है किन्तु उन्होंने यहाँ श्रीश्यामाश्याम के प्रेम को मकरंद द्रवित करने वाले कमल के समान बताकर उस प्रेम की सौरभमयता को भी स्पष्ट कर दिया है । साथ ही इस कथन के द्वारा संसार के शृङ्गारिक प्रेम की दुर्गन्धमयता भी स्वयं ध्वनित हो जाती है ।

इन पंक्तियों से प्रेम के सामान्य स्वरूप पर भी प्रकाश पड़ता है । इनसे प्रेरणा ग्रहण करके मोहनजी ने प्रेम का लक्षण बतलाते हुए कहा है कि दो व्यक्ति मिलकर जिस एक पथ का दर्शन कराते हैं वह संसार में प्रेम कहलाता है,

द्वै मिलि एक पंथ दरसावैं,
सोई जग में प्रेम कहावै ।

CC-0. Shri Vipin Kumar Col. Deoband. In Public Domain.

Digitized by Madhuban Trust, Delhi

उभय श्रीश्यामाश्याम के मिलन रूपी सिन्धु में जो कमल खिल रहा है वह प्रेम का ही कमल है।) ॥१०॥

[८२]

नागरता की रासि किसोरी ॥१॥
नव नागरकुल मौलि साँवरो,
बरबस कियौ चितै मुख मोरी ॥२॥
रूप रुचिर अँग - अंग माधुरी,
बिनु भूषन भूषित ब्रज गोरी ॥३॥
छिन - छिन कुसल सुधङ्ग अङ्ग में,
कोक रभस रस सिंधु झकोरी ॥४॥
चंचल रसिक मधुप मोहन मन,
राखे कनक कमल कुच कोरी ॥५॥
प्रीतम नैन जुगल खञ्जन खग,
बाँधे विविध निबन्धन डोरी ॥६॥
अवनी उदर नाभि सरसी में,
मनों कछुक मादक मधु घोरी ॥७॥
(जै श्री) हित हरिवंश पिवत सुन्दर वर,
सींव सुदृढ़ निगमन की तोरी ॥८॥

भूमिकाः—यह पद हित चौरासी के सुन्दरतम पदों में से एक है। इसमें श्रीराधा के रूप सौंदर्य का बड़े मार्मिक ढंग से वर्णन किया गया है।

CC-0. Shri Vipin Kumar Col. Deoband. In Public Domain.

Digitized by Madhuban Trust, Delhi

कांता भाव वाली उपासना में उपासक श्रीश्यामसुन्दर के प्रति ब्रज की गोपीजनों के सहज अनुराग का अनुगमन करके प्रगति करता है। श्रीकृष्ण को परम कांत मानने वाली ब्रज-सीमन्तनियों की भक्ति रागात्मिका मानी गई है और उनकी इस भक्ति का अनुगमन करने वाली भक्ति रागानुगा कहलाती है।

सखी भाव की उपासना में सखियाँ श्रीराधा के प्रति श्रीश्यामसुंदर की अनुपम प्रीति का अनुगमन करती हैं। सखी भावोपासक श्रीहित रूपलाल गोस्वामी ने इसीलिये श्रीश्यामसुन्दर से उनको निकुंज महल का मार्ग बतलाने की प्रार्थना की है,

छैल छबीले हो श्याम लटकत-लटकत आईये।
कुंज महल की री बाट लाल रूप दरसाइये॥

प्रस्तुत पद की अंतिम पंक्तियों में श्रीराधा के नाभि सरोवर से श्रीश्यामसुन्दर को प्राप्त होने वाले मादक रसामृत को निगमों की सुदृढ़ सीमा से परे की वस्तु बतलाया गया है। श्रीश्यामसुंदर के प्रेम का अनुगमन करके श्रीराधा रस का पान करने वाली सखीजनों की उपासना, इस प्रकार, सहज रूप से वेदातीत अर्थात् त्रिगुणातीत सिद्ध होती है और त्रिगुण की मर्यादा में आवद्ध न होने के कारण ही नित्य विहार-रस को अमर्याद-रस कहा जाता है।

श्रीश्यामाश्याम श्रीवृन्दावन के लता भवन में कमल दल रचित शैया पर बिराजमान हैं। श्रीश्यामसुन्दर श्रीराधा के रूप-सौंदर्य का अपलक नेत्रों से पान कर रहे हैं। इस अद्‌भुत राधा-सौंदर्य का वर्णन अपनी कृपापात्र सखी से करती हुई श्रीहित सजनी कहती हैं:—

व्याख्या:—किशोरी श्रीराधा चतुरता की राशि हैं॥१॥

CC-0. Shri Vipin Kumar Col. Deoband. In Public Domain.

Digitized by Madhuban Trust, Delhi

नवीन नागर कुल (चतुर नायक समूह) के मुकुटमणि श्रीश्यामसुन्दर को इन्होंने मुख मोड़कर तिरछी चितवन मात्र से विवश बना दिया है ।।२।।

इनका रूप सुन्दर है और प्रत्येक अंग माधुर्य युक्त हैं। ये ब्रज गोरी भूषण धारण किये बिना ही भूषित (शृङ्गार युक्त) प्रतीत होती हैं।

(नंददासजी ने 'रूप मंजरी' में अनुपम रूप उसी को माना है जो बिना भूषणों के भूषित जैसा प्रतीत होता है,

बिनु भूषन भूषित अँग जोई।
रूप अनूप कहावँ सोई।।

सेवकजी ने भी श्रीराधा-स्वरूप का वर्णन करते हुये उनको सहज शृङ्गार एवं सहज शोभा से मंडित 'सहज-रूप' वृषभानुनन्दिनी बतलाया है,

सुभग सुन्दरी, सहज सिङ्गार।
सहज शोभा सर्वाङ्ग प्रति, सहज रूप वृषभानु नन्दिनी।) ।।३।।

ये प्रतिक्षण सुधंग नृत्य के विविध अङ्गों में कुशल हैं। (सदैव सुधंग नृत्य की विविध गतियों का प्रदर्शन कुशलता पूर्वक करती रहती हैं) और वेगवान शृङ्गार रस के समुद्र में झकोरी हुई हैं। (डुबाकर निकाली हुई हैं।) ।।४।।

उन्होंने (श्रीराधा ने) मोहन श्रीश्यामसुन्दर के भ्रमर के समान चंचल एवं रसिक मन को अपने कनक कमल के समान उरोजों की कोर पर रमा रखा है।

(व्यंजना यह है कि श्रीश्यामसुंदर का मधुकर के समान सहज चंचल एवं रसिक मन जो अनेक ब्रज गोपिकाओं के विविध प्रेम-सौंदर्य का आस्वाद करके तुष्ट हुआ था, उसकी चंचल रसिकता

CC-0. Shri Vipin Kumar Col. Deoband. In Public Domain.

Digitized by Madhuban Trust, Delhi

को नागरी श्रीराधा ने कंचुकी में से छिटकी हुई अपने उरोजों की अर्द्ध चन्द्राकार कोर के रसास्वादन में ही सीमित कर दिया है।) ॥५॥

उन्होंने अपने प्रियतम के खंजन पक्षी के समान चंचल युगल नेत्रों को एक साथ अपने विविध अंगों की छबि-डोरी से बाँध रखा है ॥६॥

श्रीराधा ने अपनी उदर रूपी अवनी में स्थित नाभि सरसी (बावली) में मानों कोई अनिर्वचनीय मादक मधु घोला हुआ है ॥७॥

सखी भावापन्न श्रीहित हरिवंश कहते हैं कि सुन्दरवर श्रीश्यामघन निगमों की सुदृढ़ सीमा को तोड़कर उस मधु का पान करते रहते हैं।

(श्रीराधा की नाभि में मादक मधु की स्थिति एवं त्रिभुवन मोहन श्रीश्यामसुंदर के द्वारा उसका पान रसिक उपासना का अत्यन्त रहस्यमय भाव है। यह रस नित्य-सिद्ध उपासकों के अनुभव का ही विषय बनता है और सर्वजन-संवेद्य नहीं है। स्वयं श्रीहिताचार्य ने इसीलिये इसको 'कछुक मादक मधु' अर्थात् अनिर्वचनीय मादक रस कहा है।) ॥८॥

[८३]

छाँड़िदै मानिनी मान मन धरिबौ ॥१॥

प्रणत सुन्दर सुघर प्रानबल्लभ नवल,
वचन आधीन सौं इतौ क्त करिबौ ॥२॥

CC-0. Shri Vipin Kumar Col. Deoband. In Public Domain.

Digitized by Madhuban Trust, Delhi

जपत हरि विवस तव नाम प्रति पद विमल,
मनसि तव ध्यान तैं निमिस नहिं टरिबौ ॥३॥

घटत पल-पल सुभग सरद की जामिनी,
भामिनी सरस अनुराग दिसि ढरिबौ ॥४॥

हौं जु कछु कहत निजु बात सुनि मान सखि,
सुमुखि, बिनु काज घन विरह दुख भरिबौ ॥५॥

मिलत हरिवंश हित कुञ्ज किसलय सयन,
करत कल केलि सुख सिन्धु में तरिबौ ॥६॥

भूमिकाः—यह मान का पद है । इसमें सहचरी श्रीराधा के प्रति श्रीश्यामसुन्दर की अद्‌भुत-प्रीति का बड़े मार्मिक शब्दों में वर्णन करती है और फिर रसोद्दीपन के लिये पल-पल में घटने वाली शरद-रात्रि की ओर उनका ध्यान आकृष्ट करने की चेष्टा करती है। मान-मोचन के अपने प्रत्येक प्रयास को विफल बनता देखकर वह अंत में अपनी स्वामिनी पर अपनपे का दबाब डालती है और तभी उसको सफलता मिलती है।

श्रीराधा को सम्बोधन करती हुई श्रीहित सहचरी कहती हैं:—

व्याख्याः—**हे मानिनी, तुम मान को मन में धारण करना छोड़ दो।** (बार-बार मान करना छोड़ दो।) ॥१॥

अपने विनम्र, सुन्दर, सुघर (गान, नृत्य, शृङ्गार-रचना आदि में निपुण) **एवं आज्ञाधीन नित्य नवल प्राणवल्लभ प्रियतम से तुम इतना मान क्यों करती हो ? ॥२॥**

(यदि तुमको उनकी तरफ से किसी प्रकार की उपेक्षा की भ्रांति हो गई हो तो मैं बताती हूँ कि) **श्रीहरि तुम्हारे विमल नाम**

CC-0. Shri Vipin Kumar Col. Deoband. In Public Domain.

Digitized by Madhuban Trust, Delhi

को प्रतिक्षण विवश भाव से (पूर्ण तल्लीनता पूर्वक) जपते रहते हैं और अपने मन में एक क्षण के लिये भी तुम्हारे ध्यान से अलग नहीं होते ।।३।।

(अब रसोद्दीपन करती हुई कहती हैं कि) यह शरद की रात्रि प्रतिक्षण घट रही है अतः हे भामिनी, यह अवसर रस युक्त अनुराग की ओर उन्मुख होने का है।

(सहचरी द्वारा सरस अनुराग की दिशा में ढरने का आग्रह श्रीराधा के मान की नीरसता को ध्वनित करता है।) ।।४।।

(इतना सब कहने पर भी अपनी स्वामिनी को अविचलित देखकर सहचरी अब अपनपे का दवाब डालती हुई कहती हैं कि) हे सखी, अब मैं जो कुछ कहती हूँ उस 'निज बात' (अपनपे की बात) को सुनो और मानो । हे सुन्दर मुख वाली, तुम बिना किसी कारण के सघन विरह-व्यथा को सहन कर रही हो। (क्योंकि तुम्हारे प्रियतम सर्वथा निरपराध हैं।) ।।५।।

(सखी भावापन्न) श्रीहित हरिवंश कहते हैं कि (इन हार्दिक समवेदनापूर्ण बचनों को सुनकर) श्रीराधा कुंज भवन में किशलय शैया पर अपने प्रियतम से मिलीं और दोनों ने सुन्दर केलि करके सुख-सिन्धु का संतरण किया ।।६।।

[८४]

आजु व देखियत है हो प्यारी रङ्ग भरी ।।१।।

मोपैं न दुरत चोरी, वृषभानु की किसोरी,

शिथिल कटि की डोरी, नंद के लालन सौं सुरत लरी ।।२।।

CC-0. Shri Vipin Kumar Col. Deoband. In Public Domain.

मुतियन लर टूटी, चिकुर - चन्द्रिका छूटी,
रहसि रसिक लूटी, गंडन पीक परी ॥३॥

नैंनन आलस बस, अधर बिंब निरस,
पुलक प्रेम परस, हित हरिवंश री राजत खरी ॥४॥

भूमिका:—इस पद में श्रीराधा की सुरतांत छवि का वर्णन हुआ है। श्रीहिताचार्य को यह छवि अत्यन्त प्रिय है यह हम पीछे देख चुके हैं अत: उनके इस ग्रन्थ की समाप्ति इस शोभा के वर्णन से होना ही उचित है।

श्रीराधा के अंग-अंग सुरत चिन्हों में मंडित हैं। फिर भी वे प्रियतम के साथ अपने समागम को सखियों से छिपाने की विफल चेष्टा कर रही हैं। यह देखकर उनकी नित्य निकटवर्तनी हितरूपा सहचरी उनसे कुछ विनोद करती हुई मुसकराकर कहती हैं:—

व्याख्या:—अहो प्यारी, आज तुम प्रेम रंग से भरी हुई दिखलाई दे रही हो ॥१॥

हे वृषभानु की किशोरी, तुम अपने प्रियतम से जो चोरी से (हम लोगों से छिपकर) मिली हो उसको तुम छिपाने की चेष्टा भले ही करो किन्तु मैं तो इसे नहीं छिपा सकती। शिथिल बनी हुई तुम्हारे लहँगे की डोरी स्पष्ट बता रही है कि तुमने नन्दलाल के साथ सुरत-युद्ध किया है ॥२॥

तुम्हारी मोतियों की लड़ टूटी हुई है, बालों की चन्द्रिका छूटी हुई है एवं तुम्हारे कपोलों पर पीक के दाग लगे हुए हैं। इनसे यह स्पष्ट हो जाता है कि आज एकान्त में तुम्हारे रसिक प्रियतम ने तुम्हारे रस-रूप की लूट की है ॥३॥

Digitized by Madhuban Trust, Delhi

सखी भावापन्न श्रीहित हरिवंश कहते हैं कि तुम्हारे नेत्र आलस्ययुक्त हैं, अधर-बिंब रस-शून्य हैं और तुम्हारे चित्त में प्रेम के स्पर्श से श्रीअंग पुलकित हो रहा है और इन सबके कारण हे प्यारी, तुम्हारी छबि में अत्यंत वृद्धि हो रही है ॥४॥

श्रीमद् श्रीहित हरिवंशचन्द्र गोस्वामी विरचित
श्रीहित चौरासी व्याख्या समाप्ता।

CC-0. Shri Vipin Kumar Col. Deoband. In Public Domain.

Digitized by Madhuban Trust, Delhi

फल स्तुति

भव जलनिधि कों नाव काम-पावक कों पानी ।
प्रेमभक्ति कौ मूल मोद मंगल सुख दानी ।।
निगम सार सिद्धान्त संत विश्राम मधुर वर ।
रसिकन कौ रस सार सकल अक्षर रस कौ घर ।।
चौरासी हरिवंश कृत पढ़ैं, सुनै निशि भोर ।
छुटि चौरासी भ्रमन तें, निरखै जुगल किसोर ।।

व्याख्या: – हित चौरासी भवसागर के सन्तरण के लिये नौका के समान है और मनुष्य के अन्दर सहज रूप से विद्यमान कामाग्नि के लिये शीतल जल के समान है ।

(तात्पर्य यह है कि हित चौरासी में वर्णित श्रीश्यामाश्याम की अद्भुत काम क्रीड़ा में यदि मन प्रवेश पा जाय तो लौकिक काम अनायास शांत हो जाता है ।)

हित चौरासी प्रेमाभक्ति का मूलस्रोत है और परम मोदमय मांगलिक सुख प्रदान करने वाली है ।

CC-0. Shri Vipin Kumar Col. Deoband. In Public Domain.

Digitized by Madhuban Trust, Delhi

नियमों का सार रूप सिद्धान्त इसमें वर्णित हुआ है और यह सन्तों का परम मधुर विश्राम स्थल है।

इसके प्रत्येक अक्षर में रसिकजनों द्वारा आस्वादित रससार भरा हुआ है।

श्रीहित हरिवंश द्वारा रचित ऐसी हित चौरासी का यदि कोई प्रातः सायं पठन-श्रवण करे तो वह चौरासी भ्रमणाओं से छूटकर युगलकिशोर श्रीश्यामाश्याम के दर्शन पा जाता है।

निरखै जुगल किसोर भोर अरु रैन न जानै।
पियै रूप रस मत्त भयौ कछु मनहि न आनै॥
प्रेम लक्षना भक्ति होय हिय आनन्द कारी।
अरु वृन्दावन वास सखी सुख कौ अधिकारी॥
कुञ्ज महल की टहल सुख दम्पति-सम्पति पाइहै।
(जैश्री)रूपलालहित प्रीति सौं जो चौरासी गाइहै॥

व्याख्या:– श्रीहित चौरासी के सतत अनुशीलन के फल-स्वरूप उपासक युगलकिशोर श्रीश्यामाश्याम के दर्शन प्राप्त कर लेता है। (और उसका मन रसानुभव में डूब जाने के कारण) उसको प्रातः सायं की प्रतीति नहीं होती।

(समय का निरन्तर परिवर्तन उसकी रसानुभूति को बाधित नहीं करता।)

उसका मन मत्त बनकर अहर्निश श्रीश्यामाश्याम के रूप-रस का पान करता रहता है और उसमें अन्य किसी बात के लिए अवकाश नहीं रहता।

CC-0. Shri Vipin Kumar Col. Deoband. In Public Domain.

Digitized by Madhuban Trust, Delhi

उसके हृदय में परमानन्दमयी प्रेमलक्षणा भक्ति का उदय हो जाता है। वह श्रीवृन्दावन में अविचल रूप से स्थित हो जाता है एवं सखियों के अनुपम सुख का अधिकारी बन जाता है।

श्रीहित रूपलालजी कहते हैं कि जो प्रीति पूर्वक श्रीहित चौरासी का गान करेगा उसको कुंज महल की टहल का सुख प्राप्त होकर श्रीयुगल रूपी सम्पत्ति प्राप्त होगी।

निगम अगोचर बात कहा कहों अति ही अनौखी।
उभय मीत की प्रीति रीति चोखी ते चोखी॥
वृन्दावन छबि देख - देख हुलसत हुलसावत।
जल तरंग वत गौर श्याम बिलसत बिलसावत॥
ललितादिक निज सहचरी निरख-निरख बलि जात नित।
चौरासी हित पद कहे चतुरन कौ यह परम वित॥

—श्रीवृन्दावनदासजी

व्याख्याः—मैं क्या बतलाऊँ, हित चौरासी में निगमों को भी अगोचर परम अद्भुत बात कही गई है। इसमें दो प्रेमियों की शुद्धातिशुद्ध प्रीति-परिपाटी का वर्णन है।

इसमें श्रीहिताचार्य श्रीवृन्दावन की छबि देखकर स्वयं उल्लसित होते हैं और श्रीश्यामाश्याम को उल्लास युक्त बनाते हैं। (श्रीव्यासजी ने अपने एक पद में कहा है कि श्रीहित हरिवंश जब वृन्दावन की प्रशंसा करते हैं तो गोरी श्रीराधा उसको सुनकर प्रसन्नता पूर्वक मुसकाती हैं—वृन्दावन हरिवंश प्रसंसत सुनि गोरी मुसकात।) इसमें वे (श्रीहिताचार्य) जल और तरंग के समान ओत-प्रोत विलास करने वाले श्रीश्यामाश्याम के लीला-विलास में सहायक बनते हैं।

CC-0. Shri Vipin Kumar Col. Deoband. In Public Domain.

इस प्रीति-रीति एवं लीला-विलास को देखकर ललितादिक सहचरीगण उस पर बलिहार होती रहती हैं। श्रीहिताचार्य द्वारा हित चौरासी में कहे गये पद चतुरजनों (रसमर्मज्ञों) के परम धन हैं।

जय श्रीचतुरासी रस रासी।
हित हरिवंश चन्द्र तैं प्रगटी दम्पति प्रेम प्रकासी।।
ललित केलि की सरिता मानौ उमड़ि चली अनयासी।
रसिक उपासक रुचि सौं पीवत जीवत श्रीबन बासी।।
वक्ता-श्रोता कौं अपनावै नवल निकुंज विलासी।
ताही छिन परिकर तन दैकै करत किसोरी दासी।।
—श्रीकिशोरी अलि

Digitized by Madhuban Trust, Delhi
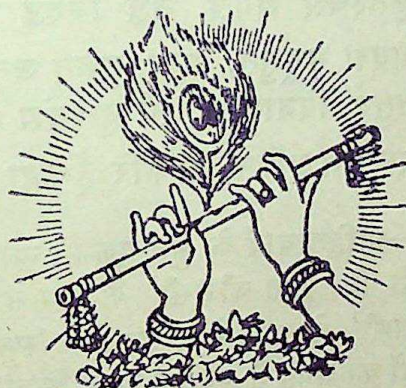
स्फुट वाणी

[व्याख्या सहित]

[१] सवैया

द्वादस चन्द्र, कृतस्थल मंगल, बुद्ध विरुद्ध, सुर-गुरु बंक ।
यद्दि बसम्म भवन्न भृगूसुत, मन्द सुकेतु जनम्म के अंक ।।
अष्टम राहु, चतुर्थ दिवामणि, तौ हरिवंश करत्त न संक ।
जो पै कृष्ण-चरण मन अर्पित, तौ करि हैं कहा नवग्रह रंक ।।

भूमिकाः—श्रीहिताचार्य के कुल एक-सौ ग्यारह छन्द प्राप्त हैं जिनमें ये चौरासी पद 'हित चौरासी' के नाम से संग्रहीत हैं और शेष छन्द 'स्फुट वाणी' के नाम से प्रसिद्ध हैं। 'स्फुट वाणी' वस्तुतः उनके फुटकल छंदों का संग्रह है क्योंकि इसमें सिद्धांत और रस दोनों से सम्बन्धित छंद मिलते हैं।

श्रीहिताचार्य के पिता श्रीव्यास मिश्र राज्य ज्योतिषी थे। सम्भव है कि श्रीहितप्रभु को भी आरम्भ में संस्कृत शिक्षा के साथ

CC-0. Shri Vipin Kumar Col. Deoband. In Public Domain.

ज्योतिष शास्त्र का ज्ञान कराया गया हो। किन्तु श्रीहिताचार्य अवतारी पुरुष थे और एक त्रिगुणातीत उपासना की स्थापना के लिये भूतल पर पधारे थे। उन्होंने बाल्यकाल में ही यह समझ लिया था कि ज्योतिष शास्त्र में श्रद्धा रखने से सकामता एवं वहमों की वृद्धि होती है जो निष्काम भक्ति मार्ग के लिये सबसे बड़ी बाधायें हैं। अतः उन्होंने दो छंदों की रचना करके अच्छे और बुरे दोनों प्रकार के ग्रहों में श्रद्धा रखना रसिक भक्त के लिये अनावश्यक और हानिकर बतलाया है। उपर्युक्त सवैये में अशुभ ग्रहों को एकत्रित करके श्रीकृष्ण चरणों में अर्पित मन वाले भक्त के लिए उनकी प्रभाव हीनता एवं रंकता व्यक्त की गई है।

व्याख्या:—श्रीहित हरिवंश महाप्रभु कहते हैं कि जन्मकुंडली में चाहे बारहवें चन्द्रमा, चौथे मंगल, विरुद्ध बुद्ध, वृहस्पति वक्री, दशवें शुक्र, केतु और शनि लग्न में, आठवें राहु और चौथे सूर्य पड़े हों तो भी शंका नहीं करनी चाहिये। क्योंकि जब श्रीकृष्ण के चरणों में मन अर्पित हो चुका तब ये नवग्रह रंक क्या करेंगे!

[२] सवैया

भानु दसम्म, जनम्म निसापति, मंगल-बुद्ध सिवस्थल लीके।
जो गुरु होंय धरम्म भवन्न के तौ भृगुनंद सुमंद नवीके॥
तीसरो केतु समेत बिधुग्रस तौ हरिवंश मन-क्रम फीके।
गोविन्द छाँड़ि भ्रमंत दसों दिस तौ करिहैं का नवग्रह नीके॥

भूमिका:—इस सवैये में सम्पूर्ण शुभ माने जाने वाले ग्रहों का उल्लेख करके भक्ति शून्य व्यक्ति के लिए उनकी व्यर्थता प्रतिपादित की गई है।

व्याख्या:—दसवें सूर्य, जन्म के चन्द्रमा, मंगल और बुद्ध ग्यारहवें, नवम वृहस्पति और शुक्र नवम अच्छे स्थान में अर्थात्

Digitized by Madhuban Trust, Delhi

तीसरे-छटवें, ग्यारहवें शनिश्चर तथा राहु और केतु तीसरे स्थान में कुंडली में पड़े हों तो भी जो व्यक्ति गोविन्द को छोड़ के दसों दिशाओं में भ्रमता डोलता है। उसको उत्तम ग्रह कुछ भी भलाई नहीं कर सकते।

[३] छप्पय

नाजानों छिन अंत कवन बुधि घटहिं प्रकासित।
छुटि चेतन जु अचेत तेऊ मुनि भये बिस - बासित॥
पारासर सुर इन्द्र कलप कामिनी मन फंद्या।
परिव देह दुख द्वन्द कौन क्रम - काल निकंद्या॥
यह डरहि डरपि हरिवंश हित जिनव भ्रमहि गुण सलिल पर।
जिहि नामन मंगल लोक तिहुँ सुहरि पद भजु न विलंब कर॥

भूमिकाः—इस छप्पय में मन की सहज चंचलता से सदा सावधान रहने का उपदेश दिया गया है।

व्याख्याः—यह नहीं जाना जा सकता कि क्षण के समाप्त होते होते कौन सी बुद्धि मन में प्रकाशित हो जायेगी। क्योंकि जो मुनिगण साधना करते-करते अचेतन जैसे बन गये वे भी अवसर आने पर विष व्याप्त हो गये (मोह ग्रसित हो गये)। पाराशर एवं इन्द्रदेव के समान व्यक्तियों के मन को कामिनियों ने अपने फंदे में फंसा लिया। शरीर के पीछे दुख-द्वन्द्व लगे हुये हैं और काल के क्रम का छेदन कौन कर सका है ? श्रीहित हरिवंश कहते हैं कि इस भय से डरकर तू त्रिगुण रूपी जल पर भ्रमण करना छोड़ दे और जिनके नाम में तीनों लोकों का मंगल करने की सामर्थ्य है उन श्रीहरि के चरणों का अविलम्ब भजन कर।

CC-0. Shri Vipin Kumar Col. Deoband. In Public Domain.

Digitized by Madhuban Trust, Delhi

[४] सवैया

तू बालक नहिं, भरचौ सयानप काहे कृष्ण भजत नहिं नीके।
अतिव सुमिष्ट तजिव सुरभिन पय मन बंधत तंदुल जल फीके॥
(जैश्री) हित हरिवंश नरकगति,
दुरभर यमद्वारे कटियत नक छींके।
भव अज कठिन, मुनीजन दुर्लभ,
पावत क्यों जु मनुज तन भीके॥

भूमिका:—पिछले पद में मन की अविश्वसनीयता एवं संसार की नश्वरता पर प्रकाश डालकर अब इस सुदुर्लभ मनुष्य शरीर से श्रीकृष्ण का प्रेम पूर्वक भजन करने का उपदेश देते हैं।

व्याख्या:—तू बालक नहीं है और चतुरता से भरा हुआ है तो श्रीकृष्ण को भली प्रकार क्यों नहीं भजता? तू गाय के सुमधुर दूध को छोड़कर चावल के फीके पानी में अपनें मन को बाँध रहा है! श्रीहित हरिवंश कहते हैं कि नर्क की गति अत्यन्त कठिन है क्योंकि यम के द्वार पर छींकनें पर नाक काटी जाती है (थोड़े से अपराध में कड़ा दंड सहन करना पड़ता है।) तू यह तो विचार कर कि शिवजी एवं ब्रह्मा को अप्राप्य तथा मुनिजनों को कठिनाई से मिलने वाला यह मनुष्य शरीर तू भीख में कैसे पाजायगा?

(इसको प्राप्त करने का कोई साधन किये बिना यह तुझको कैसे मिल जायगा?)

[५] कुण्डलिया

चकई प्राण जु घट रहैं पिय विछुरंत निकज्ज।
सर अन्तर अरु काल निशि तरफ तेज घन गज्ज॥

CC-0. Shri Vipin Kumar Col. Deoband. In Public Domain.

Digitized by Madhuban Trust, Delhi

तरफ तेज घन गज्ज लज्ज तुहि वदन न आवै।
जल विहून करि नैन भोर किहिं भाय बतावै॥
(जैश्री) हित हरिवंश विचारि बाद अस कौन जु बकई।
सारस यह संदेह प्राण घट रहैं जु चकई॥

भूमिकाः—श्रृङ्गार रस दो प्रकार का माना जाता है—संयोग श्रृङ्गार और विप्रयोग श्रृङ्गार। भक्ति रस के क्षेत्र में कुछ लोग विरह को अधिक महत्व देते हैं और इसके बिना श्रृङ्गार रस की पुष्टि असम्भव मानते हैं। ये लोग गोपियों को परकीया नायिका मानकर श्रीकृष्ण से उनके वियोग का गान करके सुखित होते हैं।

इनके विपरीत कुछ लोग संभोग में ही श्रृङ्गार रस की पूर्णता मानते हैं और श्रीराधा एवं अन्य गोपीजनों को स्वकीया नायिका मानकर उनके श्रीकृष्ण के साथ मिलन का गान करते हैं।

वस्तुतः श्रृङ्गार रस के परिपाक के लिये संयोग और वियोग दोनों ही अत्यन्त आवश्यक हैं और इस रस में दोनों का उन्मीलन हुए बिना यह अपूर्ण रहता है।

श्रीहिताचार्य ने इन दो कुण्डलियों में चकई और सारस के उदाहरण से संयोग और वियोग की अपने आप में अपूर्णता सिद्ध की है।

हितसिद्धांत में श्रीश्यामाश्याम की नित्य संयुक्त स्थिति मानी जाती है। किन्तु यह दोनों अपने नित्य संयोग का उपभोग विरह की सम्पूर्ण व्याकुलता एवं तृषा लेकर करते हैं और इस प्रकार उनको संयोग और विरह का एक काल में ही अनुभव होता रहता है। श्रीध्रुवदास ने कहा है कि यह सब लोग जानते हैं कि प्रेमियों के बिछुड़ने पर दोनों को दुख होता है और मिलने पर सुख होता है। किन्तु इसमें दो रस हो जाते हैं और इसको एक रस प्रेम नहीं कहा

CC-0. Shri Vipin Kumar Col. Deoband. In Public Domain.

Digitized by Madhuban Trust, Delhi

जा सकता । अखण्ड प्रेम की स्थिति में प्रेमियों के तन-मन कभी वियुक्त नहीं होते और उनकी परस्पर मिलने की चाह प्रतिक्षण बढ़ती रहती है । वे कभी अपने को संयोग में नहीं मानते और एक दूसरे की ओर नेत्र भर-भर कर देखते रहते हैं । ऐसा ध्रुव प्रेम श्रीवृन्दावन को छोड़कर अन्यत्र कहीं नहीं है । यहाँ अविचल विहार करने वाले श्रीश्यामाश्याम के मिलन में कभी एक क्षण का भी अन्तर नहीं पड़ता,

जब बिछुरत तब होत दुख मिलतहि हियो सिराइ ।
याही में रस द्वै भये प्रेम कह्यो क्यों जाइ ॥
तन मन कै बिछुरै नहीं चाह बढ़ै दिन रैन ।
कबहुं संजोग न मानहीं देखत भर भर नैंन ॥
ऐसो प्रेम न कहूँ ध्रुव है वृन्दावन माँहि ।
तिन बिच अन्तर निमिष कौ होत जु कबहूँ नाँहि ॥

(प्रीति चोवनी लीला)

इसीलिये इस सिद्धान्त में श्रीराधा को स्वकीया और परकीया दोनों से विलक्षण माना जाता है ।

व्याख्या:—सारस चकई के प्रेम की भर्त्सना करता हुआ कहता है कि हे चकई, प्रियतम के बिछुड़ने पर निरर्थक बने हुये तेरे प्राण शरीर में कैसे रहे आते हैं ? बीच में सरोवर का अन्तर, काल की सी रात्रि, बिजली का चमकना और मेघ का गरजना सहने के बाद सवेरे आँसू पोंछकर तू अपने प्रियतम से मिलने पर किस प्रेम का प्रदर्शन करती है ? क्या तुझे अपनें इस व्यवहार पर लज्जा नहीं आती ? श्रीहित हरिवंश कहते हैं कि यह सब विचार कर कौन व्यर्थ में बकवास करे । नित्य संयोगी सारस के मन में तो यह संदेह है कि वियुक्त होने पर चकई के प्राण उसके शरीर में रहते ही कैसे हैं ?

CC-0. Shri Vipin Kumar Col. Deoband. In Public Domain.

Digitized by Madhuban Trust, Delhi

[६]

सारस सर - बिछुरंत कौ जो पल सहय सरीर।
अगनि - अनंग जु तिय भखै तौ जानैं पर - पीर।।
तौ जानैं पर - पीर धीर धरि सकहि वज्र तन।
मरत सारसहि फूट पुनि न परचौ जु लहत मन।।
(जैश्री) हित हरिवंश विचार प्रेम विरहा बिन वा रस।
निकट कंत नित रहत मरम कह जानैं सारस।।

व्याख्याः—(सारस के आक्षेप को सुनकर चकई अपने मन में विचार करती है कि) सारस का शरीर यदि सरोवर के अन्तर को एक क्षण के लिए भी सहन कर ले और उसकी पत्नी लक्ष्मणा को यदि काम की अग्नि का कठिन अनुभव करना पड़े तभी ये पराई पीड़ा को जान सकता है। इस स्थिति में कोई बज्र के समान कठोर शरीर वाला ही धैर्य धारण कर सकता है। सारस तो बिछुड़ते ही मर जाता है और विरह का अनुभव प्राप्त करने का अवसर ही उसको नहीं मिलता। श्रीहित हरिवंश कहते हैं कि प्रेम-विरह के बिना शृङ्गार रस की स्थिति विचारणीय (संदेहास्पद) बन जाती है। अपने प्रिय के नित्य निकट रहने वाला सारस इस मर्म को क्या जानै।

[७] छप्पय

तैं भाजन कृत जटित विमल चन्दन कृत इन्धन।
अमृत पूरि तिहि मध्य करत सरषप - खल रिंधन।।
अद्भुत धर पर करत कष्ट कंचन हल वाहत।
बार करत पांवार मन्द बोबन विष चाहत।।

CC-0. Shri Vipin Kumar Col. Deoband. In Public Domain.

(जैश्री) हितहरिवंश विचारि कै मनुज देह गुरु-चरण गहि ।
सकहि तौ सब परपंच तजि कृष्ण-कृष्ण-गोविन्द कहि ।।

भूमिकाः—इस छप्पय में श्रीहिताचार्य ने दो रूपकों के द्वारा मनुष्य की दुर्लभ देह का दुरुपयोग स्पष्ट किया है और साथ ही गुरु-चरणाश्रित होकर यथाशक्ति प्रपंच त्याग पूर्वक श्रीकृष्ण नाम लेने का उपदेश दिया है।

व्याख्या:—हे मन्दमति, तू रत्न-जटित निर्मल पात्र में अमृत भरकर चन्दन के ईंधन की सहायता से उसमें सरसों की खली राँध रहा है ! फिर अद्‌भुत पृथ्वी पर कष्ट पूर्वक कंचन का हल चलाता है और उस खेत में गूंगे की बाड़ लगाकर बिष बोना चाहता है ! श्रीहित हरिवंश कहते हैं यह विचार कर कि तुझको तुर्लभ मनुष्य देह मिला है तू गुरु चरणों का आश्रय ग्रहण कर और यदि तुझसे बन जाय तो सब प्रपंच छोड़कर कृष्ण-कृष्ण-गोविन्द कह।

[८] सवैया

तातैं भैया मेरी सौं कृष्ण-गुण संचु ।।

कुत्सित वाद विकारहिं परधन सुन सिख मंद परतिय बंचु ।
मणिगण-पुञ्ज ब्रजपति छाँड़त हित हरिवंश कर गहि कंचु ।।
पाये जान जगत में सब जन कपटी कुटिल कलियुग-टंचु ।
इहि-परलोक सकल सुख पावत मेरी सौं कृष्ण-गुण संचु ।।

भूमिकाः—इस पद में श्रीहिताचार्य ने संसार में फँसे हुए जीव को अपनी शपथ दिलाकर उससे श्रीकृष्ण के गुणानुवाद गाने का आग्रह किया है।

Digitized by Madhuban Trust, Delhi

व्याख्या:—अरे मूर्ख, मेरी शिक्षा ध्यान देकर सुन और घृणित वाद-विवाद, परधन और पर स्त्री से बचने की चेष्टा कर। श्रीहित हरिवंश कहते हैं कि मणियों के पुञ्ज के सदृश व्रजपति श्रीकृष्ण को छोड़कर तू काँच का संग्रह कर रहा है ! तुझे संसार में जो लोग मिले हैं ये सब कपटी, कुटिल और कलियुग से प्रभावित हैं। इसलिये हे भाई, तुझे मेरी शपथ है तू इस लोक और परलोक में सम्पूर्ण सुखों को प्राप्त कराने वाले श्रीकृष्ण के गुणों का संग्रह कर।

[९] अरिल्ल

मानुष कौ तन पाय भजो ब्रजनाथ कों।
दर्बी लैकै मूढ़ जरावत हाथ कों॥
(जै श्री) हित हरिवंश प्रपंच विषय रस मोहके।
(हरि हाँ) बिन कंचन क्यौं चलैं पचीसा लोहके॥

भूमिका:—इस छंद में श्रीहिताचार्य ने दुर्लभ मनुष्य शरीर को विषय भोग में न लगाकर इसका उपयोग श्रीब्रजनाथ के भजन में करने का उपदेश दिया है।

व्याख्या:—मनुष्य का शरीर पाकर ब्रजनाथ का भजन करो। अरे मूढ़, तू कलछी के समान मनुष्य शरीर पाकर भी संसार की अग्नि में अपने हाथ को जला रहा है। श्रीहित हरिवंश कहते हैं कि संसार के सम्पूर्ण विषयों के रस मोह जनित हैं। ये सब लोहे के सिक्के के समान हैं और तू यह बता कि भगवद् प्रेम रूपी सुवर्ण के बिना ये खोटे सिक्के कैसे चलेंगे ?

CC-0. Shri Vipin Kumar Col. Deoband. In Public Domain.

Digitized by Madhuban Trust, Delhi

[१०]

तू रति रंग भरी देखियत है री राधे,
रहसि रमी मोहन सौंव रैन ।।१।।

गति अति सिथिल, प्रगट पलटे पट,
गौर अंग पर राजत अैन ।।२।।

जलज कपोल, ललित लटकत लट,
भृकुटि कुटिल ज्यौं धनुष धृत मैन ।।३।।

सुन्दरि रहव, कँहव कंचुकी, कत कनक,
कलस कुच बिच नख दैन ।।४।।

अधर बिंब दलमलित, आरसयुत अरु,
आनन्द सूचत सखि नैन ।।५।।

(जै श्री) हित हरिवंश दुरत नहिं नागरि,
नागर मधुप मथित सुख सैन ।।६।।

भूमिकाः—इस पद में श्रीराधा की सुरतांत छवि का वर्णन है । हित चौरासी के इस प्रकार के पदों की भांति इस पद में भी श्रीराधा प्रियतम के साथ अपने मिलन को सखियों से छिपाने की चेष्टा करती हैं । चतुर सखियाँ उनके अंग में प्रकट रति-चिन्हों के प्रमाण देकर एक अद्भुत आनन्द-विनोद की सृष्टि करती हुई अपनी स्वामिनी को सुखित करके स्वयं सुख लाभ करती हैं ।

अपने प्रियतम के साथ सम्पूर्ण रात्रि क्रीड़ा-विहार में व्यतीत करने के बाद निभृत निकुंज मन्दिर के प्रांगण में अत्यन्त शिथिल गति से पधारती हुई श्रीराधा को सम्बोधित करके हित सजनी कहती हैं,

CC-0. Shri Vipin Kumar Col. Deoband. In Public Domain.

Digitized by Madhuban Trust, Delhi

व्याख्या:—हे श्रीराधे, आज तुम प्रेम-रंग भरी दिखलाई दे रही हो, मालुम होता है कि तुमने अपने मोहन प्रियतम के साथ रात्रि में एकान्त रमण किया है ।।१।।

तुम्हारी गति अत्यन्त शिथिल हो रही है। तुमने अपने वस्त्र (नीलाम्बर) के बदले में प्रियतम का वस्त्र (पीताम्बर) प्रकट रूप से ओढ़ रखा है जो तुम्हारे गौर अंग पर अत्यन्त शोभायमान हो रहा है ।।२।।

तुम्हारे कमल के समान गुलाबी कपोलों पर सुन्दर लटें लटक रही हैं और तुम्हारी बंक भृकुटि कामदेव के धनुष के समान जान पड़ती हैं ।।३।।

हे सुन्दरि, तनिक ठहरो और यह बताओ कि तुम्हारी कंचुकी कहाँ है और तुम्हारे सुवर्ण-कलश के समान कुचों पर नख-चिन्ह क्यों लग रहे हैं ? ।।४।।

तुम्हारे बिंब के समान लाल अधर दलमलित हो रहे हैं और हे सखी, तुम्हारे नेत्र आलस्यपूर्ण होते हुए भी आनन्द का सूचन कर रहे हैं ।।५।।

सखी भावापन्न श्रीहित हरिवंश कहते हैं कि हे नागरि, चतुर मधुप तुम्हारे प्रियतम ने सुख शैया पर बल पूर्वक तुम्हारा रस ग्रहण किया है, यह बात छिपाने से भी नहीं छिप रही है ।।६।।

[११]

आनँद आजु नन्द के द्वार ।

दास अनन्य भजन-रस कारन प्रगटे लाल मनोहर ग्वार ।।१।।

चंदन सकल धेनु तन मंडित कुसुम-दाम सोभित आगार ।।२।।

CC-0. Shri Vipin Kumar Col. Deoband. In Public Domain.

Digitized by Madhuban Trust, Delhi

पूरन कुम्भ बने तोरन पर बीच रुचिर पीपर की डार ॥३॥
युवति यूथ मिल गोप विराजत बाजत पणव मृदङ्ग सुतार ॥४॥
(जै श्री) हित हरिवंश अजिर वर वीथिनु-
दधि मधि दूध हरद के खार ॥५॥

भूमिका:—श्रीहिताचार्य ने इस पद में श्रीकृष्ण जन्म के आनंद का वर्णन किया है एवं उनके प्रकट होने के प्रयोजन को भी स्पष्ट कर दिया है। वे कहते हैं:—

व्याख्या:—आज नंद के द्वार पर आनन्द छाया हुआ है। वहाँ अनन्य दासों के भजन-रस की निष्पत्ति के लिए मनोहर ग्वाल पुत्र प्रकट हुये हैं ॥१॥

नन्दगाँव की सब गायों के शरीर चन्दन से मण्डित किये गये हैं और नन्द-भवन फूलों की बन्दनवार से सुशोभित है ॥२॥

भवन के द्वार पर जल पूर्ण कलश शोभायमान हैं जिनके बीच में पीपल की सुन्दर डाल लगी हुई है ॥३॥

युवतियों के यूथ सहित गोपगण वहाँ विराजमान हैं एवं पणव और मृदंग में सुन्दर ताल बज रही है ॥४॥

श्रीहित हरिवंश कहते हैं कि भवन के आँगन में एवं गाँव की गलियों में हलदी मिश्रित दूध दही के बहने से गढ़े भर गये हैं ॥५॥

[१२]

मोहनलाल के रंग राँची।
मेरे ख्याल परौ जिन कोऊ बात दसों दिस माँची ॥

CC-0. Shri Vipin Kumar Col. Deoband. In Public Domain.

Digitized by Madhuban Trust, Delhi

कंत अनंत करौ जो कोऊ बात कहौं सुन साँची।
यह जिय जाहु भलै सिर ऊपर हौंव प्रकट ह्वै नाँची।।
जाग्रत - सयन रहत उर ऊपर मणि कंचन ज्यौं पाँची।
(जैश्री)हितहरिवंश डरों काके डर हौं नाहिन मति काँची।।

भूमिका:—इस पद में श्रीहिताचार्य ने श्रीश्यामसुन्दर के चरणों में अपनी सुदृढ़ निष्ठा को अभिव्यक्ति दी है। श्रीराधा के चरणों में उनकी प्रधान रति प्रसिद्ध है किन्तु इसके साथ वे युगल उपासक भी हैं और जहाँ तक निष्ठा का प्रश्न है वह उनकी दोनों में समान है। सेवकजी ने, इसीलिये श्रीहिताचार्य की भजन-रीति का परिचय देते हुए कहा है कि इस रीति में श्यामाश्याम का एक साथ गान किया जाता है। ये दोनों एक प्राण हैं और एक क्षण को भी वियुक्त नहीं होते। राधा के संग बिना न तो श्याम का भजन करना चाहिये और न श्याम-नाम के बिना राधा-नाम लेना चाहिये।

श्री हरिवंश सुरीति सुनाऊं।
श्यामाश्याम एक सँग गाऊँ।।
छिन इक कबहुँ न अन्तर होई।
प्रान सु एक देह हैं दोई।।
राधा संग बिना नँहि श्याम।
श्याम बिना नँहि राधा नाम।।

श्रीहिताचार्य के सम्पूर्ण ब्रज भाषा पदों में यही एक ऐसा पद है जिसमें उन्होंने अपने लिए स्त्रीलिंग की क्रियाओं का प्रयोग किया है। इससे यह व्यंजित होता है कि वे मोहनलाल के प्रति अपनी निष्ठा का ज्ञापन अपने सहज श्रीराधा किंकरी रूप से कर रहे हैं। सब किंकरियां श्रीश्यामसुन्दर से श्रीराधा प्राणनाथ के रूप में प्रेम करती हैं और इस प्रकार वे उनके प्राणों के भी प्राण हैं।

CC-0. Shri Vipin Kumar Col. Deoband. In Public Domain.

Digitized by Madhuban Trust, Delhi

व्याख्या:—मैं मोहनलाल के रंग में रंगी हुई हूँ ।।१।।

कोई भी मेरी चिन्ता न करो क्योंकि यह बात अब सारे संसार में फैल चुकी है ।।२।।

मैं सत्य कहती हूँ कि चाहे कोई अनन्त पति कर ले किन्तु मेरे तो प्राण भी चाहे निकल जाँय (मैं दूसरा पति करने को तैयार नहीं हूँ) मैं तो अब प्रकट रूप से संसार के सिर पर नाँच रही हूँ ।।३।।

सोते जागते सब समय वही मोहनलाल मेरे हृदय में ऐसे रहते हैं जैसे कंचन में नीलमणि जड़ दी हो ।।४।।

श्रीहित हरिवंश कहते हैं कि मुझे किसी का डर नहीं है क्योंकि मैं कच्ची बुद्धि की नहीं हूँ ।।५।।

[१३]

मैं जु मोहन सुन्यौ वेणु गोपाल कौ ।।१।।
व्योम मुनि यान सुर - नारि विथकित भईं,
कहत नहिं बनत कछु भेद यति-ताल कौ ।।२।।
स्रवन कुण्डल छुरित, रुरत कुन्तल ललित,
रुचिर कस्तूरि चन्दन तिलक भाल कौ ।।३।।
चंद गति मंद भई, निरखि छबि काम गई,
देखि हरिवंश हित वेष नन्दलाल कौ ।।४।।

भूमिका:—इस पद में श्रीहिताचार्य ने अपने व्यक्तिगत अनुभव के आधार पर वंशीनाद के प्रभाव एवं वंशीवादक श्रीनन्दलाल के रूप-सौंदर्य का मार्मिक वर्णन किया है। वे कहते हैं:—

CC-0. Shri Vipin Kumar Col. Deoband. In Public Domain.

Digitized by Madhuban Trust, Delhi

व्याख्या:—मैंने मदनगोपाल के मोहक वेणुनाद को सुना है ।।१।।

इस अद्भुत नाद को सुनकर आकाश में स्थित मुनियानों (विमानों) में बैठी हुई देवताओं की स्त्रियाँ थकित हो गईं। अतः इस नाद की यति और ताल का भेद कहना सम्भव नहीं है ।।२।।

(वेणुवादक श्रीनंदलाल के) श्रवण कुण्डलों से भूषित हैं, उनकी अलकें छूट रही हैं, और कस्तूरी मिश्रित चंदन का सुन्दर तिलक उनके भाल पर सुशोभित है ।।३।।

श्रीहित हरिवंश कहते हैं कि नन्दलाल का यह वेष देखकर चन्द्र की गति मन्द हो गई है और कामदेव की छवि क्षीण हो गई है।

(चन्द्र मन का देवता है, नंदलाल के दर्शन से उसकी गति मन्द होने का अर्थ यह है कि मन निश्चल हो गया है । कामदेव मनोज है, उसकी छवि क्षीण हो जाने का तात्पर्य यह है कि नन्दलाल के दर्शन से मन में काम के प्रति आकर्षण नष्ट हो गया है।) ।।४।।

[१४]

आज जू ग्वाल गोपाल सों खेलि री ।।१।।

छाँड़ि अति मान, बन चपल चलि भामिनी,

तरु तमाल सों अरुझ कनक की बेलि री ।।२।।

सुभट सुन्दर ललन, ताप परबल दमन,

तू व ललना रसिक काम की केलि री ।।३।।

CC-0. Shri Vipin Kumar Col. Deoband. In Public Domain.

Digitized by Madhuban Trust, Delhi

वेणु कानन कुनित, स्रवन सुन्दरि सुनत,
मुक्ति सम सकल सुख पाय पग पेलि री ।।४।।

विरह-व्याकुल नाथ, गान गुन युवति तब,
निरखि मुख काम कौ कदन अवहेलि री ।।५।।

सुनत हरिवंश हित, मिलत राधारवन,
कंठ भुज मेलि, सुख-सिंधु में झेलि री ।।६।।

भूमिका:—यह मान का पद है । मानवती श्रीराधा को सम्वोधन करके श्रीहित सजनी कहती हैं,

व्याख्या:—आज तुम गोपकुमार मदनगोपाल के साथ क्रीड़ा करो ।।१।।

हे भामिनी, अपना अत्यन्त मान छोड़कर शीघ्र बन में चलो और वहाँ तरु तमाल के समान श्याम वर्ण अपनें प्रियतम से कनक-लता के समान गाढ़ आलिगन में आवद्ध हो जाओ ।।२।।

सुन्दर ललन श्रीश्यामसुन्दर महायोद्धा के समान कामदेव की सेना का दमन करने वाले हैं और हे ललना, तुम रसिकतामयी काम-केलि हो ।

(श्रीराधावल्लभीय रस रीति में श्रीश्यामसुन्दर भोक्ता और श्रीप्रिया भोग्य हैं । यहाँ सुन्दर ललन को कामदेव की सेना को दमन करने वाला बतलाकर उनका भोक्ता स्वरूप एवं श्रीराधा को काम की केलि कहकर भोग्य स्वरूपा ध्वनित किया गया है और इस प्रकार दोनों की परस्पर पूरकता सिद्ध की गई है ।) ।।३।।

हे सुन्दरि, वृन्दाकानन में वेणु बज रही है । उसको सुनकर मुक्ति के समान पूर्ण सुख को भी पैरों से ठेल दो । (और चलकर प्रियतम से मिलो ।) ।।४।।

CC-0. Shri Vipin Kumar Col. Deoband. In Public Domain.

Digitized by Madhuban Trust, Delhi

हे युवति, तुम्हारे नाथ श्रीश्यामसुन्दर विरह से व्याकुल हो रहे हैं और तुम्हारा गुणगान कर रहे हैं । तुम उनका दर्शन करके उनकी विरह वेदना को दूर कर दो ॥५॥

सखी भावापन्न श्रीहित हरिवंश कहते हैं कि यह सुनते ही श्रीराधा अपने प्रियतम से मिल गई और दोनों परस्पर कंठों में भुजा डालकर सुख सिन्धु में निमग्न हो गये ॥६॥

[१५]

वृषभानु नन्दिनी राजत हैं ॥१॥

सुरत रङ्ग रस भरी भामिनी,
सकल नारि सिर गाजत हैं ॥२॥

इत - उत चलत, परत दोऊ पग,
मद - गयंद गति लाजत हैं ॥३॥

अधर निरंग, रंग गंडन पर,
कटक काम कौ साजत हैं ॥४॥

उर पर लटक रही लट कारी,
कटिव किंकिनी बाजत हैं ॥५॥

(जै श्री) हित हरिवंश पलटि प्रीतम पट,
जुवति जुगति सब छाजत हैं ॥६॥

भूमिका:—प्रस्तुत पद में सुरतांत छवि से मंडित श्रीराधा की शोभा का वर्णन है,

व्याख्या:—श्रीवृषभानु नन्दिनी सुशोभित हो रही हैं ॥१॥

CC-0. Shri Vipin Kumar Col. Deoband. In Public Domain.

Digitized by Madhuban Trust, Delhi

सुरत के रंग-रस से भरी हुई ये भामिनी सम्पूर्ण स्त्रियों को अपनी शोभा से पराजित करके उल्लसित हो रही हैं ॥२॥

इधर-उधर चलने में ये अपने पदबिन्यास के द्वारा मत्त गयन्द की गति को लज्जित करती हैं ॥३॥

इनके अधर रंग शून्य हैं और कपोल पीक के रंग से रंजित हैं जिनकी अनूठी छबि के द्वारा वे अपने प्रियतम के चित्त में कामदेव के समूह को सजा रही हैं। (उनके मन में काम के मनोरथों को उत्पन्न कर रही हैं।) ॥४॥

उनके वक्षस्थल पर काली लटें लटक रही हैं, एवं कटि में किंकिणी बज रही है ॥५॥

सखी भावापन्न श्रीहित हरिवंश कहते हैं कि उन्होंने इस समय अपने नीलपट के बदले में प्रियतम का पीतपट ओढ़ रखा है। किन्तु इन युवती को सब युक्तियाँ शोभा देती हैं। (इनकी हर प्रकार से शोभा बढ़ती है।) ॥६॥

[१६]

चलो वृषभानु गोप के द्वार।

जन्म लियौ मोहन हित श्यामा,
आनन्द - निधि सुकुमार ॥१॥

गावत जुवति मुदित मिलि मंगल,
उच्च मधुर धुनि - धार ॥२॥

विविध कुसुम कोमल किसलय दल,
सोभित बन्दन बार ॥३॥

CC-0. Shri Vipin Kumar Col. Deoband. In Public Domain.

Digitized by Madhuban Trust, Delhi

विदित वेद - विधि विहित विप्रवर,
करि स्वस्तिनु उच्चार ॥४॥
मृदुल मृदंग मुरज भेरी डफ,
दिवि दुंदुभि रवकार ॥५॥
मागध सूत बन्दी चारन जस,
कहत पुकारि पुकारि ॥६॥
हाटक हीर चीर पाटम्बर,
देत सम्हारि - सम्हारि ॥७॥
चन्दन सकल धेनु - तन मण्डित,
चले जु ग्वाल सिंगारि ॥८॥
(जैश्री) हित हरिवंश दुग्ध-दधि छिरकत,
मध्य हरिद्रा गारि ॥९॥

भूमिकाः—इस पद में श्रीराधा-जन्म के आनंदोल्लास का वर्णन किया गया है । श्रीराधा के प्रति श्रीहिताचार्य का प्रेम पूर्ण पक्षपात इसमें बहुत स्पष्टतया अभिव्यक्त हुआ है । श्रीनंदनंदन की जन्म बधाई में वे नंद के द्वार पर होने वाले आनंद-मंगल की सूचना भर देते हैं और प्रस्तुत पद में वे वृषभान गोप के द्वार पर चलने का आग्रह कर रहे हैं। इसी प्रकार पूर्व पद के अंत में वे केवल इतना कहते हैं कि हलदी मिश्रित दूध-दही के बहने से गढ़े भर गये हैं और इस पद में वे वृषभानु द्वार पर एकत्रित लोगों पर स्वयं दूध-दही छिड़क रहे हैं।

प्रस्तुत पद के रचना-प्रकार को देखकर यह भी सम्भावना होती है कि ब्रज भाषा भक्ति साहित्य में यह श्रीराधा की प्रथम जन्म बधाई है । सूरदासजी ने भी श्रीराधा की बधाईयाँ लिखी हैं और

CC-0. Shri Vipin Kumar Col. Deoband. In Public Domain.

Digitized by Madhuban Trust, Delhi

उन्होंने काव्य रचना भी श्रीहिताचार्य से पूर्व आरम्भ कर दी थी किन्तु वे श्रीहिताचार्य के बाद अनेक वर्षों तक विद्यमान रहे थे। उन्होंने अपनी उत्तरावस्था में श्रीवृन्दावन में श्रीराधा की प्रधानता एवं उससे सम्बन्धित रस रीति स्थापित होते देखी थी। श्रीराधा की एक जन्म बधाई में उन्होंने अपनी इस समसामयिक घटना की ओर संकेत किया है। उक्त बधाई की अंतिम पंक्ति में उन्होंने कहा है कि अब श्रीराधा की बड़ाई मेरे स्वामी नंदनंदन से भी अधिक बढ़ चली है,

आज रावल में बजत बधाई।

धन्य कूख ताही की जिन यह कुंवरि सुलच्छन जाई॥

× × × ×

सूरदास स्वामी तें अधिक ह्वै चली तिहुँ लोक बड़ाई॥

व्याख्या:—वृषभानु गोप के द्वार पर चलो जहाँ सुकुमार आनन्द निधि स्वरूपा श्रीश्यामा ने मोहन के हित के लिए जन्म लिया है ॥१॥

जहाँ मुदित ब्रज युवतियाँ मिलकर उच्च और मधुर ध्वनि में धारा प्रवाह मंगल गान कर रही हैं ॥२॥

जहाँ नाना प्रकार के पुष्प एवं कोमल नवीन पत्तों से बनी हुई बन्दनबार शोभित हो रही है ॥३॥

जहाँ श्रेष्ठ ब्राह्मण गण वेद विधि से अनुमोदित आशीर्वादात्मक मन्त्रों का उच्चारण कर रहे हैं ॥४॥

जहाँ मृदंग, मुरज, भेरी और डफ मृदुल रीति से बज रहे हैं और जहाँ आकाश में दुंदुभी का शब्द हो रहा है ॥५॥

CC-0. Shri Vipin Kumar Col. Deoband. In Public Domain.

जहाँ मागध, सूत, बन्दी और चारण उच्च स्वर से यश-वर्णन कर रहे हैं ।।६।।

जहाँ वृषभानु राय सबको सँभाल-सँभाल कर मुहरें, हीरे और रेशमी वस्त्र प्रदान कर रहे हैं ।।७।।

जहाँ गोपगण सब गायों के शरीर में चन्दन चर्चित करके चले आ रहे हैं ।।८।।

जहाँ श्रीहित हरिवंशचन्द्र दूध-दही में हल्दी डालकर सब लोगों के ऊपर छिड़क रहे हैं ।।९।।

[१७]

तेरौई ध्यान राधिका प्यारी गोवर्द्धन धर लालहिं ।।१।।
कनक लता सी क्यों न विराजत अरुझी श्याम तमालहिं ।।२।।
गौरी गान सुतान ताल गहि रिझवत क्यों न गुपालहिं ।।३।।
यह जोवन कंचन तन ग्वालिन सफल होत इहि कालहिं ।।४।।
मेरे कहे विलंब न करि सखि, भूरि भाग अति भालहिं ।।५।।
(जैश्री)हितहरिवंश उचित हौं चाहत श्याम कंठकी मालहिं ।।६।।

भूमिकाः—यह मान का पद है । श्रीहित सजनी श्रीराधा को सम्बोधन करती हुई कहती हैं:—

व्याख्याः—हे राधिका प्यारी, गोवर्धनलाल को सदा तुम्हारा ही ध्यान रहता है ।

(श्रीश्यामसुन्दर को यहाँ गोवर्धनधर लाल कहकर यह व्यंजित किया गया है कि यद्यपि वे संसार के रक्षण एवं पालन में

Digitized by Madhuban Trust, Delhi

प्रवृत्त रहते हैं तथापि उनका मन अनन्य भाव से तुम में ही आसक्त रहता है।) ॥१॥

इन श्याम तमाल के साथ तुम स्वर्णलता के समान उलझकर क्यों नहीं सुशोभित होतीं ? ॥२॥

तुम तान और ताल के साथ गौरी राग गाकर मदनगोपाल को क्यों नहीं रिझातीं ? ॥३॥

हे भोली प्रिया, श्रीश्यामसुन्दर के साथ मिलने से तुम्हारा यह यौवन और यह कंचन जैसा तन इसी समय सफल हो सकता है ॥४॥

हे सखी, तुम मेरे कहने से विलम्ब न करो। तुम्हारा उच्च ललाट विपुल भाग्य से युक्त है ॥५॥

सखी भावापन्न श्रीहित हरिवंश कहते हैं कि तुम श्यामसुन्दर के कंठ की माला बनो, यह मेरा चाहना अत्यन्त उचित है ॥६॥

(क्योंकि इस प्रकार ही तुम्हारे प्रेम और रूप-सौंदर्य की श्रीवृद्धि होती है।) ॥७॥

[१८]

आरती मदन गोपाल की कीजियै।

देव ऋषि, व्यास, शुकदास सब कहत निज,
क्यों न बिन कष्ट रस-सिंधु कौं पीजियै ॥१॥

अगर करि धूप कुमकुम मलय रंजित,
नव वर्तिका घृत सों पुरि राखौ ॥२॥

CC-0. Shri Vipin Kumar Col. Deoband. In Public Domain.

Digitized by Madhuban Trust, Delhi

कुसुम कृत माल नँदलाल के भाल पर,
तिलक करि प्रगट यश क्यों न भाखौ ।।३।।

भोग प्रभु योग भरि थार धरि कृष्ण पै,
मुदित भुज दण्डवर चमर ढारौ ।।४।।

आचमन पान हित मिलत कर्पूर जल,
सुभग मुख वास, कुल ताप जारौ ।।५।।

शंख दुँदुभि पणव घंट कल वेणु रव,
झल्लरी सहित स्वर सप्त नाँचौ ।।६।।

मनुज तन पाय यह दाय ब्रजराज भज,
सुखद हरिवंश प्रभु क्यों न याँचौ ।।७।।

भूमिकाः—इस पद में श्रीहिताचार्य ने मदन गोपाल की आरती का वर्णन किया है।

व्याख्याः—मदनगोपाल की आरती करनी चाहिये। देवऋषि नारद, वेदव्यास एवं शुकदेवजी जब विश्वास पूर्वक इस बात को कहते हैं तब (मदनगोपाल की आरती करके) बिना श्रम के रस-सिन्धु का पान क्यों नहीं करते? ।।१।।

आरती में अगर की धूप और केशर एवं चन्दन से रंजित घृत में सनी हुई नई बत्ती रखनी चाहिये ।।२।।

नंदलाल को पुष्पमाला धारण कराकर उनके भाल पर तिलक लगाना चाहिये और फिर उनका यशगान करना चाहिये ।।३।।

CC-0. Shri Vipin Kumar Col. Deoband. In Public Domain.

Digitized by Madhuban Trust, Delhi

इसके पश्चात् प्रभु के योग्य भोग-सामग्री थाल भरकर रखनी चाहिये और हर्षित होकर भुजदण्ड से उन पर चँवर ढारना चाहिये ॥४॥

फिर कपूर मिश्रित जल से प्रभु को आचमन पान कराना चाहिये और सुन्दर मुखवास (मुख शुद्धि के लिये सुगन्धित द्रव्य) अर्पित करके अपने संस्कार जनित तापों को नष्ट करना चाहिये ॥५॥

आरती के समय शंख, दुंदुभी, पणव, घंट, वेणु, झल्लरी आदि के द्वारा सप्त स्वरों को ताल पूर्वक (बजाना) चाहिये ॥६॥

श्रीहित हरिवंश कहते हैं कि मनुष्य शरीर की प्राप्ति जैसा अनुपम दाव लगने पर ब्रजराज का भजन करके सुखदाता प्रभु से अविचल सुख की याचना क्यों नहीं करते ? ॥७॥

[१६]

आरति कीजै श्याम सुन्दर की।
नन्द के नन्दन राधिका वर की॥

भक्ति करि दीप प्रेम कर बाती।
साधु सङ्गति करि अनुदिन राती॥१॥

आरती जुवति - यूथ मन भावै।
श्यामलीला (श्री) हरिवंश हित गावै॥२॥

भूमिकाः—यह भी आरती का पद है। इसमें आरती की रचना भाव एवं उसका प्रवोध कराने वाले सत्संग के द्वारा की गई है। श्रीहिताचार्य ने इस प्रकार की आरती के अवसर पर श्रीश्यामा-

CC-0. Shri Vipin Kumar Col. Deoband. In Public Domain.

Digitized by Madhuban Trust, Delhi

श्याम की लीला का गान करने का विधान किया है जो साधु संग से प्रज्वलित की गई प्रेमाभक्तिमयी आरती के साथ स्वाभाविक ही है।

व्याख्या:—नन्दनन्दन राधिका वर की आरती करनी चाहिये। भक्ति के दीपक में प्रेम की बत्ती डालकर उसको प्रतिदिन साधु संग के द्वारा प्रकाशित करना चाहिये ।।१।।

यह आरती युवति यूथ (सखी समूह) के मन को रुचिकर होती है और श्रीहित हरिवंश इस अवसर पर श्रीश्यामाश्याम की लीला का गान करते हैं ।।२।।

[२०]

रहौ कोऊ काहू मनहिं दिये।
मेरे प्राण नाथ श्री श्यामा सपथ करौं तृण छिये ।।

जे अवतार कदम्ब भजत हैं, धरि दृढ़ व्रत जु हिये।
तेऊ उमगि तजत मर्यादा, बन विहार रस पिये ।।

खोये रतन फिरत जे घर-घर कौन काज ऐसे जिये।
(जैश्री) हितहरिवंश अनत सचु नाहीं बिन या रजहिं लिये ।।

भूमिका:—यह वह प्रसिद्ध पद है जिसमें श्रीहिताचार्य ने श्रीराधा चरणों में अपनी अनन्य निष्ठा का उद्घोष किया है। पद की तीसरी-चौथी पंक्तियों में अनेक अवतारों का एक साथ भजन करने वाले मर्यादा-मार्गियों की तुलना में अनन्य भाव से श्रीवृन्दावन के प्रेम-विहार का अनुशीलन करने वालों की श्रेष्ठता प्रतिपादित की गई है। अंत में श्रीराधा चरणों की रति प्राप्त करने के हेतु श्रीवृन्दावन रज का आश्रय लेने को कहा गया है।

CC-0. Shri Vipin Kumar Col. Deoband. In Public Domain.

Digitized by Madhuban Trust, Delhi

व्याख्या:—कोई किसी में भी मन लगाये रहो, मैं तो तृण स्पर्श करके शपथ पूर्वक कहता हूँ कि मेरे प्राणनाथ केवल एक श्रीश्यामा ही हैं ॥१॥

जो लोग दृढ़ व्रत धारण करके अवतारों के समूह को भजते हैं वे भी श्रीवृन्दावन के प्रेम विहार रस का पान करते ही उमंग कर अपनी मर्यादा को त्याग देते हैं ॥२॥

जो रत्न को खोकर घर-घर भीख माँगते फिरते हैं उनके जीने से लाभ ही क्या है ? ॥३॥

श्रीहित हरिवंश कहते हैं कि श्रीवृन्दावन की रज प्राप्ति किये बिना अन्यत्र शान्ति नहीं मिलेगी ॥४॥

[२१]

हरि रसना राधा-राधा रट ।
अति अधीन आतुर यद्दपि पिय कहियत है नागर नट ॥१॥

संभ्रम द्रुम, परिरंभन कुंजन, ढूँढत कालिंदी तट ।
विलपत,हँसत,विषीदत,स्वेदत सतु सींचत अंसुअन वंशीवट ॥२॥

अंग राग, परिधान - वसन, लागत ताते जु पीत पट ।
(जैश्री) हित हरिवंश प्रसंसत श्यामा दै प्यारी कंचन घट ॥३॥

भूमिका:—इस पद में श्रीश्यामसुन्दर के उत्कट विरह का वर्णन है। सूरदासजी, नन्ददासजी आदि रसिक महानुभावों ने सर्वत्र श्रीराधा एवं गोपीजनों के विरह के वर्णन उपस्थित किये हैं। इसके विपरीत श्रीहिताचार्य ने अपनी व्रजभाषा रचनाओं में कहीं भी श्रीराधा के विरह का वर्णन न करके श्रीश्यामसुन्दर के विरह-ताप का ही वर्णन किया है।

CC-0. Shri Vipin Kumar Col. Deoband. In Public Domain.

Digitized by Madhuban Trust, Delhi

व्याख्या:- श्रीहरि की रसना राधा-राधा रट रही है । वे यद्यपि नागर नट कहलाते हैं फिर भी श्रीप्रिया से मिलने के लिये सदैव अधीर और आतुर बनें रहते हैं ।

(नागर नट से तात्पर्य उस चतुर नायक से है जो अनेक नायिकाओं से प्रीति करके भी कहीं बँधता नहीं है ।) ॥१॥

(अब श्रीराधा के विरह में उनकी करुण स्थिति का वर्णन करते हुए कहते हैं) वे श्रीवृन्दावन के वृक्षों को देखकर भ्रम में पड़ जाते हैं, वहाँ की फूली हुई कुंजों को श्रीप्रिया समझकर उनका आलिंगन करते हैं एवं यमुना तट पर श्रीश्यामा को ढूँढ़ते फिरते हैं । वे श्रीराधा के विरह में विलाप करते हैं, हँसते हैं, निराशा से दुखी होते हैं, श्रमजल युक्त बनते हैं, (उनको पसीना आता है) एवं अपने आँसुओं से वंशीबट को सींचते हैं ।

(जो श्यामसुंदर वंशीनाद के द्वारा वंशीबट का सिंचन करते हैं वे ही आज श्रीराधा के विरह में, उसको हरा-भरा रखने के लिये, उसे अपने आँसुओं से सींच रहे हैं ।) ॥२॥

अंगराग और पहनने के वस्त्र (पीतपट आदि) श्रीराधा के विरह में नन्दलाल को अग्नि के समान गरम जान पड़ते हैं । श्रीहित हरिवंश श्रीश्यामा के (उदारता आदि गुणों की) प्रशंसा करते हुये प्रार्थना करते हैं कि हे प्यारी, अपने प्रियतम के विरह ताप की शान्ति के लिये कंचन घट (रस पूर्ण युगल उरोज) प्रदान कीजिये ।

(यहाँ उरोंजों के लिये 'कंचन घट' का प्रयोग साभिप्राय है क्योंकि ताप की शांति जल पूर्ण घट से ही होती है ।) ॥३॥

CC-0. Shri Vipin Kumar Col. Deoband. In Public Domain.

Digitized by Madhuban Trust, Delhi

[२२]

लाल की रूप माधुरी नैनन निरख नेकु सखी।

मनसिज मनहरन हास, साँवरौ सुकुमार रासि,
नख सिख अङ्ग अङ्गन उमँगि सौभग सींव नखी ॥१॥

रँगमगी सिर सुरँग पाग, लटकि रही वाम भाग,
चंप कली कुटिल अलक बीच - बीच रखी।

आयत दृग अरुण लोल, कुण्डल मण्डित कपोल,
अधर दसन दीपति की छबि, क्योंहूँ न जात लखी ॥२॥

अभयद भुज दण्ड मूल, पीन अंस सानुकूल,
कनक निकष लसि दुकूल दामिनी धरखी ॥३॥

उर पर मंदार हार, मुक्ता लर वर सुढार,
मत्त दुरद गति तियन की देह दसा करखी ॥४॥

मुकुलित वय नवकिसोर, बचन रचन चित के चोर,
मधु रितु पिक शाव नूत मंजरी चखी ॥५॥

(जैश्री) नटवत हरिवंश गान, रागिनी कल्यान तान,
सप्त स्वरन कल, इते पर मुरलिका बरखी ॥६॥

भूमिका:—हित चौरासी में श्रीनन्दनंदन की रूप-माधुरी का वर्णन करने वाले कई बड़े सुन्दर पद हैं किन्तु उनमें उनके कुछ ही अंगों का रूप-सौंदर्य वर्णित हुआ है। प्रस्तुत पद में उनके प्रायः सभी अंगों की छबि-छटा का मार्मिक वर्णन है।

CC-0. Shri Vipin Kumar Col. Deoband. In Public Domain.

Digitized by Madhuban Trust, Delhi

काव्य कला की दृष्टि से यह पद सूरदासजी के इस प्रकार के किसी भी पद के समकक्ष रखा जा सकता है। श्रीहिताचार्य की प्रधान रति श्रीराधा चरणों में है और उनकी उपासना सखी भाव की है। इस पद का आरम्भ भी उन्होंने अपनी कृपापात्र सखी को सम्बोधन करके ही किया है और श्रीश्यामसुंदर को उन्होंने इस पद में अपने प्राणनाथ श्रीश्यामा के हृदय सर्वस्व के रूप में ही देखा है।

व्याख्या:—हे सखी, तू अपने नेत्रों से लाल की रूप माधुरी को तनिक देख तो सही। सुकुमारता की राशि श्रीश्यामसुन्दर की मुसकान कामदेव के मन को हरण करने वाली है। उनके नख से शिखा पर्यन्त विभिन्न अंग इतने अधिक सुन्दर हैं कि मानो उन्होंने उमँगकर सुन्दरता की सीमा का उल्लंघन कर दिया है ॥१॥

उनके सिर पर सुन्दर लाल पाग बँधी है जो बाँई ओर (श्रीराधा की ओर) झुकी हुई है और उनकी घुंघराली अलकों के बीच-बीच में चम्पा की कली शोभायमान हैं। उनके बड़े-बड़े नेत्र अरुण और चंचल हैं, उनके कपोल कुंडल से मंडित हैं और उनके अधर एवं दर्शनों की काँति-छटा पर किसी प्रकार भी नेत्र जम नहीं पाते ॥२॥

उनकी भुजायें अभय प्रदान करने वाली हैं और वैसे ही पुष्ट कंधे हैं। उनके श्याम शरीर पर पीताम्बर इस प्रकार सुशोभित है जैसे कसौटी पर स्वर्ण रेखा खिंच रही हो और उसको (पीताम्बर को) देखकर दामिनी दब गई है ॥३॥

उनके वक्षस्थल पर मंदार (स्वर्गीय पुष्प) का हार सुशोभित है और उसके साथ सुडौल मोतियों की माला धारण हो रही है। उनकी मत्त गजराज जैसी चाल देखकर स्त्रियों ने देह दशा विसार दी है ॥४॥

उनकी खिलती हुई नवकिशोर अवस्था है, उनकी वाणी चित्त को चुराने वाली है (जिसको सुनकर ऐसा मालुम होता है)

CC-0. Shri Vipin Kumar Col. Deoband. In Public Domain.

Digitized by Madhuban Trust, Delhi

मानो बसन्त ऋतु में आम की मंजरी को चाखकर कोयल का बच्चा बोल रहा है ॥५॥

श्रीहित हरिवंश कहते हैं कि सुन्दर सप्त स्वरों का आश्रय लेकर वे तानें लेते हुए भाव प्रदर्शन पूर्वक कल्याण रागिनी का गान कर रहे हैं। इतना सब कुछ करते हुए वे वंशी के द्वारा (अमृत-मय) स्वरों की वर्षा भी कर रहे हैं ॥६॥

[२३]

दोऊ जन भींजत अटके बातन ॥१॥
सघन कुंज के द्वारे ठाड़े अम्बर लपटे गातन।
ललिता ललित रूप रस भींजी बूंद बचावत पातन ॥२॥
(जैश्री)हितहरिवंश परस्पर प्रीतम मिलवत रतिरस घातन ॥३॥

भूमिका:—वर्षा विहार का वर्णन करने वाले इस पद में श्रीहिताचार्य ने श्रीश्यामाश्याम की परस्पर निरतिशय आसक्ति का प्रदर्शन बड़े सुंदर ढंग से किया है। साथ ही इन दोनों के प्रति सखियों का अनुपम अनुराग एवं चातुर्य भी इसमें भली भाँति प्रदर्शित हुआ है।

व्याख्या:—दोनों श्रीश्यामाश्याम भीगते हुये बातों में अटक रहे हैं ॥१॥

वे सघन कुंज के द्वार पर खड़े हैं और उनके श्रीअंगों से भीगे हुए वस्त्र लिपट रहे हैं। दोनों के रूप-रस में भीगी हुई ललिताजी उनके ऊपर पत्तों की छाया करके बूंदों को बचा रही हैं ॥२॥

श्रीहित हरिवंश कहते हैं कि एक दूसरे के प्रियतम श्रीश्यामा-श्याम परस्पर शृङ्गार केलि के दाब पेच लगा रहे हैं ॥३॥

CC-0. Shri Vipin Kumar Col. Deoband. In Public Domain.

[२४] दोहा

सबसों हित, निष्काम मति, वृन्दावन विश्राम ।
श्रीराधाबल्लभलाल कौ हृदय ध्यान मुख नाम ॥

भूमिकाः—श्रीहिताचार्य ने फुटकल तेईस छंदों के अतिरिक्त चार दोहे भी रचे हैं जिनमें उन्होंने अपने रसिक अनन्य धर्म के मुख्य सिद्धांतों का उल्लेख किया है ।

व्याख्या:— **सबका हित चिंतन करो और बुद्धि को निष्काम रखो।** (निष्काम बुद्धि के बिना सर्वहित सम्भव नहीं हैं । शत्रु-मित्र की कल्पना सकाम बुद्धि के द्वारा ही होती है । हित के बदले में हित की आकांक्षा भी सकामता है । अतः सर्व स्वार्थशून्य एवं निमित्त रहित हित चिंतन करना चाहिए ।) **श्रीवृन्दावन को अपना विश्राम स्थल समझो ।** (श्रीवृन्दावन श्रीराधा प्रेम की ही एक विशिष्ट एवं अत्यंत रमणीय भूमिका है । इस भूमिका को प्राप्त करके ही रसिक को परम शांति प्राप्त होती है ।) **परमाराध्य श्रीराधाबल्लभलाल का हृदय में ध्यान रखते हुये मुख से उनका नाम उच्चारण करते रहो ।** (श्रीराधाबल्लभ शब्द में द्वन्द समास है । इसका अर्थ है श्रीराधा और बल्लभ किंतु इसके साथ 'लाल' शब्द का प्रयोग करके दोनों को एक बना दिया गया है । श्रीहिताचार्य के सिद्धांत में श्रीश्यामाश्याम की यही स्थिति है । वे दो होते हुये एक हैं और एक होते हुए दो हैं । उनके इसी स्वरूप का ध्यान करने का आदेश यहाँ दिया गया है ।)

[२५] दोहा

तनहिं राखि सतसंग में मनहिं प्रेम रस भेव ।
सुख चाहत हरिवंश हित, कृष्ण कल्प तरु सेव ॥

Digitized by Madhuban Trust, Delhi

व्याख्या:—(पिछले दोहे में परम शांति की प्राप्ति के लिए जिस मार्ग का निर्देश किया गया है उसका अनुसरण रसिकजनों का सतत संग प्राप्त होने पर ही होता है, अतः वे कहते हैं) **तुम अपने शरीर को सदैव सत्संग में लगाये रखो और मन को सदैव प्रेम रस में भिगोये रखो। श्रीहित हरिवंश कहते हैं कि तू यदि सुख चाहता है तो** (सब वांछित फलों के दाता) **श्रीकृष्ण रूपी कल्पतरु का सेवन करता रह।** (स्फुट वाणी के कई छंदों में श्रीहिताचार्य ने श्रीकृष्ण का भजन करने के लिए कहा है। इसको देखकर कुछ लोग शंका में पड़ जाते हैं और पूछते हैं कि उन्होंने श्रीराधा पक्षपाती होकर भी उनका भजन करने का आदेश क्यों नहीं दिया ?

इस सम्बंध में पहली बात यह है कि उक्त छंद सामान्य जन-समूह के लिए कहे गये हैं। श्रीराधा जैसे अत्यंत दुर्लभ एवं रहस्यमय तत्व को प्रारम्भिक उपासना का विषय नहीं बनाया जा सकता। श्रीकृष्ण का भजन एवं उनकी कृपा के द्वारा ही जीव श्रीराधास्वरूप की आराधना का अधिकारी बनता है। इसीलिये उन्होंने अपने संस्कृत ग्रन्थ श्रीराधा सुधा निधि के एक श्लोक में श्रीकृष्ण भजन के फलस्वरूप श्रीराधा की प्रसन्नता माँगी है। (श्लोक सं० ११४) इसके साथ ही उन्होंने अपने उक्त ग्रन्थ में स्थान-स्थान पर अधिकारी उपासकों को एकमात्र श्रीराधा नाम लेने की एवं उनका ही सुदुर्लभ दास्य प्राप्त करने की आज्ञा दी है।

स्फुट वाणी में भी जिन श्रीकृष्ण के नाम लेने को वे आज्ञा दे रहे हैं उनको उन्होंने अत्यंत व्याकुलता पूर्वक श्रीराधा नाम रटते हुए दिखलाया है—हरि रसना राधा-राधा रट।)

[२६] दोहा

निकसि कुंज ठाड़े भये, भुजा परस्पर अंस।
श्रीराधाबल्लभ मुख कमल, निरख नैन हरिवंश॥

CC-0. Shri Vipin Kumar Col. Deoband. In Public Domain.

Digitized by Madhuban Trust, Delhi

व्याख्या:—(प्रथम दोहे में श्रीराधावल्लभलाल का ध्यान करने को कहा गया है। प्रस्तुत दोहे में यह बतलाया गया है कि उनका दर्शन किस प्रकार करना चाहिये। श्रीहिताचार्य कहते हैं कि) श्रीवृन्दावन की कुंज में से निकलकर खड़े हुए एवं परस्पर अंसों पर भुजा रखे हुए श्रीराधावल्लभलाल के (सहज प्रफुल्ल) मुख कमल को मेरे नेत्रों से निरखो। (श्रीहिताचार्य ने श्रीराधावल्लभलाल को विशिष्ट भावमयी दृष्टि से देखा था और उसी के आधार पर उन्होंने अपने सम्प्रदाय का प्रवर्तन किया था। इस दोहे में रसिक उपासकों को वे अपनी उसी विशिष्ट अनुरागमयी दृष्टि का आश्रय लेने का आदेश दे रहे हैं।)

[८३] दोहा

रसना कटौ जु अन रटौं, निरखि अनफुटौ नैंन।
श्रवण फुटौ जो अनसुनौं, श्रीराधा यश बैंन॥

भूमिका:—जीव के मन को चंचल एवं व्यभिचारी बनाने वाली उनकी तीन इन्द्रिया हैं—नेत्र, रसना और कान। श्रीहिताचार्य ने प्रस्तुत दोहे में इन तीनों को श्रीराधा चरणों में अनन्य भाव से लगाने की आज्ञा देकर जीव को निर्भयता प्राप्त कराने की चेष्टा की है।)

व्याख्या:—वे कहते हैं कि वह रसना कट जाओ जो श्रीराधा नाम को निरन्तर नहीं रटती, वह नेत्र फूट जाओ जो उनका दर्शन निरन्तर नहीं करते और वे श्रवण फूट जाओ जो श्रीराधा यश वर्णन करने वाले वचनों को निरन्तर नहीं सुनते।

(उक्त दोहे में 'अन' उपसर्ग का प्रयोग तीन शब्दों के साथ किया गया है। हिन्दी शब्द कोषों में इस उपसर्ग का अर्थ 'बिना'

CC-0. Shri Vipin Kumar Col. Deoband. In Public Domain.

'बगैर' दिया हुआ है और इसके उदाहरण में अनहोनी, अनमेल आदि शब्द दिये गये हैं। स्फुट वाणी की प्रकाशित टीका में 'अन' को 'अन्य' मानकर अर्थ किया गया है। तदनुसार दोहे के तीसरे चरण में 'अनसुनौं' का अर्थ 'अन्य को सुनूँ' समझकर उसके चौथे चरण में 'बिन' शब्द लगा दिया गया है—बिन राधा यश बैन, जबकि अनसुनौं का अर्थ ही 'बिना सुने हैं' अतः दोहे के चौथे चरण का पाठ 'बिन राधा यश बैन' के बजाय 'श्रीराधा यश बैन' है और यही पाठ मानकर यहाँ व्याख्या की गई है।)

Digitized by Madhuban Trust, Delhi

श्रीनागरीदास

[संक्षिप्त परिचय]

श्रीरसिक अनन्य माल में नागरीदासजी को बुन्देलखण्ड के बेरछा (ओड़छा ?) के रहने वाले बतलाया गया है। वे राज-परिवार से सम्बन्धित पवाँर क्षत्रिय थे और उन्होंने सुदृढ़ धार्मिक संस्कार लेकर जन्म लिया था। एक बार उनको श्रीराधावल्लभ सम्प्रदाय के प्रसिद्ध महात्मा एवं वाणीकार श्रीचतुर्भुजदास से मिलने का सुयोग मिला और उसके साथ वे वृन्दावन आकर श्रीहिताचार्य के ज्येष्ठ पुत्र श्रीबनचन्द्र गोस्वामी के शिष्य हो गये। वृन्दावन में कुछ दिन रहने के वाद वे बरसाने चले गये और जीवन के अंत तक वहीं रहे। बरसाने में वे गहवर वन की पहाड़ी पर रहते थे। यह स्थान आजकल मोर कुटी के नाम से प्रसिद्ध है।

एक दिन श्रीराधा ने सखियों सहित इनकी कुटिया में पधार कर इनको आज्ञा दी कि बरसाने में मेरा 'स्थल' निर्माण कराओ और मेरी वर्षगाँठ किया करो। नागरीदास ने अपनी भाभी रानी भागमती के सहयोग से बरसाने में श्रीराधा के मंदिर का निर्माण कराया जो आजकल भानवती के मंदिर के नाम से प्रसिद्ध है और

CC-0. Shri Vipin Kumar Col. Deoband. In Public Domain.

वर्तमान मंदिर के बगल में स्थित है । उसके बाद उन्होंने बड़ी धूम-धाम से श्रीराधा का जन्मोत्सव करना आरम्भ किया जो आज भी मनाया जाता है ।

श्रीनागरीदास के ६३७ दोहे और ३३१ पद प्राप्त हैं । इनका वाणी रचनाकाल सम्वत् १६२० से सम्वत् १६६० तक माना जाता है । श्रीध्रुवदास ने अपनी भक्त नामावली में नागरीदासजी के सम्बन्ध में कहा है,

नेही नागरिदास अति, जानत नेह की रीति ।
दिन दुलराई लाड़िली, लाल रँगीली प्रीति ।।
व्यास नन्द पद कमल सों, जाके दृढ़ विश्वास ।
जिहि प्रताप यह रस कह्यौ, अरु वृन्दावन वास ।।
भली भाँति सेयौ विपिन, तजि बन्धुन सों हेत ।
सूर भजन में एक रस, छाँड़यौ नाहिन खेत ।।
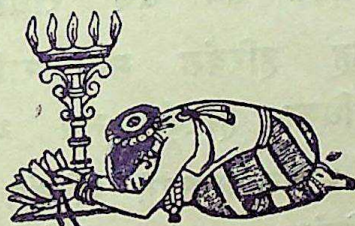
नागरी अष्टक

[व्याख्या सहित]

[१]

रसिक हरिवंश सरवंश श्रीराधिका,
राधिका सरवंश हरिवंश वंशी ॥१॥
हरिवंश गुरु-शिष्य हरिवंश प्रेमावली,
हरिवंश धन धर्म राधा प्रसंसी ॥२॥
राधिका देह हरिवंश मन राधिका,
राधिका हरिवंश मम श्रुतिवतंशी ॥३॥
रसिक जन मननि आभरन हरिवंश हित,
हरिवंश आभरन कल हंस - हंसी ॥४॥

भूमिकाः—नागरीदासजी कृत यह अष्टक सम्प्रदाय के साहित्य में अत्यंत रहस्यमय रचना मानी जाती है । इस अष्टक को

CC-0. Shri Vipin Kumar Col. Deoband. In Public Domain.

Digitized by Madhuban Trust, Delhi

दो टीकायें प्राप्त हैं—एक श्रीहरिलाल व्यास कृत और दूसरी श्रीरतनदास कृत । दोनों ही टीकाओं में और विशेषतः हरिलाल व्यासजी की टीका में मूल का अनुसरण करके इसके रहस्य का उद्घाटन करने की चेष्टा की गई है । किन्तु इस अष्टक में कुछ स्थल ऐसे हैं जिनकी अर्थ-संगति लगाना कठिन है । प्रस्तुत व्याख्या इस दिशा में एक और प्रयास है । इसकी सफलता का निर्णय विज्ञ रसिकजनों को ही करना है ।

नागरीदासजी सम्प्रदाय के प्रारम्भिक काल के उन रसिक महानुभावों में थे जिन्होंने सम्प्रदाय की रस-पद्धति एवं उपासना-प्रणाली का निर्धारण किया था । उनसे पूर्व सेवक वाणी की रचना हो चुकी थी और उसमें उक्त दोनों कार्य संक्षिप्त किन्तु मार्मिक ढंग से किये जा चुके थे । सेवकजी के बाद में रचना करने वाले श्रीनागरीदास और श्रीध्रुवदास ने इन मौलिक सिद्धांतों का पल्लवन अपने प्रत्यक्ष अनुभव के आधार पर बड़ी सूझ-बूझ के साथ किया ।

प्रस्तुत अष्टक में कई स्थलों पर सेवक वाणी में निर्धारित सिद्धांतों का विस्तृत उपस्थापन किया गया है । इसके साथ श्रीहिताचार्य की रचनाओं पर आधारित कई रस एवं उपासना सम्बन्धी नये तथ्यों को प्रकाश में लाया गया है ।

इस अष्टक की एक विशेषता यह है कि इसमें हित-सिद्धांत का अत्यंत सूक्ष्म विवेचन होने के साथ इसके श्रवण-मनन में रसिक उपासकों के हृदय में भजन-रस की भी पूर्ण रूप से निष्पत्ति होती है । इसमें श्रीवृन्दावन का स्वरूप जिस ढंग से कहा गया है उससे श्रीहिताचार्य की भजन रस पद्धति की प्रमुख विशिष्टता स्पष्ट हो जाती है और रसिक उपासक का उपासना मार्ग प्रशस्त बन जाता है ।

व्याख्या:—रसिक शिरोमणि श्रीहरिवंश की सर्वस्व श्रीराधिका हैं और श्रीराधिका के सर्वस्व वंशीस्वरूप श्रीहरिवंश हैं ।

CC-0. Shri Vipin Kumar Col. Deoband. In Public Domain.

Digitized by Madhuban Trust, Delhi

(हित चौरासी में वंशी को 'रसमूल' बतलाया गया है—बाजत रस मूल मुरलिका अनंदिनी। उधर श्रीराधा को 'रसिक रस युवती' अर्थात् रस स्वरूपा रसिक रमणि कहा गया है—जै श्रीहित हरिवंश रसिक रस युवती तू लै मिल सखी प्राण अँकोर। रसिकों का रस ही सर्वस्व होता है अतः रसिक श्रीराधा का रसमूल मुरलिका का सर्वस्व होना स्वाभाविक है ॥१॥

प्रेम स्वरूप श्रीहरिवंश ही गुरु हैं और वही शिष्य हैं (यहाँ प्रेम की एक साथ साधन और साध्यता की ओर संकेत किया गया है। प्रेम मार्ग में प्रेम ही साधन होता है और वही साध्य होता है, गुरु-शिष्य के रूपक से इसी बात को स्पष्ट किया गया है।) **तथा गुरु और शिष्य के बीच में जो प्रेम की अवली अर्थात् शृङ्खला होती है वह भी श्रीहरिवंश हैं। इन हरिवंश का धन** (सम्पत्ति) **श्रीराधिका की प्रशंसा करने वाला** (उनकी प्रधानता रखने वाला) **धर्म है।**

(श्रीसेवकजी ने अपनी वाणी के प्रथम प्रकरण के अंत में श्रीहरिवंश के निज धर्म की स्थिति श्रीराधा के युगल चरणों में बतलाई है—श्रीराधा युग चरण निवास। श्रीनागरीदास यहाँ उसी ओर संकेत कर रहे हैं।) ॥२॥

(अब श्रीहरिवंश और श्रीराधा की परस्पर चरम अन्योन्याश्रितता का द्योतन करते हुए कहते हैं कि) **श्रीराधिका की देह हरिवंश हैं और उस देह में मन श्रीराधिका हैं।** (यहाँ मन से तात्पर्य आत्मा का है। जिस प्रकार शरीर विहीन आत्मा नहीं देखा जाता उसी प्रकार आत्मा विहीन शरीर की भी स्थिति सम्भव नहीं होती। श्रीराधिका एवं श्रीहरिवंश का सम्बन्ध आत्मा और शरीर जैसा है—एक के बिना दूसरा असिद्ध है। तात्पर्य यह है कि श्रीराधिका के आश्रित प्रेम है और प्रेम के आश्रित श्रीराधिका हैं। इसीलिये) **श्रीराधिका और श्रीहरिवंश मिलकर मेरे कर्ण-भूषण हैं।**

CC-0. Shri Vipin Kumar Col. Deoband. In Public Domain.

Digitized by Madhuban Trust, Delhi

(मेरे कानों को इन दोनों का ही यश प्रिय लगता है । ।।३।।

वस्तुतः रसिकजनों के मन का शृङ्गार श्रीहित हरिवंश हैं और श्रीहरिवंश का शृङ्गार सुन्दर हंस-हंसी श्रीश्यामाश्याम हैं ।।४।।

[२]

रसिक हरिवंश रस लाड़िलो लाल बश,
लसत बन अंग इक रंग रंगो ।।१।।

श्रीराधिका बल्लभो वल्लरी प्राण धन,
सुधन निरखत रहौं सुरत रंगो ।।२।।

ललित सखि कुंज सुख पुंज बरषत जुगल,
ललित मन एक तन चारु गौरांगी ।।३।।

रूप लावण्य अनुराग अँग माधुरो,
केलि कल कलित तरलित तरंगी ।।४।।

व्याख्या:— रसिक शिरोमणि श्रीहरिवंश का रस लाड़िली-लाल श्रीश्यामाश्याम के वश में है । (रसिक श्रीहरिवंश की रसानुभूति श्रीश्यामाश्याम के अधीन है । इनको ओजस का अनुभव होता है वह श्रीश्यामाश्याम की रस-केलि के द्वारा ही होता है) और इसी एक रंग में अर्थात् श्रीश्यामाश्याम के ही रस-रंग में इसका (रस रंग का) अंग भूत श्रीवृन्दावन रंगा हुआ सुशोभित है ।।१।।

श्रीराधिकावल्लभ (श्रीश्यामसुंदर) एवं वल्लरी (कनक-लता) श्रीप्रिया मेरे प्राणधन हैं और मेरी यह अभिलाषा है कि सुरत रंग में रँगे हुए इन दोनों को मैं सदा देखता रहूँ ।।२।।

CC-0. Shri Vipin Kumar Col. Deoband. In Public Domain.

Digitized by Madhuban Trust, Delhi

हे सखी सुन्दर शरीर वाले (तन चारु) श्रीश्यामघन एवं गौर अंग वाली श्रीप्रिया का सुन्दर मन एक ही है । (ये दोनों समान रुचि, समान दृष्टि और समान रस वाले हैं ।) ये अद्भुत युगल श्रीवृन्दावन की सुन्दर सघन कुंजों में सुख समूह की वर्षा करते रहते हैं ॥३॥

इनकी (श्रीश्यामाश्याम की) सुन्दर केलि (रस क्रीड़ा) में रूप, लावण्य, अनुराग और अंग माधुर्य की तरल तरंगें उठती रहती हैं ॥४॥

– ३ –

रसिक हरिवंश मन लाड़िलो लाल तन,
ललित अनुराग वपु करन लीने ॥१॥

बाम भुज लाल दक्षिण भुजा लाड़िली,
ललित गति चलत मल्हकत प्रवीने ॥२॥

रसद वृन्दाविपिन मोद मकरंद सद,
माधुरी प्याय पीवत नवीने ॥३॥

जुग - जुगल इक रंग चतुरंग पुलिनस्थली,
जमुन कल कुंज रति रंग भीने ॥४॥

व्याख्या:—श्रीश्यामाश्याम का तन रसिक हरिवंश के मन में रहे हुए अनुराग द्वारा निर्मित हैं, (अर्थात् रसिक हरिवंश के मन में रहा हुआ अनुराग और श्रीश्यामश्याम का तन अभिन्न है,) और वे (श्रीहरिवंश) अपनें इन दोनों सुन्दर अनुराग वपुओं को (शरीरों को) अपनें हाथों में लिये रहते हैं ॥१॥

CC-0. Shri Vipin Kumar Col. Deoband. In Public Domain.

Digitized by Madhuban Trust, Delhi

अपनी वाम भुजा की ओर श्रीलाल को रखकर तथा दक्षिण भुजा की ओर श्रीलाड़िली को रखकर परम प्रवीण श्रीहरिवंश उल्लास युक्त सुन्दर गति से श्रीवृन्दावन की निकुंज वीथियों में विहरण करते रहते हैं। वे अपने अनुराग वपु श्रीयुगल को रसदाता श्रीवृन्दावन के नित्य नवीन आमोद-प्रमोद के मकरंद से पूर्ण माधुरी का पान कराकर स्वयं उसका नित्य नवीन उपभोग करते रहते हैं।।२।।

(इस कवित्त की अंतिम दो पंक्तियों में नागरीदासजी ने 'जुग जुगल' अर्थात् दो युगलों का उल्लेख किया है । इनमें से एक युगल तो प्रसिद्ध एवं सर्वजनोपासित श्रीश्यामाश्याम हैं जिनका भजन प्रेमी उपासकगण अपने विभिन्न भावों के अनुसार करते रहते हैं । दूसरे युगल वे विशिष्ट युगल हैं जो श्रीहित हरिवंशचन्द्र के उपास्य हैं। इस कवित्त की ऊपर की तुकों में श्रीनागरीदासजी ने इन युगल की एक विशेषता यह बताई है कि इनमें वाम ओर श्रीलाल और दक्षिण ओर श्रीलाड़िली रहती हैं। प्रसिद्ध युगल में क्रम इससे उलटा है अर्थात् दक्षिण ओर श्रीलाल और वाम ओर श्रीप्रिया रहती हैं । श्रीहित हरिवंशचन्द्र की उपासना में श्रीराधा का प्राधान्य प्रसिद्ध है और उनके युगल स्वरूप में श्रीलाड़िली का दक्षिण ओर रहना इसी प्रधानता का सूचक है।

श्रीनागरीदास की यह विचार सारिणी सेवकजी के चतुर्थ प्रकरण की—'श्यामश्यामा प्रकट, प्रकट अक्षर निकट' पंक्ति के भाव का अनुसरण करती है । इस पंक्ति में भी दो श्यामश्यामा की बात कही गई है—एक तो वे जो सर्वत्र प्रकट-प्रसिद्ध-हैं और दूसरे वे जो श्रीहरिवंश-वाणी के अक्षरों के निकट प्रकट हैं। दोनों श्रीश्यामाश्याम एक ही हैं केवल प्रधानता का भेद है।

भक्ति वाङ्मय में नागरीदासजी की 'अनुराग वपु' की परि-कल्पना नवीन नहीं है। लगभग एक हजार वर्ष पूर्व रचित श्रीलीला-

CC-0. Shri Vipin Kumar Col. Deoband. In Public Domain.

Digitized by Madhuban Trust, Delhi

शुक के कृष्ण कर्णामृत में हमको इसके दर्शन सर्वथा इसी रूप में होते हैं । उक्त ग्रन्थ के तृतीय आश्वास के अट्ठावनवे श्लोक में श्रीलीला-शुक कहते हैं कि 'मेरे चित्त में चिरकाल से उपासित उस वासना (प्रेमवासना) की जय हो जो मन्दस्मित (मुसकान) से स्नात (नहलाये हुये) अमृतमय अधर वाली है, जो मत्त मयूर-पिच्छ से अंकित है, जो विशाल नैंन कमल वाली है, जो ब्रज गोपिकाओं के भाव से भावित है, जो सुन्दर मुख कमल वाली है और जिसमें से मधुर वेणुनाद द्रवित होता रहता है' ।

स्मितस्नुतसुधाधरा मदशिखण्डि बर्हाङ्किता,
विशालनयनाम्बुजा ब्रजविलासिनी वासिता ।
मनोज्ञ मुखपंकजा मधुर वेणुनादद्रवा,
जयन्ति मम चेतसश्चिर मुपासिता वासनाः ॥

यहाँ वासना का जो रूप बतलाया गया है वह श्रीकृष्ण स्वरूप है और वह श्रीलीलाशुक को वासना द्वारा निर्मित है । इसी को नागरीदासजी 'अनुराग वपु' कहते हैं ।

लीलाशुकजी का यह वासना निर्मित श्रीकृष्ण स्वरूप स्पष्टतः व्यक्तिगत है जबकि श्रीकृष्ण व्यक्तिगत और सर्वगत दोनों हैं। श्रीलीलाशुक की योजना के इस दोष का मार्जन नागरीदास ने दो युगल की स्थापना करके किया है—इनमें एक श्रीहित हरिवंश के व्यक्तिगत युगल हैं और दूसरे सर्वगत युगल हैं । व्यक्तिगत और सर्वगत श्रीकृष्ण वस्तुत एक ही श्रीकृष्ण हैं अतः श्रीनागरीदास ने दोनों युगलों की एकता सिद्ध मानी है ।)

श्रीनागरीदासजी कहते हैं कि दोनों युगल एक ही रंग में रंगे हुये हैं और (उनकी विहार भूमि) **पुलिनस्थली चार अंगों वाली** (चतुरंग) **है ।** (उसमें प्रसिद्ध श्यामाश्याम एवं श्रीहरिवंश के अनुराग-वपु श्रीश्यामाश्याम चारों प्रतिभासित होते रहते हैं और यह चारों की विहार स्थली है) **यह चारों यमुना तट की सुन्दर कुंजों में रतिरंग से भीगे हुए प्रेम विहार करते रहते हैं ।**

CC-0. Shri Vipin Kumar Col. Deoband. In Public Domain.

— ४ —

रसिक हरिवंश मन एक तन चार हौं तो,
बैनु बानी विमल मोल लीनी ।।१।।

बाँह छ-द्वै छाँह करि छ-द्वै पद रज सिर धरि,
अँखियाँ छ-द्वै छकी छवि रहौं अधीनी ।।२।।

अल्प पल ओट सत कल्प बीतत जिनहिं,
दिव्य कैशोर हृद दृष्टि दीनी ।।३।।

नागरी नवरंग निकुंज हित कल्प तरु,
तीर छबि भीर भृंगन नवीनी ।।४।।

व्याख्या:—रसिकवर श्रीहरिवंश का मन एक है और तन चार हैं, यह बात उनकी वाणी से स्पष्ट होती है और मैं (नागरीदास) उस बंशी (नाद) रूप विमल वाणी के हाथों बिका हुआ हूँ ।।१।।

श्रीहरिवंश-कृपा से मेरे सुख की यह स्थिति है कि मेरे ऊपर दोनों युगलों की आठ भुजायें छाया करती हैं, आठ चरण कमलों की रज मैं अपने मस्तक पर धारण करता हूँ और छबि से छके हुये आठ नेत्रों के मैं सदैव अधीन बना रहता हूँ ।।२।।

श्रीहित हरिवंशचन्द्र को श्रीश्यामाश्याम के दर्शनों में एक क्षण का भी अन्तर सैकड़ों कल्पों के अन्तर के समान प्रतीत होता है। उन्होंने अपनी दृष्टि श्रीश्यामाश्याम के अत्यन्त गहन-गम्भीर कैशोर में लगा रखी है।

(श्रीश्यामाश्याम नित्य किशोर हैं और उनकी यह दिव्य किशोरावस्था अत्यन्त गहन-गम्भीर सौंदर्य से पूर्ण है।)

Digitized by Madhuban Trust, Delhi

(हित चौरासी के पद 'कहा कहों इन नैनन की बात' में श्रीश्यामसुन्दर के नेत्रों का वर्णन करते हुये श्रीहिताचार्य ने कहा है कि 'ये नेत्र भ्रमर की भाँति श्रीप्रिया के मुख कमल रस में अटके हुए हैं और अन्य कहीं नहीं जाते । श्रीप्रिया के दर्शनों में एक निमेष का व्यवधान भी इनको सैकड़ों कल्पों के अंतर के समान प्रतीत होता है'। नागरीदासजी ने यहाँ यही बात श्रीहित हरिवंश के नेत्रों के सम्बन्ध में कही है । यह इस मनोवैज्ञानिक आधार पर है कि श्रीहिताचार्य को यदि इस स्थिति का स्वयं अनुभव न होता तो वे श्रीश्यामसुन्दर के नेत्रों के सम्बन्ध में उक्त बात नहीं कह सकते थे ।) ।।३।।

नागरी श्रीप्रिया एवं नवरंग श्रीलाल जिस निकुंज में प्रेम क्रीड़ा करते रहते हैं उसमें हितरूपी (जिसका मूर्तिमान रूप श्रीहित हरिवंश हैं) एक कल्प तरु है जिसके तीर पर नवीन भृङ्गों (रसिकजनों) की छबिमयी भीड़ लगी रहती है ।।४।।

– ५ –

रूप हद लाड़िली, लाल लावण्य हद,
नेह हद हरिवंश, विपिन आसक्ति हद ।।१।।

वै संधि इक वर्ण, ऐन वर्ण बरनत बनै न,
तरुण शैशव विभौ विलसैं सौन्दर्य सद ।।२।।

नैनामृत मंजरी मृदुल अलिराज जुग,
जुगज इक रँग रँगे पुलिन कालिन्द नद ।।३।।

नागरी नव रंग निकुंज हित कल्पतरु,
पत्र - फल - फूल सर्वांग गौरांग पद ।।४।।

CC-0. Shri Vipin Kumar Col. Deoband. In Public Domain.

Digitized by Madhuban Trust, Delhi

व्याख्या:—रूप की हद (सीमा) श्रीप्रिया हैं, लाल लावण्य की हद हैं, श्रीहरिवंश स्नेह की हद हैं और श्रीवृन्दावन आसक्ति (रति) की हद है।

(वात्सल्य से रंजित प्रेम को स्नेह कहते हैं । श्रीहरिवंश श्रीश्यामाश्याम के लालन-पोषण का सुखमय भार सहज रूप से ग्रहण किये हुए हैं, अतः नागरीदासजी ने इन्हें नेह की हद कहा है। श्रीवृन्दावन रति का घनीभूत रूप है । श्रीप्रबोधानंद सरस्वती ने श्रीवृन्दावन को उस रति का सहज रूप माना है जो अत्यन्त शुद्ध और पूर्ण है,

आद्यो भावो यो विशुद्धोति पूर्णो-
स्तद्रूपा सा तादृशोन्मादि सर्वाः ॥
—वृन्दा. शतक १-८६

इसीलिए नागरीदासजी ने विपिन को आसक्ति की हद बतलाया है।) ॥१॥

श्रीश्यामाश्याम की वयः सन्धि अर्थात् किशोरावस्था एक ही प्रकार की है किन्तु यह प्रकार अनिर्वचनीय है। इस किशोरा-वस्था में वे शिशु एवं तरुण अवस्थाओं की संधि के नवीन सौन्दर्य पूर्ण वैभव का उपभोग करते रहते हैं ॥२॥

श्यामाश्याम की युगल दृष्टियों में जो एक ही अमृतमय दृष्टि मञ्जरी फूल रही है, उससे वे दोनों सुकोमल भ्रमर की भाँति आसक्त है (तात्पर्य यह है कि दोनों श्रीश्यामाश्याम अपने नेत्रों में रही हुई एक ही प्रेम दृष्टि का भ्रमर की भाँति आस्वादन करते रहते हैं।) परिणामतः वे दोनों सहज रूप से यमुना पुलिन पर एक ही रंग में रंगे हुये हैं ॥३॥

CC-0. Shri Vipin Kumar Col. Deoband. In Public Domain.

Digitized by Madhuban Trust, Delhi

इस प्रकार (एक रंग में रँगे) नागरी श्रीप्रिया एवं नवरंग श्रीलाल जिस निकुंज में क्रीड़ा करते हैं उसमें जो प्रेम कल्पतरु सहज रूप से विद्यमान है उसके पत्र, फल, फूल यानी सर्वाङ्ग श्रीगौरांग के चरण कमल हैं।

(श्रीहिताचार्य के धर्म में श्रीराधा सर्वस्व हैं, इस बात को नागरीदासजी ने उक्त रूपक के द्वारा बड़ी सुन्दरता के साथ स्पष्ट कर दिया है।) ॥४॥

[६]

युगल रस सिंधु सेवैं पुलिन रस सिंधु कौं,
नलिन हरिवंश आनंद लहरी ॥१॥
ललित वानी विमल वार अरु पार नहिं,
थाह कहुँ नांहि अति निपट गहरी ॥२॥
अनन्य जन मीन आधीन ह्वै अनुसरैं,
प्रेम अंजन दियें दृष्टि ठहरी ॥३॥
नागरी नवरंग निकुंज हित कल्पतरु,
पलक पल ललक परी रूप दहरी ॥४॥

व्याख्या:—युगल रस सिन्धु श्रीश्यामाश्याम यमुना पुलिन रूपी रस-सिंधु का सेवन करते रहते हैं। (पिछले छंद में विपिन को आसक्ति हद बतलाया है। यह वह सहज आसक्ति है जिसका उपभोग श्रीश्यामाश्याम अनादि अनन्त रूप से करते रहते हैं। श्रीवृन्दावन इसी का घनीभूत मूर्तिमान रूप है। श्रीध्रुवदासजी ने अपनी लीलाओं में जहाँ श्रीवृन्दावन का वर्णन किया है वहाँ उसके इसी रूप को संकेतित किया है।

CC-0. Shri Vipin Kumar Col. Deoband. In Public Domain.

Digitized by Madhuban Trust, Delhi

नागरी अष्टक

इस श्रीवृन्दावन में आसक्ति-रस की जहाँ भँवर पड़ती है वह श्रीयमुना पुलिन है । इस प्रकार श्रीयुगल के द्वारा पुलिन रससिंधु का सेवन किये जाने का तात्पर्य यह है कि वे अपनी पारस्परिक आसक्ति का सेवन (उपभोग) करते रहते हैं । सम्प्रदाय में युगल की पारस्परिक रति ही उपास्य है। (प्रेम को प्रेम सखीन को तेहि सुख कै नहिं ओर—ध्रुवदासजी)यमुना पुलिन के सेवन द्वारा रसिक-जनों का सहज रूप से इस आसक्ति से सम्बन्ध हो जाता है ।)

आसक्ति की सीमा इस पुलिन रससिंधु में रसिक शिरोमणि श्रीहरिवंश की श्रीप्रिया चरणों में आसक्ति नलिन (कुमुदिनी) की भाँति खिली हुई है जिससे टकराकर इस रससिंधु में आनंद की लहरें उठती रहती हैं ॥१॥

पुलिन रससिंधु में नलिन रूपी श्रीहरिवंश ने जो आनंद लहरी उठाई है वही उनकी सुन्दर वाणी में प्रत्यक्ष हुई है। वस्तुतः यह ललित वाणी पुलिन रससिंधु में उठने वाली आनन्द लहरी ही है जिसका कोई ओर छोर नहीं है और जो इतनी गहरी है कि उसकी कहीं थाह नहीं मिलती ॥२॥

(अब इस वाणी के अवगाहन का तरीका बतलाते हैं) जब रसिकजन अनन्यगति मीन की भाँति इस वाणी के आश्रित बनकर इसका अनुसरण करते हैं तब वाणी में प्रदर्शित पुलिन-वैभव उनकी दृष्टि में झलकने लगता है और जब इस वाणी की कृपा से उनका प्रेम प्रगाढ़ बनकर अंजन की भाँति उनके नेत्रों का परिमार्जन कर देता है तब उनकी दृष्टि उक्त वैभव के दर्शन में स्थिर हो जाती है ॥३॥

नागरी श्रीप्रिया एवं नवरंग श्रीलाल जिस निकुंज में क्रीड़ा करते हैं उसमें स्थित हितरूपी कल्पतरु की ललक (उत्कट लोभ) प्रतिक्षण रूप-हृद (गहरे सरोवर) में लगी हुई है। (इस प्रेम

CC-0. Shri Vipin Kumar Col. Deoband. In Public Domain.

Digitized by Madhuban Trust, Delhi

कल्पतरु का निरतिशय आकर्षण श्रीश्यामाश्याम के हृद के समान परम गम्भीर एवं अद्‌भुत रूप-सौन्दर्य के प्रति है ।।४।।

[७]

रसिक हरिवंश वर विमल कल कल्पतरु,
प्रेम फल फलित अनुराग बानी ।।१।।
केलि कल कलित अति ललित आमोद बन,
श्रवण पुट पिवत नव रंग रानी ।।२।।
रसिक मंडल विमल झूमका झूम रहे,
श्री राधिका वल्लभ अमान दानी ।।३।।
परम हंस आधार रस सार धारा श्रवत,
भजन एकांत जिन मन समानी ।।४।।

व्याख्याः—ऊपर के दो कवित्तों में जिस हित कल्पतरु का उल्लेख है वह निर्मल श्रेष्ठ एवं सुन्दर कल्पतरु रसिक शिरोमणि श्रीहित हरिवंश ही हैं । श्रीहरिवंश रूपी कल्पतरु जब फूला और फला तो उसमें अनुरागमई वाणी रूपी प्रेम फल फलित हुआ ।।१।।

इस श्रीहरिवंश वाणी में विविध प्रेम केलियों से सुन्दर बना हुआ श्रीवृन्दावन का ललित आमोद-प्रमोद वर्णित है जिसका नव-रङ्ग (श्रीश्यामसुन्दर) और रानी (श्रीप्रिया) अपने कर्णपुटों से पान करते रहते हैं ।।२।।

इस श्रीहरिवंश रूपी विमल कल्पतरु में रसिक-मण्डल रूपी निर्मल झूमका (प्रेममत्त होकर) झूम रहे हैं क्योंकि उनके आराध्य श्रीराधिकावल्लभ अमान (अपरिमित) प्रेम दान करने वाले हैं ।।३।।

CC-0. Shri Vipin Kumar Col. Deoband. In Public Domain.

Digitized by Madhuban Trust, Delhi

इस केलि कल्पतरु की फलरूपा वाणी से रस सार की धारा श्रवित होती है जो कि उन परमहंसों का आधार है जिनके हृदय में एकान्त भजन के प्रति पूर्ण रुचि उत्पन्न हो गई है।

(एकान्त स्थल में बैठकर एकान्त मन से श्रीहरिवंश वाणी का आश्रय लेकर श्रीवृन्दावन एवं इसके सहज वैभव का चिन्तन ही एकान्त भजन है।) ॥४॥

[८]

रसिक रस सरस सर हंस हरिवंश जू,
केलि मुक्ता चुगत मन - नैंन दीने ॥१॥
प्रानन के प्रान सो मेरे प्रान जीवन सुधन,
दृष्टि प्रति दृष्टि आलिंगन नवीने ॥२॥
सकल सुखधाम विश्राम बन विलसि हंसि,
जमुन कल कूल अंग अरगजन भीने ॥३॥
दिव्य अभरन वसन ललित अँग माधुरी,
प्रेम परजंक अंकनि में लीने ॥४॥

व्याख्या:—रसिक रस का जो सरस सर (सरोवर) है उसके श्रीहित हरिवंश हंस हैं और वे इस सर में सहज रूप से उत्पन्न केलि-मुक्ताओं को अपने मन और नेत्रों की सम्पूर्ण वृत्तियाँ लगाकर चुगते रहते हैं।

(हित चौरासी में श्रीश्यामसुन्दर को 'रसिक रस सागर' कहा गया है—यमुना पुलिन रसिक रस सागर रास रच्यौ वन माहीं, और श्रीराधा को 'रसिक रस युवती' कहा गया है—जै श्रीहित

CC-0. Shri Vipin Kumar Col. Deoband. In Public Domain.

Digitized by Madhuban Trust, Delhi

हरिवंश रसिक रस जुवती तू लै मिल सखी प्राण अँकोर । अतः रसिक रस का सरस सरोवर श्रीश्यामाश्याम का केलि-सरोवर है ।) ॥१॥

जिनकी प्रत्येक परस्पर दृष्टि (दर्शन) नवीन आलिंगन के सुख से पूर्ण है (जो परस्पर प्रेममयी दृष्टि के द्वारा सदैव परस्पर नवीन आलिंगनों का सुखोपभोग करते रहते हैं ।) और जो एक दूसरे के प्राणों के प्राण हैं वे रसिक रस की मूर्ति श्रीश्यामाश्याम मेरे प्राण एवं जीवन धन हैं ॥२॥

अरगजा (सुगन्धित द्रव्य) से भीगे हुये ये दोनों सकल सुखों के धाम एवं परम विश्राम स्वरूप श्रीवृन्दावन के रस-वैभव का उपभोग करके अत्यंत प्रसन्न चित्त से श्रीयमुनाजी के सुन्दर तट पर विहार कर रहे हैं ॥३॥

ये दोनों दिव्य वस्त्राभूषण धारण किये हुये हैं और इनकी अंगमाधुरी अत्यंत ललित है । प्रेम पर्यंक स्वरूप एक दूसरे की गोद में ये समाये हुये हैं ॥४॥

CC-0. Shri Vipin Kumar Col. Deoband. In Public Domain.

Digitized by Madhuban Trust, Delhi

कहन नागरीदास की अच्छर अच्छर गूढ़ अति ।
सुहृदी साँचे समझि हैं जे हित पद्धति आरुढ़ मति ।।
(वृन्दावनदासजी)

[३]

हित शरनागत होत भावना भक्ति प्रकाशी ।
बसे सांकरी खोरि भये बाँनैंत उपासी ।।
ब्रजवासिन यौं भजैं जुगल परिकर ब्रज सिगरौ ।
इही भाव दृढ़ होत प्रेम उर परस्यौ अगरौ ।।
गुन गन बानी विचित्र कथि श्रीहरिवंश प्रसाद बल ।
वृषभानु कुँवरि पद सुदृढ़ रति करी नागरीदास भल ।।

[४]

श्रीहरिवंश चरन दृढ़ अटकी मति अरबीली ।
अक्षर रस कौ गहर गूढ़ बानी गरबीली ।।
लाल लड़ैती दरसि चाह जिनि यह व्रत लीनौं ।
त्याग दियौ जल पान कृपानिधि दरसन दीनौं ।।
रच्यौ वरसिगाँठि उत्सव कुँवरि जुगल रहसि पाई लवधि ।
श्रीनागरीदास रस भजन हृद गुरु मारग नेही अवधि ।।
(चाचा वृन्दावनदास कृत रसिक अनन्य परचावली से)

[५]

अंतरंग में मगन रहैं संतत सब जानैं ।
सुनि धेनुक परसंग गिरे भूपर मुरझानैं ।।
बन उठि बरसानैं बसे जहाँ नर हरि संजोग ।
लियौ आपु मुख माँगि कैं प्रगट निशीथी भोग ।।
श्रीवन माली गुरु पाइके व्यास सुवन गुन ही भनैं ।
रसिक नागरीदास की बानी हित निजु रुचि सुनैं ।।
(गोविन्दअलिजी कृत भक्तगाथा से)

CC-0. Shri Vipin Kumar Col. Deoband. In Public Domain.

Digitized by Madhuban Trust, Delhi

हरिवंश रसिक रस जुवती तू लै मिल सखी प्राण अँकोर । अतः रसिक रस का सरस सरोवर श्रीश्यामाश्याम का केलि-सरोवर है।) ॥१॥

जिनकी प्रत्येक परस्पर दृष्टि (दर्शन) नवीन आलिंगन के सुख से पूर्ण है (जो परस्पर प्रेममयी दृष्टि के द्वारा सदैव परस्पर नवीन आलिंगनों का सुखोपभोग करते रहते हैं।) और जो एक दूसरे के प्राणों के प्राण हैं वे रसिक रस की मूर्ति श्रीश्यामाश्याम मेरे प्राण एवं जीवन धन हैं ॥२॥

अरगजा (सुगन्धित द्रव्य) से भीगे हुये ये दोनों सकल सुखों के धाम एवं परम विश्राम स्वरूप श्रीवृन्दावन के रस-वैभव का उपभोग करके अत्यंत प्रसन्न चित्त से श्रीयमुनाजी के सुन्दर तट पर विहार कर रहे हैं ॥३॥

ये दोनों दिव्य वस्त्राभूषण धारण किये हुये हैं और इनकी अंगमाधुरी अत्यंत ललित है । प्रेम पर्यंक स्वरूप एक दूसरे की गोद में ये समाये हुये हैं ॥४॥

CC-0. Shri Vipin Kumar Col. Deoband. In Public Domain.

Digitized by Madhuban Trust, Delhi

कहन नागरीदास की अच्छर अच्छर गूढ़ अति ।
सुहृदी साँचे समझि हैं जे हित पद्धति आरुढ़ मति ॥
(वृन्दावनदासजी)

[३]

हित शरनागत होत भावना भक्ति प्रकाशी ।
बसे सांकरी खोरि भये बाँनैंत उपासी ॥
ब्रजवासिन यौं भजैं जुगल परिकर ब्रज सिगरौ ।
इही भाव दृढ़ होत प्रेम उर परस्यौ अगरौ ॥
गुन गन बानी विचित्र कथि श्रीहरिवंश प्रसाद बल ।
वृषभानु कुँवरि पद सुदृढ़ रति करी नागरीदास भल ॥

[४]

श्रीहरिवंश चरन दृढ़ अटकी मति अरबीली ।
अक्षर रस कौ गहर गूढ़ बानी गरबीली ॥
लाल लड़ैती दरसि चाह जिनि यह व्रत लीनौं ।
त्याग दियौ जल पान कृपानिधि दरसन दीनौं ॥
रच्यौ वरसिगाँठि उत्सव कुँवरि जुगल रहसि पाई लवधि ।
श्रीनागरीदास रस भजन हृद गुरु मारग नेही अवधि ॥
(चाचा वृन्दावनदास कृत रसिक अनन्य परचावली से)

[५]

अंतरंग में मगन रहैं संतत सब जानैं ।
सुनि धेनुक परसंग गिरे भूपर मुरझानैं ॥
बन उठि बरसानैं बसे जहाँ नर हरि संजोग ।
लियौ आपु मुख माँगि कैं प्रगट निशीथी भोग ॥
श्रीवन माली गुरु पाइके व्यास सुवन गुन ही भनैं ।
रसिक नागरीदास की बानी हित निजु रुचि सुनैं ॥
(गोविन्दअलिजी कृत भक्तगाथा से)

CC-0. Shri Vipin Kumar Col. Deoband. In Public Domain.

Digitized by Madhuban Trust, Delhi

श्रीनागरीदासजी का
आत्म परिचय

सुन्दर श्रीबरसानो निवास औ'
बास बसौं श्रीवृन्दावन धाम है।
देवी हमारी श्रीराधिका नागरी औ'
गोत सौं श्रीहरिवंश कौ नाम है॥
देव हमारे श्रीराधिकाबल्लभ,
रसिक अनन्य सभा विश्राम है।
नाम है नागरीदासी अली,
वृषभानुलली की गली कौ गुलाम है॥

श्रीनागरीदासजी के सम्बन्ध में प्राप्त कुछ
परिचयात्मक प्रशस्तियाँ

[१]

नेही नागरिदास अति, जानत नेह की रीति।
दिन दुलराई लाड़िली, लाल रँगीली प्रीति॥
व्यासनन्द पद कमल सों, जाकैं दृढ़ विश्वास।
जेहि प्रताप यह रस कह्यौ, अरु वृन्दावन वास॥
भली भाँति सेयौ विपिन, तजि बन्धुन सों हेत।
सूर भजन में एक रस, छाँड़्यौ नाहिन खेत॥

(ध्रुवदासजी)

[२]

वार न पार अपार कही कथि अकह कहानी।
रसिक नृपति हित हृदय मरम अति ही सुखदानी॥
निपट ललित अति विकट चाल चलिहै को समरथ।
एक नाम हित टेक तिन्है नहीं कठिन सुभग पथ॥

CC-0. Shri Vipin Kumar Col. Deoband. In Public Domain.